योगरत्नाकरः - Uttarārdha - Edited with the commentary रत्नगर्भा in Hindi by कविराज विद्याधर विद्यालंकार. Lahore, 1988 Vikram era.

50

Bill No. 3/07-08

201

2008-03368

श्री

योगरत्नाकरः

उत्तरार्द्धः

(आयुर्वेदस्य सुप्रसिद्धो वैद्यकग्रन्थः)

श्रीयुत विद्याधर विद्यालंकार (स्नातक गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार), वैद्यकविराज (डी. ए. वी. आयुर्वेदिक कालेज लाहौर), आयुर्वेदशास्त्री (कलकत्ता) राजयक्ष्मचिकित्सक तथा जलचिकित्सक, सोलन, विरचित रत्न-

गर्भा नाम भाषा

टीका सहित ।

——:o:——

स चायं

लवपुरीय पञ्जाबसंस्कृतपुस्तकालयाध्यक्षैः

मोतीलाल बनारसीदास

इत्येतैः स्वीये "मुम्बई संस्कृत" इत्याख्ये मुद्रणालये

सम्मुद्र्य प्रकाशितः

[संवत् १९८८]

PUBLISHED BY
MOTI LAL BANARSI DASS,
Proprietors,
The Punjab Sanskrit Book Depot
SAIDMITHA STREET,
LAHORE.

1931

PRINTED BY
DURGA DASS "PRABHAKAR"
Manager,
The Bombay Sanskrit Press,
SAIDMITHA STREET,
LAHORE.

अथ योगरत्नाकरस्योत्तरार्द्धस्य

विषयानुक्रमणिका ।

इति योगरत्नाकरस्योत्तरार्द्धस्य विषयानुक्रमणिका ।

अथ योगरत्नाकरे

उत्तरार्द्धम् ।

अथ शूलनिदानं व्याख्यास्यामः ।

यदुक्तं हारीते—

अनङ्गनाशाय हरस्त्रिशूलं मुमोच कोपान्मकरध्वजश्च ।
तमापतन्तं सहसा निरीक्ष्य भयार्दितो विष्णुतनुं प्रविष्टः ॥१॥

यदुक्तं हारीते—महादेव जी ने कामदेव को नाश करने के लिये क्रोध से अपने त्रिशूल को छोड़ा उस गिरते हुए त्रिशूल को एकदम कामदेव ने जब देखा तब वह भयभीत हो करके विष्णु जी के शरीर में प्रविष्ट हो गया ॥ १ ॥

स विष्णुहुंकारविमोहितात्मा पपात भूमौ प्रथितः स शूलः ।
स पञ्चभूतानुगतं शरीरं प्रचूषयत्यस्य हि पूर्वसृष्टिः ॥ २ ॥

वह त्रिशूल विष्णु के हुंकार से विमोहित हुआ २ भूमि पर गिरा और उसका नाम शूल हुआ । वह शूल पञ्चभूतों से युक्त शरीर को चूसता रहता है । यह इसकी पहिले २ उत्पन्न होने की कथा हुई ॥ २ ॥

शूलरोपणवत्पीडा यस्याकस्मात्प्रजायते ।
त्रिशूलसंभवं चैनं शूलमाहुः पुराविदः ॥ ३ ॥

क्योंकि इस रोग में जिस किसी प्राणी को शूल चुभने की सी पीड़ा अकस्मात् ही हो जाती है और क्योंकि यह त्रिशूल से उत्पन्न हुआ है इस लिये ऐतिहासिक लोग इसको शूल कहते हैं ॥ ३ ॥

शङ्खस्फोटनवत्तस्य यस्मात्तीव्रा च वेदना ।
शूलासक्तस्य भवति तस्माच्छूलमिहोच्यते ॥ ४ ॥

इस रोग में शंख प्रदेश को फोड़ने के समान तीव्र पीड़ा होती है इस लिये इसको शूल रोग कहा जाता है ॥ ४ ॥

अथ तस्य संख्यामाह—**पृथग्दोषैः समस्तामद्वंद्वैः शूलोऽष्टधा भवेत् ।**
सर्वेष्वेतेषु शूलेषु प्रायेण पवनः प्रभुः ॥ १ ॥

वात, पित्त और कफ इनसे पृथक् २ तीन प्रकार का शूल होता है । तथा त्रिदोष से हुआ सान्निपातिक शूल तथा आम शूल तथा द्वन्द्वज अर्थात् वात पित्तज शूल, वात कफज शूल तथा कफ पित्तज शूल इस प्रकार से कुल ८ प्रकार के शूल होते हैं । इन सब शूलों में प्रायः करके वायु प्रधान होती है ॥ १ ॥

वातिकशूलस्य कारणं लक्षणं चाह—

व्यायामयानादतिमैथुनाच्च प्रजागराच्छीतजलातिपानात् ।
कलायमुद्गाढकीकोरदूषादत्यर्थरूक्षाध्यशनाभिघातात् ॥
कषायतिक्तातिविरूढजान्नविरुद्धवल्लूरकशुष्कशाकात् ॥१॥

व्यायाम से, यान पर सवारी करने से, अति मैथुन करने से, रात्रि को अधिक जागने से, शीतल जल के अति पीने से, मटर, मूंग, अरहर, कोदों के अधिक सेवन से, अति रूखे पदार्थों के खाने से, अध्यशन अर्थात् बिना पचे हुए भोजन पर दुबारा खा लाने से, चोट लगने से कसैले, कड़वे, अति अंकुर निकले हुए जो आदि अन्न के खाने से, विरुद्ध भोजन से, धूपादि से सूखे हुए मांस के खाने से सूखे सागों के खाने से ॥ १ ॥

विट्शुक्रमूत्रानिलवेगरोधाच्छोकोपवासादतिहास्यभाष्यात् ।
वायुः प्रवृद्धो जनयेद्धि शूलं हृत्पार्श्वपृष्ठत्रिकबस्तिदेशे ॥२॥

मल, वीर्य, मूत्र और अधो वायु के वेग को रोकने से अथवा शोक, उपवास अति हंसना और अति बोलने से । इन में से किसी एक से कुपित होकर बढ़ा हुआ वायु हृदय, पसलियां, पीठ, त्रिक सन्धि और वस्ति देश में शूल रोग को उत्पन्न कर देता है ॥ २ ॥

जीर्णे प्रदोषे च घनागमे च शीते च कोपं समुपैति गाढम् ।
मुहुर्मुहुश्चोपशमप्रकोपौ विड्वातसंस्तम्भनतोदभेदैः ॥१॥

भोजन के जीर्ण होने पर प्रदोषकाल अर्थात् रात्रि के शुरु में, वर्षा में, शीत में यह वातिक शूल अत्यन्त कुपित होता है और बार २ शान्त होता है और प्रकोप करता है । मल और वात रुक जाते हैं तोद और भेद होता है ॥ १ ॥

संस्वेदनाभ्यञ्जनमर्दनाद्यैः स्निग्धोष्णभोज्यैश्च शमं प्रयाति ॥२॥

स्वेद देने, मालिश करने और मर्दन करने से, चिकने और गरम भोजनों से यह शूल शान्त होता है ॥ २ ॥

अथ पैत्तिकस्य कारणं लक्षणं चाह ।

क्षारातितीक्ष्णोष्णविदाहितैलनिष्पावपिण्याककुलत्थयूषैः ।
कट्वम्लसौवीरसुराविकारैः क्रोधानलायासरविप्रतापैः ॥ १ ॥

खारे पदार्थ, अति तीक्ष्ण, अति गरम, अति विदाही पदार्थ सेवन करने से, तेल, सेम, तिलकुटा, कुलथी के यूष, कटु तथा अम्ल रस के सेवन करने से, कांजी और सुरा के विकारों के सेवन करने से, क्रोध, अग्नि, परिश्रम और धूप के सेवन करने से ॥ १ ॥

ग्राम्यातियोगादशनैर्विदग्धैः पित्तं प्रकुप्याऽऽशु करोति शूलम् ।
तृण्मोहदाहार्तिकरं हि नाभ्यां संस्वेदमूर्च्छाभ्रमशोषयुक्तम् ॥२॥

अति मैथुन करने से और भोजन के विदग्ध होने से पित्त प्रकुपित होकर शीघ्र ही शूल को उत्पन्न कर देता है। इससे प्यास, मोह, दाह और नाभि में पीड़ा होती है और स्वेद आता है। मूर्च्छा, भ्रम, और शोष होता है ॥ २ ॥

मध्यंदिने कुप्यति चार्धरात्रे निदाघकाले जलदात्यये च।
शीते च शीतैः समुपैति शान्ति सुस्वादुशीतैरपि भोजनैश्च ॥१॥

यह पित्तज शूल दुपहर को, आधी रात को, गरमी की मौसम तथा शरद ऋतु में प्रकुपित होता है। और शीतल पदार्थों के सेवन से शान्त होता है और सुस्वादु और शीत भोजनों से भी प्रशान्त होता है ॥ ३ ॥

अथ श्लैष्मिकस्य कारणं लक्षणं चाह—

आनूपवारिजकिलाटपयोविकारैर्मांसेक्षुपिष्टकृशरातिलशष्कुलीभिः।
अन्यैर्बलासजनकैरपि हेतुभिश्च श्लेष्मा प्रकोपमुपगम्य करोति शूलम् ॥

आनूप और जलीय जीवों के मांसरस के सेवन से, दही से फाड़कर बनाया हुआ दूध का छाना और दूध के विकारों से, मांस, ईख, पीठी, खिचड़ी, तिल की पीठी से बने हुए पदार्थों से तथा अन्य कफ जनक कारणों से श्लेष्मा प्रकुपित होकर शूल करता है ॥ १ ॥

हृल्लासकासमदनारुचिसंप्रसेकैरामाशये स्तिमितकोष्ठशिरोगुरुत्वैः।
भुक्ते सदैव हि रुजं कुरुतेऽतिमात्रं सूर्योदयेऽथ शिशिरे कुसुमागमे च ॥

इससे हृल्लास, खांसी, अवसाद, अरुचि, थूक अधिक आना, आमाशय का भीगा हुआ सा रहना, कोष्ठ और सिर का भारी रहना। और भोजन करने के बाद ही अधिक पीड़ा का होना तथा सूर्योदय के समय शिशिर और वसन्त के समय में इस कफज शूल का प्रकोप होता है ॥ ३ ॥

अथ सांनिपातिकमाह—

सर्वेषु दोषेषु च सर्वलिङ्गं विद्याद्भिषक् सर्वभवं हि शूलम्।
सुकष्टमेनं विषवज्रतुल्यं विवर्जनीयं प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ॥ १ ॥

तीनों दोषों के प्रकुपित होने पर सभी लक्षण प्रकाशित होते हैं जिसे सान्निपातिक शूल कहते हैं। यह शूल विष और वज्र के समान अत्यन्त कष्ट साध्य है इस लिये वैद्य इसकी चिकित्सा न करे ॥ १ ॥

अथाऽऽमजमाह—

आटोपहृल्लासवमीगुरुत्वस्तैमित्यकानाहकफप्रसेकैः।
कफस्य लिङ्गेन समानलिङ्गमामोद्भवं शूलमुदाहरन्ति ॥१॥

जिस शूल में पेट गुड गुड़ाये, हृल्लास हो, वमन हो, शरीर भारी हो और भीगा हुआ सा मालूम पड़े, आनाह हो और मुंह से कफ वाला थूक अधिक निकले और सारे लक्षण कफज शूल के समान ही हों तो ऐसे शूल को आमज

शूल कहते हैं ॥ १ ॥

अथ द्विदोषजमाह—**द्विदोषलक्षणैरेतैर्विद्याच्छूलं द्विदोषजम् ।**

बस्तौ हृत्कण्ठपार्श्वेषु स शूलः कफवातिकः ॥१॥

जब दो दो दोषों के लक्षण मिलते हों तो उसको द्विदोषज शूल कहते हैं । वस्ति में शूल हो, हृदय, कंठ और पसलियों में शूल हो इसे कफवातिक शूल कहते हैं ॥ १ ॥

कुक्षौ हृन्नाभिमध्ये यः स शूलः कफपैत्तिकः ।

दाहज्वरकरो घोरो विज्ञेयो वातपैत्तिकः ॥ २ ॥

जब पेट, हृदय, नाभि के मध्य में शूल हो इसे कफ पैत्तिक शूल कहते हैं । जिसमें दाह, ज्वर अत्यधिक हो उसे वात पैत्तिक शूल कहते हैं ॥ २ ॥

अथ तन्त्रान्तरे—

वातात्मकं बस्तिगतं वदन्ति पित्तात्मकं चापि वदन्ति नाभ्याम् ।

हृत्पार्श्वकुक्षौ कफसंनिविष्टं सर्वेषु देशेषु च संनिपातात् ॥ १ ॥

वातात्मक शूल वस्ति में होता है । पित्तात्मक शूल नाभि में होता है । हृदय, पसली और पेट में कफ का शूल होता है और सब स्थानों में सन्निपात का शूल होता है ॥ १ ॥

अथ साध्यासाध्यत्वमाह—

एकदोषोत्थितः साध्यः कृच्छ्रसाध्यो द्विदोषजः ।

सर्वदोषोत्थितो घोरस्त्वसाध्यो भूर्युपद्रवः ॥ १ ॥

एक दोषज शूल साध्य है । द्विदोषज शूल कृच्छ्र साध्य है और सान्निपातिक उपद्रवों से युक्त शूल असाध्य है ॥ १ ॥

अथ उपद्रवानाह—**वेदनातितृषा मूर्च्छा ह्यानाहो गौरवारुची ।**

भ्रमो ज्वरः कृशत्वं च बलहानिस्तथैव च ॥

कासः श्वासश्च हिक्का च शूलस्योपद्रवाः स्मृताः ॥१॥

पीड़ा होना, अति प्यास लगना, मूर्च्छा होना, आनाह, गुरुता, अरुचि, भ्रम, ज्वर और कृश होना तथा बल की हानि हो और खांसी, श्वास, हिचकी हों । ये सब शूल के उपद्रव कहे हैं ॥ १ ॥ इति शूलनिदानम् ॥

अथ सामान्यतः शूलचिकित्सा ।

वमनं लङ्घनं स्वेदः पाचनं फलवर्तयः ।

क्षारश्चूर्णश्च गुटिकाः शस्यन्ते शूलशान्तये ॥ १ ॥

शूल की शान्ति के लिये वमन, लंघन, स्वेद, पाचन, फल वर्तियें, क्षार चूर्ण और क्षार की गोलियें उत्तम कार्य करती हैं ॥ १ ॥

अथ वातशूलचिकित्सामाह ।

ज्ञात्वा तु वातजं शूलं स्नेहस्वेदैरुपाचरेत् ।

पायसैः कृशरापिण्डैः स्निग्धैर्वा पिशितोत्कटैः ॥ १ ॥

वातज शूल को स्नेह और स्वेद देकर चिकित्सा करे । और खीर खिलाने से और कृशरा अर्थात् तिलौदन या दाल चावल की बनी खिचड़ी खिलाने से और स्निग्ध मांस रसादि पिलाने से वातज शूल में लाभ होता है ॥ १ ॥

आशुकारी हि पवनस्तस्मात्तं त्वरया जयेत् ।
तस्य शूलाभिपन्नस्य स्वेद एव सुखावहः ॥ २ ॥

वायु शीघ्रकारी होता है इस लिये उसे शीघ्रता से ही जीतना चाहिये । वातिक शूल में स्वेद देना बहुत सुखदायक है ॥ २ ॥

अथ तिलकल्कस्वेदः—**तुषवारिविनिष्पिष्टतिलकल्कोष्णपोटली ।**
भ्रामिता जठरस्योर्ध्वं मुहुः शूलं विनाशयेत् ॥१॥

कांजी में पीसे हुए तिलों की कल्क को पोटली में बांधकर अग्नि पर गरम करके पेट पर बार २ घुमाने से वातिक शूल शान्त होती है ॥ १ ॥

अथ लेपसकौ—**नाभिलेपाज्जयेच्छूलं मदनं काञ्जिकान्वितम् ।**
बिल्वैरण्डतिलैर्वाऽपि पिष्टैरम्लेन पोटली ॥ १ ॥

मैनफल कांजी में पीसकर नाभि पर लेप करने से वातिक शूल की शान्ति होती है । अथवा बिल, एरण्ड की जड़ और तिल इनको समभाग लेकर कांजी से पीसकर पेट पर फेरने से वातिक शूल शान्त होता है ॥ १ ॥

अथ कुलत्थादियूषः—

वातात्मकं हन्त्यचिरेण शूलं स्नेहेन युक्तस्तु कुलत्थयूषः ।
ससैन्धवो व्योषयुतः सलवः सहिङ्गुसौवर्चलदाडिमाढ्यः ॥१॥

कुलथी का क्वाथ घी मिलाकर तथा सेंधानमक, सोंठ, मिरच, पीपल, लौंग, हींग, सौंचलनमक और अनारदाना मिलाकर पिलाने से वातिक शूल शीघ्र दूर होता है ॥ १ ॥

अथ बलादिक्वाथः—**बलापुनर्नवैरण्डबृहतीद्वयगोक्षुरैः ।**
क्वाथः सहिङ्गुलवणः पीतो वातरुजं जयेत् ॥१॥

खिरेंटी, पुनर्नवा, एरण्ड की जड़, बड़ी कटेली, छोटी कटेली, गोखरू इन को सम भाग लेकर क्वाथ करे और उस में हींग और सेंधा नमक मिलाकर पीने से वातिक शूल शान्त होता है ॥ १ ॥

अथ शार्ङ्गधरान्नागरादिः—**नागरैरण्डयोः क्वाथः क्वाथ इन्द्रयवस्य वा ।**
हिङ्गुसौवर्चलोपेतो वातशूलनिवारणः ॥ १ ॥

सोंठ, एरण्ड की जड़ इन दोनों को सम भाग लेकर क्वाथ करे । इस क्वाथ मे हींग और सौंचल नमक डालकर पीने से वातिक शूल नष्ट होता है । अथवा इन्द्र जौ के क्वाथ में हींग और सौंचल नमक मिलाकर पीने से भी वातिक शूल

नष्ट होता है ॥ १ ॥

अथ करञ्जादिचूर्णम्—

करञ्जसौवर्चलनागराणां सरामठानां समभागिकानाम्।
चूर्णं कदुष्णेन जलेन पीतं समीरशूलं विनिहन्ति सद्यः ॥ १ ॥

करञ्ज, सौंचल नमक, सोंठ, हींग इन में से प्रत्येक द्रव्य सम भाग लेकर चूर्ण करे। इस चूर्ण को कोसे जल से पीने से वातिक शूल तुरन्त नष्ट होता है ॥ १ ॥

अथ राजिकादिलेपः—राजिकाशिग्रुकल्कं च गोतक्रेण च पेषितम्।
तेन लेपेन हन्त्याशु शूलं वातसमुद्भवम् ॥ १ ॥

राई और सुहांजने की छाल का कल्क इन दोनों को गौ की छाछ से पीसकर लेप करने से वातिक शूल शीघ्र नष्ट होता है ॥ १ ॥

अथ हिङ्ग्वादिलेपः—हिङ्गु तैलं सलवणं गोमूत्रेण विपाचितम्।
नाभिस्थाने प्रदातव्यं यस्य शूलं सवेदनम् ॥ १ ॥

हींग, तेल, सेंधानमक और गोमूत्र इन सब को मिलाकर गरम कर के नाभि के स्थान पर लेप करने से वातिक शूल नष्ट होता है ॥ १ ॥

अथ शूले साटोपे—तैलमेरण्डजं वाऽपि दशमूलस्य वारिणा।
पीतं निहन्ति साटोपं हिङ्गुसौवर्चलान्वितम् ॥ १ ॥

एरण्ड का तेल दश थूल के क्वाथ के साथ मिलाकर हींग और सौंचलनमक बीच में डालकर पिलाने से गुड़गुड़ाहट सहित वातिक शूल नष्ट होता है ॥ १ ॥

इति वात शूल चिकित्सा।

अथ पित्तशूलचिकित्सामाह।

वामयेत्पित्तशूलार्तं पटोलेक्षुरसादिभिः।
पश्चाद्विरेचयेत्सम्यक्पित्तगुल्मविरेचनैः ॥ १ ॥

पहिले परवल और गन्ने के रस आदि से पित्त शूल वाले को वमन करावे फिर पित्त गुल्म में कहे हुये विरेचन के योगों से पित्त शूलवाले को विरेचन करावे ॥ १ ॥

अथ शतावर्यादिकाथः—शतावरी सयष्ट्याह्वा वाट्यालकुशगोक्षुरैः।
शृतशीतं पिबेत्तोयं सगुडक्षौद्रशर्करम्।
पित्तशूलास्रदाहघ्नं हिक्काज्वरवमिच्छिदम् ॥ १ ॥

शतावर, मुलहठी, बला, कुशामूल, गोखरू इन को समभाग लेकर क्वाथ कर के ठण्डा होने पर गुड़ शहद और खाण्ड से मिलाकर पिलावे तो पित्तशूल, रक्तस्राव, दाह, हिचकी ज्वर और वमन नाश होती ॥ १ ॥

अथ बृहत्यादिकाथः—बृहतीगोक्षुरैरण्डकुशकाशेक्षुवालिकाः।
पीताः पित्तभवं शूलं सद्यो हन्युः सुदारुणम् ॥ १ ॥

बड़ी कटेली, गोखरू, एरण्ड की जड़, कुशा की जड़, कास की जड़, ईख की जड़, सुगन्धबाला इन सब को समभाग लेकर क्राथ कर के पीने से शीघ्र ही भयंकर पित्तशूल आरोग्य होता है ॥ १ ॥

अथ त्रिफलारग्वधादि:—त्रिफलारग्वधक्काथः शर्कराक्षौद्रसंयुतः।
रक्तपित्तहरो दाहपित्तशूलनिवारणः ॥१॥

हरड़, बहेड़ा, आंवला और अमलतास इन सब को समभाग लेकर क्राथ कर के खाण्ड और शहद मिलाकर पिलाने से रक्तपित्त नष्ट होता है। दाह, तथा पित्तशूल दूर होता है ॥ १ ॥

अथ त्रिफलादि:—त्रिफलारिष्टयष्ट्याह्वकटुकारग्वधैः शृतम्।
पाययेन्मधुसंमिश्रं दाहशूलोपशान्तये ॥ १ ॥

हरड़, बहेड़ा, आंवला, नीम की छाल, मुलहठी, कुटकी और अमलतास का गूदा इन से पकाया हुआ क्राथ शीतल कर शहद मिलाकर पिलाने से दाह और शूल शान्त होता है ॥ १ ॥

अथ शतावरीस्वरसः वृन्दात्—शतावरीरसं क्षौद्रयुक्तं प्रातः पिबेन्नरः।
दाहशूलोपशान्त्यर्थं सर्वपित्तामयापहम् ॥१॥

शतावरी को कूटकर निकाला हुआ स्वरस शहद में मिलाकर प्रातःकाल पीने से दाह और शूल शान्त होता है तथा सब पित्त के रोग शान्त होते हैं ॥ १ ॥

अथ धात्र्यादियोगः—धात्र्या रसं विदार्या वा त्रायन्तीगोस्तनाम्बुना।
पिबेत्सशर्करं सद्यः पित्तशूलनिवारणम् ॥ १ ॥

आंवले का स्वरस अथवा विदारी कन्द का स्वरस, त्रायमान और दाख के क्राथ से मिलाकर खांड डालकर पिलाने से शीघ्र ही पित्तशूल शान्त होता है ॥१॥

अथ धात्रीचूर्णादि—प्रलिह्यात्पित्तशूलघ्नं धात्रीचूर्णं समाक्षिकम्।
सगुडां घृतसंमिश्रां भक्षयेद्वा हरीतकीम् ॥ १ ॥

आंवले का चूर्ण शहद मिलाकर चटावें तो पित्तशूल नष्ट होता है। अथवा हरड़ का चूर्ण गुड और घी से मिलाकर खाने से पित्तशूल नष्ट होता है ॥१॥

अथ गुडादियोगः—गुडशालियवक्षीरं सर्पिर्दुग्धं विरेचनम्।
जाङ्गलानि च मांसानि भेषजं पित्तशूलिनः ॥ १ ॥

गुड, शालि धान्य और जो, दूध की खीर इसको पिलाने से अथवा दूध में घी डालकर पिलाने से, विरेचन देने से, जांगल जीवों का मांसरस देने से पित्तशूल शान्त होता है ॥ १० ॥ इति पित्तशूल चिकित्सा।

अथ कफशूलचिकित्सामाह।

शाल्यन्नं जाङ्गलं मांसमरिष्टं कटुकं रसम्।
मद्यानि जीर्णगोधूमं कफशूले प्रयोजयेत् ॥ १ ॥

शालिधान, जांगल जीवों का मांसरस, नीम, चरपरे रस, मद्य, पुराने गेहूं ये सब पदार्थ कफशूल में लाभ देते हैं ॥ १ ॥

अथ त्रिलवणादिचूर्णम्—लवणत्रयसंयुक्तं पञ्चकोलं सरामठम्।
सुखोष्णेनाम्भसा पीतं कफशूलहरं परम् ॥ १ ॥

सेंधानमक, सोंचलनमक, विडलवण, पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चीता, सोंठ और हींग इनको समभाग लेकर और चूर्ण कर कोसे पानी से पीने से कफ शूल नष्ट होता है ॥ १ ॥ इति श्लेष्म शूल चिकित्सा।

अथ त्रिदोषशूलचिकित्सामाह।

अथ शङ्खचूर्णयोगः—शङ्खचूर्णं सलवणं सहिङ्गु व्योषसंयुतम्।
उष्णोदकेन तत्पीतं हन्ति शूलं त्रिदोषजम् ॥ १ ॥

शंखभस्म, सेंधानमक, हींग, सोंठ, मिरच, पीपल इन सबको समभाग लेकर चूर्ण करके गरम जल से पीवें तो त्रिदोषज शूल नष्ट होता है ॥ १ ॥

अथ मण्डूरावलेहः—गोमूत्रसिद्धमण्डूरं त्रिफलाचूर्णसंयुतम्।
विलिहन्मधुसर्पिर्भ्यां शूलं हन्ति त्रिदोषजम् ॥२॥

गोमूत्र से बनाया हुवा मण्डूर भस्म, हरड़, बहेड़े और आंवले से युक्त कर के घी और शहद के साथ चाटें तो त्रिदोषज शूल नष्ट होता है ॥ १ ॥ इति त्रिदोषजशूलः।

अथाऽऽमशूलचिकित्सामाह।

आमशूले क्रिया कार्या कफशूलविनाशिनी।
शेषमामहरं सर्वं यद्यदग्निविवर्धनम् ॥ १ ॥

आमजशूल में कफ शूल को नष्ट करने वाली सब क्रियायें करनी चाहियें तथा अन्य सब पथ्य आदि भी आम नाशक तथा अग्नि को बढ़ाने वाला सेवन करना चाहिये ॥ १ ॥

अथ चित्रकादिक्वाथः—चित्रकग्रन्थिकैरण्डशुण्ठीधान्यजलैः श्रृतम्।
सहिङ्गुसैन्धवबिडमामशूलहरं परम् ॥ १ ॥

चीतामूल, पिप्पलामूल, एरण्डमूल, सोंठ, धनियां और सुगन्धवाला इनका क्काथ करके हींग, सेंधानमक और विड नमक मिलाकर पिलाने से आम शूल नष्ट होता है ॥ १ ॥

अथैरण्डादिक्काथः—

एरण्डबिल्वबृहतीद्वयमातुलुङ्गपाषाणभित्त्रिकटुमूलकृतः कषायः।
सक्षारहिङ्गुलवणोरुबुतैलमिश्रः श्रोण्यंसपृष्ठहृदयस्तनरुचु पेयः ॥१॥

एरण्ड की जड़, बिल की छाल, छोटी कटेली, बड़ी कटेली, बिजौरा नींबू, पाषाणभेद, सोंठ, मिरच, पीपल सब को समभाग लेकर क्वाथ करे। इसमें

यवक्षार, हींग, सेंधानमक और एरण्ड का तेल मिलाकर पीवें तो श्रोणी, कन्धे, पीठ, हृदय, और स्तन की पीड़ा दूर होती है ॥ १ ॥

अथैरण्डतैलादियोग—एरण्डतैलं षड्भागं लशुनस्य तथाऽष्टकम्।
एकं हिङ्गु त्रिसिन्धूत्थं सर्वमेकत्र मर्दयेत्।
त्रिनिष्कं भक्षयेच्चानु ह्यामशूलप्रशान्तये ॥ १ ॥

एरण्ड का तेल ६ भाग, लहसुन ८ भाग, हींग १ भाग, सेंधानमक ३ भाग सब को मिलाकर पीस लेवे। इसे ३ निष्क भर खाने सें आमशूल नष्ट होत है॥१॥

हिङ्गुत्रिगुणसैन्धवं तस्मात्त्रिगुणतैलमैरण्डम्।
तत्त्रिगुणरसोनरसं गुल्मोदावर्तशूलघ्नम् ॥ २ ॥

हींग १ भाग, सेंधानमक ३ भाग और एरण्ड का तेल ९ भाग और २७ भाग लहसुन का रस सबको मिलाकर एकत्र करें। इसको पीने से गुल्म और उदावर्त का शूल नष्ट होता है। इति आमशूल चिकित्सा।

अथ द्वन्द्वजशूलचिकित्सा।

कण्टकार्यादिक्वाथः—निदिग्धिका बृहत्यौ च कुशकाशेक्षुवालकाः।
श्वदंष्ट्रैरण्डमूलं च वारिणा सह पाचयेत्।
पिबेत्सशर्करक्षौद्रं शूले पित्तानिलात्मके ॥ १ ॥

छोटी कटेली दो भाग लें, बड़ी कटेली, कुशा की जड़, कांस की जड़, तालम खाने की जड़, गोखरू और एरण्ड की जड़ इन सबको एक २ भाग लेकर क्वाथ बनावें। इस क्वाथ को खांड और शहद मिलाकर पीने से पित्तज शूल नष्ट होता है ॥ १॥

अथ पटोलादि:—पटोलत्रिफलारिष्टामृतं क्षौद्रयुतं पिबेत्।
पित्तश्लेष्मज्वरच्छर्दिदाहशूलोपशान्तये ॥ १ ॥

पटोलपत्र, हरड़, बहेड़ा, आंवला, नीम, गिलोय इनको समभाग लेकर क्वाथ करके शहद डालकर पीवे तो पित्त श्लेष्मज शूल, वमन, ज्वर, दाह और शूल शान्त होते हैं ॥ १ ॥

अथ द्राक्षादिक्वाथः—द्राक्षाटरूषयोः क्वाथः श्लेष्मपित्तरुजं जयेत्।
पित्तश्लेष्मोद्भवं शूलं विरेकवमनैर्जयेत् ॥ १ ॥

दाख और बांसे की जड़ का क्वाथ श्लेष्म पित्त के शूल को नष्ट करता है। और पित्त श्लेष्म के शूल को जीतने के लिये विरेचन और वमन देने से लाभ होता है ॥ १ ॥

अथ क्षाराम्बुयोगः—क्षारोदकं पिबेदुष्णं पिप्पलीलवणान्वितम्।
वातश्लेष्मोद्भवं शूलं कुक्षिशूलं च नाशयेत् ॥ १ ॥

यवक्षारादि क्षारों का जल गरम करके पीपल और सेंधानमक मिलाकर पीनेसे वात

श्लेष्मज शूल और कुक्षि शूल नष्ट होता है ॥१॥ इति द्वन्द्वज शूल चिकित्सा।

अथ शूले साधारणविधिः।

अथ त्रिफलादिविरेचनम्—त्रिफलाकाथगोमूत्रक्षौद्रक्षीररसैः पृथक्।
एरण्डतैलाद्द्विगुणैर्हितं शूले विरेचनम् ॥ १ ॥

त्रिफले का क्वाथ दो भाग, एरण्ड का तेल १ भाग मिलाकर देवें। अथवा गोमूत्र दो भाग, एरण्ड का तेल १ भाग मिलाकर देवें। अथवा शहद २ भाग, एरण्ड का तेल १ भाग मिलाकर देवें। अथवा दूध २ भाग, एरण्ड का तेल १ भाग मिलाकर दें। अथवा मांस का रस २ भाग और एरण्ड का तेल १ भाग मिलाकर दें। इन में से कोई एक योग देने से शूल रोग में विरेचन होकर रोग नष्ट होता है ॥ १ ॥

अथ बीजपूरादिस्वरसः—बीजपूररसः पानान्मधुक्षारयुतो जयेत्।
पार्श्वहृद्बस्तिशूलानि कोष्ठवायुं च दारुणम् ॥१॥

बिजौरे नीबू का स्वरस शहद और यवक्षार डालकर पीने से पसलियों का दर्द, हृदय का दर्द और वस्ति का दर्द नष्ट होता है। यह पेट की भयंकर वायु को भी निकालता है ॥ १ ॥

अथ पथ्यादिक्वाथः—पथ्यासशक्रयवपुष्करमूलयुक्तां
निष्काथ्य हिङ्गुजटिलातिविषासमेताम्।
पीत्वा सुखोष्णमथ वातकृतं सशूल-
मामोद्भवं कफकृतं च निहन्ति तूर्णम् ॥ १ ॥

इन्द्रजौ, हरड़, पोहकर मूल इन सबको समभाग लेकर क्वाथ करे। इसमें हींग, पिप्पली और अतीस का चूर्ण मिलाकर कोसा २ पीवे तो वातशूल, आम शूल और कफशूल शीघ्र ही नष्ट होता है ॥ १ ॥

अथ मातुलुङ्गादिः—मातुलुङ्गरसो वाऽपि शिग्रुक्वाथस्तथा परः।
सक्षारो मधुना पीतः पार्श्वहृद्बस्तिशूलहा ॥ १ ॥

बिजौरे नीबू (इसे पञ्जाबी में किम्ब कहते हैं) का रस, यवक्षार और शहद से मिलाकर पीवें अथवा सुहांजने की छाल का क्वाथ यवक्षार और शहद मिलाकर पीवें तो पसलियों का शूल, हृदय का शूल और बस्ति का शूल नष्ट होता है ॥ १ ॥

अन्यच—मातुलुङ्गरसे सर्पिः सहिङ्गु लवणान्वितम्।
सुखोष्णं पाययेत्तद्धि विड्विबन्धानुलोमनम् ॥
कुक्षिहृत्पार्श्वशूलेषु वेदना चोपशाम्यति ॥ १ ॥

अन्यच्च—बिजौरे के नीबू के रस में गौ का घी, हींग और नमक डालकर कुछ गरम करके पिलाने से कबज दूर होती है, वायु अनुलोम होती है। पेट,

हृदय और पसलियों का शूल शान्त होता है ॥ १ ॥

अथ बिल्वमूलादिः—बिल्वमूलमथैरण्डं चित्रकं विश्वभेषजम्।
हिङ्गुसैन्धवसंयुक्तं सद्यः शूलनिवारणम् ॥ १ ॥

बिल की जड़, एरण्ड की जड़, चीते की जड़, सोंठ इनका क्वाथ करके उस में हींग और सेंधानमक मिलाकर दें तो शूल तुरन्त नष्ट होता है।

अथ हरीतकीयोगः—मूत्रान्तःपाचितां शुष्कां लोहचूर्णसमन्विताम्।
सगुडामभयां दद्यात्सर्वशूलोपशान्तये ॥ १ ॥

गोमूत्र में हरड़ को पकाके सुखा लेवे उसमें लोहे का चूर्ण और गुड मिलाकर खिलाने से सब शूल शान्त होते हैं ॥ १ ॥

अथ लोहत्रिफलायोगः—तीक्ष्णायश्चूर्णसंयुक्तं त्रिफलाचूर्णमुत्तमम्।
प्रयोज्यं मधुसर्पिर्भ्यां सर्वशूलनिवारणम् ॥ १ ॥

तीक्ष्ण लोह का चूर्ण अर्थात् भस्म और त्रिफला का चूर्ण इन दोनों को समभाग लेकर शहद और घी से मिलाकर खिलावें तो सब शूल नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथ चूर्णानि।

तत्राऽऽदौ तुम्बुर्वाद्यं चूर्णम्—चूर्णं तुम्बुरुरामठत्रिलवणक्षाराजमोदाभया-
वेल्लत्र्यूषणपुष्कराह्वयकृतं कुम्भत्रिभागान्वितम्।
मन्दोष्णेन जलेन पीतमखिलं शूलं सगुल्मोदरा-
ध्मानाजीर्णविबन्धमामपवनानाहौ च शीघ्रं जयेत् ॥ १ ॥

तेजबल का फल, हींग, सेंधानमक, सोंचल नमक और विडनमक, यवक्षार, अजवायन, हरड़, वायविडंग, सोंठ, मिरच, पीपल, पोहकरमूल प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ भाग और त्रिवि का चूर्ण ३ भाग (कुम्भ त्रिवृतायां जयपाल वृक्षे च) अथवा दन्तिमूल का चूर्ण ३ भाग लें। सबको पीसकर चूर्ण करे। इस चूर्ण को कोसे पानी से पिलावे तो सब प्रकार के शूल, गुल्म, उदररोग, आध्मान, अजीर्ण, विबन्ध, आमवात, ये सब शीघ्र नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथ द्विक्षाराद्यम्—

विश्वोरुबूकदशमूलयवाम्भसा तु द्विक्षारहिंगुलवणत्रयपुष्कराणाम्।
चूर्णं पिबेद् हृदयपृष्ठकटिग्रहामपक्वाशयार्तिभृशरुग्ज्वरगुल्मशूली ॥ १ ॥

सोंठ, एरण्ड की जड़, दशमूल के दश द्रव्य और जौ प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर एकत्र कर क्वाथ करे। इस क्वाथ में यवक्षार, सज्जी, हींग, सेंधानमक, सोंचल नमक, विड नमक और पोहकर मूल इनका समभाग चूर्ण मिलाकर पीवे तो हृदय की पीठ कटिग्रह, आमाशय तथा पक्वाशय की घोर पीड़ा तथा ज्वर और गुल्म शूल अच्छे होते हैं ॥ १ ॥

अथ हिङ्ग्वादि—हिङ्ग्वम्लत्रिपटूग्रषट्कटुशटीवृक्षाम्लदीप्याह्लकं

पाठाजाज्यजगन्धमूलहपुषाद्विक्षारसाराभयम् ।
हिध्माध्मानविबन्धवर्ध्मकसनश्वासाग्निसादारुचि-
प्लीहार्शोखिलशूलगुल्मगलहृद्रोगाश्मपाण्डुप्रणुत् ॥१॥

हींग, अमलवेत, सेंधानमक, सोंचल नमक और विडनमक, सुहांजना, पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चीता, सोंठ और काली मिरच, कचूर, अमलकुटा, अजवायन, अकरकरा, आकनादि, सफेद जीरा, वन अजवायन की जड़, हाउबेर, यवक्षार और सज्जीक्षार, लोहे का चूर्ण और हरड़ इन सबको समभाग लेकर चूर्ण करें। इसको सेवन कराने से हिचकी, आध्मान, कब्ज, वृद्धिरोग, खांसी, श्वास, अग्निमान्द्य, अरुचि, प्लीहा, अर्श सब प्रकार के शूल, गुल्म, गलरोग, हृद्रोग, पथरी और पाण्डुरोग नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथ नाराचचूर्णम्—कर्षमात्रा भवेत्कृष्णा त्रिवृतं स्यात्पलोन्मितम् ।
खण्डात्पलं च विज्ञेयं चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥ १ ॥

पिप्पली १ कर्ष, निशोथ १ पल, खाण्ड एक पल सबको एकत्र चूर्ण करे ॥१॥

कर्षोन्मितं लिहेदेतत्क्षौद्रेणाऽऽध्माननाशनम् ।
गाढविट्कोदरकफपित्तशूलानि नाशयेत् ॥ २ ॥

इस चूर्ण को १ कर्ष भर लेकर शहद से मिलाकर चटावे तो आध्मान नष्ट होता है। मल की कठोरता दूर होती है। पेट के रोग दूर होते हैं तथा कफ पित्त के शूल नष्ट होता है ॥ २ ॥ इति चूर्णानि ।

अथ शङ्खवटी—चिञ्चाक्षारं पचपलं लवणानि पलं पलम् ।
संचूर्ण्य निक्षिपेत्प्रस्थद्वये जम्बीरवारिभिः ॥ १ ॥

इमली का क्षार ५ पल, पांचों लवण प्रत्येक एक २ पल, इनको मिलाकर चूर्ण करके जंबीरी नीबू के २ प्रस्थ रस में मिलावे ॥ १ ॥

शङ्खं दशपलं तप्त्वा निक्षिपेत्सप्तवारतः ।
तत्समस्तं विशोष्याथ हिङ्गुव्योषं चतुष्पलम् ॥ २ ॥

फिर १० पल शोधित शंख को लेकर अग्नि पर तपा २ कर ७ बार इस रस में बुझावे। फिर इस सबको एकत्र मिलाकर पीसे और सूखने के बाद इसमें हींग और सोंठ, मिरच, पीपल का चूर्ण चार २ पल डाले ॥ २ ॥

बलिसूतविषाद्भागान्पलार्धं च पृथक्पृथक् ।
एतत्समस्तं संमर्द्य जम्बीराम्लैर्दिनत्रयम् ॥ ३ ॥

शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारा और शुद्ध वत्सनाभ विष प्रत्येक आधा पल लेकर परस्पर खरल कर उसमें मिलावें। फिर इन सब द्रव्यों को एकत्र करके जम्बीरी नीबू के रस में ३ दिन तक खरल करें ॥ ३ ॥

बदरास्थिप्रमाणेन वटिकां कारयेद् बुधः ।
एकैकां भक्षयेत्प्रातः कोष्णतोयं पिबेदनु ॥ ४ ॥

फिर बेर की गुठली के बराबर तीन चार रत्ति की गोली बनावे। इस १ एक गोली को प्रातःकाल खाकर ऊपर से कोसा जल पीवें ॥ ४ ॥

सर्वशूलं हरेद्गुल्ममजीर्णं परिणामजम्।
अतिसारगदं हन्याद्ग्रहणीं च विशेषतः ॥ ५ ॥

इस प्रकार उपयोग करने से सब प्रकार के शूल नष्ट होते हैं। गुल्म रोग, अजीर्ण और परिणाम शूल नष्ट होते हैं। अतिसार रोग और विशेष करके ग्रहणी रोग नष्ट होते हैं ॥ ५ ॥

अथ सूर्यप्रभा वटी—व्योषग्रन्थिवचाग्निहिङ्गुजरणद्वंद्वं विषं निम्बुक-
द्रावैरार्द्रकजैरसैर्विमृदितं तुल्यं मरीचोपमा।
कर्तव्या वटिकाऽथ सा दिनमुखे भुक्त्वा कवोष्णाम्बुना
शूलं त्वष्टविधं निहंति सहसा सूर्यप्रभा नामतः ॥ १ ॥

सोंठ, मिरच, पीपल, पिप्पलामूल, वच, चीता, हींग, सफेद जीरा और काला जीरा और शोधित मीठा तेलिया इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग लेकर सब को चूर्ण कर नीबू के रस में और अदरक के रस में क्रमशः खरल करके गोल मिरच के समान गोलियां बनावे। यह सूर्य प्रभा नामी गोली प्रातः काल कोसे जल से पीने से आठों प्रकार के शूल को निश्चित नाश करती है ॥ १ ॥

अथ खण्डपिप्पली—कणाचूर्णं तु कुडवं षट्पलं हविषस्तथा।
पलषोडशकं खण्डं शतावर्याः पलाष्टकम् ॥ १ ॥

पिप्पली का चूर्ण एक कुड़व, घी ६ पल, खाण्ड १६ पल, शतावर ८ पल ले ॥ १ ॥

क्षीरप्रस्थद्वये सार्धं लेहीभूते तदुद्धरेत्।
त्रिजातमुस्तधान्याकं शुण्ठीमांसीद्विजीरकम् ॥ २ ॥

दूध २ प्रस्थ में डालकर विधिपूर्वक पकावें और अवलेह के समान होने पर अग्नि से उतार कर उसमें दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागरमोथा, धनियां, सोंठ, जटामांसी, सफेद जीरा, काला जीरा ॥ १ ॥

अभयाऽऽमलकं चैव चूर्णं द्वादशकार्षिकम्।
तदर्धं मरिचं भागं सारं खादिरमेव च ॥ ३ ॥

हरड़, आंवला इन में से प्रत्येक का चूर्ण बारह कर्ष लेकर मिलावें। मिरच ६ कर्ष लेवे। कत्था १२ कर्ष लेवें। इन सबका चूर्ण करके उस अवलेह में मिलावें ३

मधुत्रिपलसंयुक्तं खादेत्सिद्धं यथाबलम्।
शूलारोचकहृल्लासच्छर्दिपित्ताम्लरोगनुत्।
अग्निसंदीपनी हृद्या खण्डपिप्पलिका मता ॥ ४ ॥

फिर शहद तीन पल डालकर रक्खे। इसको बलानुसार खाने से शूल, अरुचि, हृल्लास, वमन तथा अम्लपित्त रोग नष्ट होते हैं। अग्नि दीप्त होती है तथा

हृदय के लिये हितकारी है। इसका नाम खण्ड पिप्पली है॥ ४॥

अथ घृतम्—घृताच्चतुर्गुणो देयो मातुलुङ्गरसो दधि।
शुष्कमूलककोलाम्लकषायो दाडिमाम्भसा॥ १॥

घी १ सेर ले। बिजौरे नीबू का रस ४ सेर, दही ४ सेर, सूखी हुई मूली और बेर इनका क्वाथ ४ सेर (कोलं बदरी फलम्। अम्लं काञ्जिकं अम्ल वेतस फलं वदर फले वा) अनार का रस ४ सेर॥ १॥

विडङ्गलवणक्षारं पञ्चकोलयवानिभिः।
पाठामूलककल्केन सिद्धं शूले घृतं मतम्॥ २॥

कल्क के लिये द्रव्य आगे लिखे हुए डाले—वायविडंग, सेंधानमक, यवक्षार, पिप्पली, पिप्पलीमूल, सोंठ, चव्य, चीता, अजवायन, पाठा की जड़ प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर कुल मिलाकर एक पावभर लेकर कल्क कर उस घी में डाल यथाविधि घृत पाक करे२

हृत्पार्श्वशूलं वै श्वासं कासं हिक्कां तथैव च।
वर्ध्मगुल्मप्रमेहार्शोवातव्याधींश्च नाशयेत्॥ ३॥

यह घी शूल में बहुत लाभदायक है। हृदय और पसलियों का दर्द दूर करता है। श्वास, कास और हिक्का नष्ट करता है तथा वृद्धिरोग, गुल्म, प्रमेह, बवासीर और वात व्याधियों को नष्ट करता है॥ ३॥

अथ रसौ।

अथ शूलगजकेसरीरसः—

रसविषगन्धकपर्दक्षारेणसिन्धुपिप्पलीविश्वैः।
अहिवल्ल्यम्बुविघृष्टः शूलेभहरिर्द्विगुञ्जोऽयम्॥ १॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध विष, कौड़ी की भस्म, यवक्षार, सेंधानमक, पिप्पली और सोंठ इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेवे। सबसे पहिले पारे की गन्धक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलाकर सबको एकत्र करके पान के रस में घोटे। इसका नाम शूल गज केसरी रस है। इसकी एक २ मात्रा देने से विविध प्रकार के रोग नष्ट होते हैं॥ १॥

अन्यच्च—क्षारं कपर्द्दीविषसैंधवौ च व्योषं च संमर्द्य भुजंगवल्लयाः।
रसेन गुञ्जाप्रमितः प्रदिष्टः समीरशूलेभहरिः प्रचण्डः॥१॥

यवक्षार, कौड़ी भस्म, शोधित विष, सेंधानमक, सोंठ, मिरच, पीपल इन में से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ भाग लेकर पान के स्वरस से खरल करे। १ रत्ती के समान गोली बनावे। इसको देने से शूल नष्ट होता है। इसका नाम भी समीर शूल गज केसरी रस है॥ १॥ इति रसौ।

अथ पथ्यापथ्यम्।

पटोलं कारवेल्लं च वास्तुकं शिग्रुजं तथा।

भुक्तमात्रेऽथवा वान्ते जीर्णे चान्ने प्रशाम्यति।
षष्टिकव्रीहिशालीनामोदनेन च वर्धते ॥ ३ ॥
तत्परीणामजं शूलं दुर्विज्ञेयं महागदम्।
आहाररसवाहानां स्रोतसां दुष्टिहेतुकम ॥ ४ ॥

कुछ खाना खाते ही अथवा वमन करने पर अथवा अन्न के पक चुकने के बाद यह शूल शान्त हो जाता है। इस रोग में साठी के चावल, व्रीहि, शालि तथा साधारण चावल खाने से यह रोग बढ़ता है। यह परिणामज शूल रोग बड़ी कठिनता से समझ में आता है। यह भोजन के रस को बहाने वाले स्रोतों को दूषित कर देता है ॥ ४ ॥

केचिदन्नद्रवं प्राहुरन्ये तत्पक्तिदोषजम्।
पक्तिशूलं वदन्त्येके केचिदन्नविदाहजम् ॥ ५ ॥

इसे कुछ वैद्य "अन्न द्रव शूल" कहते हैं। कोई "पक्तिदोषजशूल" कहते हैं। कोई "पक्तिशूल" कहते हैं और कोई "अन्न विदाहज शूल" कहते हैं ॥५॥

अथ तस्य सामान्यलक्षणमाह—

भुक्ते जीर्यति यच्छूलं तदेव परिणामजम्।
तस्य लक्षणमेतद्धि समासेन प्रकीर्त्यते ॥ १ ॥

भोजन के पचने पर जो शूल होता है उसी को परिणामज शूल कहते हैं यही इसका संक्षिप्त लक्षण है ॥१॥

अथ वातिकमाह—आध्मानाटोपविण्मूत्रविबन्धारातिवेपनैः।
स्निग्धोष्णोपशमं प्रायो वातिकं तद्वदेद्भिषक् ॥ १ ॥

पेट में आध्मान हो, आटोप अर्थात् गुड़ गुड़ाहट हो, मलमूत्र रुके हों, बेचैनी हो और कंपकंपी हो ऐसे शूल को वातिक परिणाम शूल कहते हैं। यह प्रायः स्निग्ध और गरम पदार्थों से शान्त होता है ॥ १ ॥

अथ पैत्तिकमाह—तृष्णादाहारुचिस्वेदकट्वम्ललवणोत्तरम्।
शूलं शीतशमं प्रायः पैत्तिकं तद्वदेद्भिषक् ॥ १ ॥

जिसमें तृष्णा, दाह, अरुचि हो। पसीना आवे और कटु, अम्ल और लवण रस सेवन के बाद होवे और शीतल द्रव्य सेवन करने से शान्त हो उसे पैत्तिक परिणाम शूल कहते हैं ॥ १ ॥

अथ श्लैष्मिकमाह—छर्दिहृल्लाससंमोहस्वल्परुग्दीर्घसंतति।
कटुतिक्तोपशान्तं हि तच्च ज्ञेयं कफात्मकम् ॥ १ ॥

जिसमें वमन, हृल्लास, सम्मोह, मन्द २ पीड़ा और देर तक पीड़ा रहती हो। कटु तथा तिक्त पदार्थों से शान्त होवे उसे श्लैष्मिक परिणाम शूल कहते हैं१

अथ द्विदोषजमाह—संसृष्टलक्षणं बुद्ध्वा द्विदोषं परिकल्पयेत्।
जिस में दो २ दोषों के लक्षण दिखाई दें उसे दोषज परिणामशूल कहते हैं।

अथ सांनिपातिकमाह—त्रिदोषजमसाध्यं स्यात्क्षीणमांसबलानलम् ॥ १ ॥

जिसमें तीनों दोषों के लक्षण मिले वह त्रिदोषज परिणाम शूल है। और यदि रोगी को मांस, बल और अग्नि क्षीण हो गई हो तो यह त्रिदोषज परिणाम शूल असाध्य होता है ॥ १ ॥

अथान्नद्रवाख्यम्—जीर्णे जीर्यत्यजीर्णे च यच्छूलमुपजायते।
तदप्यसाध्यं नित्यत्वादुक्तं वैद्यविशारदैः ॥ १ ॥

भोजन के जीर्ण होने पर और भोजन के अजीर्ण होने पर जो शूल होता है वह वैद्यों ने असाध्य माना है क्योंकि वह नित्य ही रहता है ॥ १ ॥

पथ्यापथ्यप्रयोगेण भोजनाभोजनेन वा।
न शमं याति नियमात्सोऽन्नद्रव उदाहृतः ॥ २ ॥

पथ्य सेवन करने से अथवा अपथ्य सेवन करने से, भोजन करने से अथवा भोजन न करने से, जो शूल शान्त नहीं होता और नियम से हर समय बना रहता है उसे अन्न द्रव शूल कहते हैं। यह प्रायः त्रिदोषों के बिगड़ जाने से असाध्य होता है ॥ २ ॥

अथायं प्रायेण त्रिदोषविकृतित्वादसाध्यः।
आनाहो गौरवं छर्दिर्भ्रमस्तृष्णा ज्वरोऽरुचिः।
कृशत्वं बलहानिश्च वेदनाऽतिप्रवर्तते ॥ १ ॥

आनाह, गौरव, वमन, भ्रम, तृष्णा, ज्वर, अरुचि, शरीर का कृश होना, बल की हानि तथा अति पीड़ा होना ॥ १ ॥

उपद्रवा दशैवैते शूले च परिणामजे।
सोपद्रवोऽप्यसाध्यः स्यात्कृच्छ्रेण निरुपद्रवः ॥ २ ॥

ये परिणाम शूल के १० उपद्रव माने हैं। यदि यह परिणाम शूल उपद्रवों से युक्त हो तो असाध्य होता है और यदि उपद्रवों से रहित हो तो कष्ट साध्य होता है ॥ २ ॥ इति परिणाम शूल निदानम्।

अथ तच्चिकित्सा।

लङ्घनं प्रथमं कुर्याद्वमनं च विरेचनम्।
बस्तिकर्म परं चात्र पक्तिशूलोपशान्तये ॥ १ ॥

पहिले लङ्घन, वमन और विरेचन करावे फिर बस्ति करावे इससे परिणाम शूल की शान्ति होती है ॥ १ ॥

वातजं स्नेहयोगेन पित्तजं रेचनादिना।
कफजं वमनाद्यैश्च पक्तिशूलमुपाचरेत्।
द्वंद्वजं स्नेहयोगेन तत्त्रियोगेण सर्वजम् ॥ २ ॥

वातज परिणाम शूल को स्नेह के देने से, पित्तज को विरेचन देकर और कफज को वमनादि देकर तथा द्वन्द्वज को स्नेह पान कराकर और त्रिदोषज को त्रिदोष नाशक उपायों से शान्त करे ॥ २ ॥

अथ कल्काः—विष्णुक्रान्ताजटाकल्कः सिताक्षौद्रघृतैर्युतः ।
परिणामभवं शूलं नाशयेत्सप्तभिर्दिनैः ॥ १ ॥

विष्णुक्रान्ता अर्थात् कोयल की जड़ का कल्क, खांड, शहद और घी से मिलाकर चाटने से सात दिन के अन्दर परिणाम शूल नष्ट होता है ॥ १ ॥

शुण्ठीतिलगुडैः कल्कं दुग्धेन सह योजयेत् ।
परिणामभवं शूलमामवातश्च नश्यति ॥ २ ॥

सोंठ, तिल, गुड इनको समभाग ले कल्क कर दूध के साथ पीवे तो परिणाम शूल और आमवात रोग नष्ट होता है ॥ २ ॥

नागरतिलगुडकल्कं पयसा संसाध्य यः पुमानद्यात् ।
उग्रं परिणतिशूलं सप्ताहाज्जयति चावश्यम् ॥ ३ ॥

सोंठ, तिल, गुड, इनका कल्क दूध के साथ सिद्ध करके जो मनुष्य खाता है वह भयंकर परिणाम शूल को १ सप्ताह में अवश्य जीतता है ॥ ३ ॥

अथ शम्बूकभस्मयोगः—शम्बूकजं भस्म पीतं जलेनोष्णेन तत्क्षणात् ।
पक्तिजं विनिहन्त्याशु शूलं विष्णुरिवासुरान् ॥ १ ॥

शम्बूक अर्थात् घोंघे की भस्म को गरम जल से पीने पर तुरन्त ही परिणाम शूल ऐसे नष्ट होता है जैसे विष्णु से असुर लोग ॥ १ ॥

अथ शम्बूकादिवटिका—शम्बूकमूषणं चैव पञ्चैव लवणानि च ।
समांशा गुडिकां कृत्वा कलम्बुकरसेन च ॥ १ ॥

घोंघे की भस्म, काली मिरच और पांचों नमक इन में से प्रत्येक द्रव्य को समभाग लेकर मिलाकर चूर्ण करे फिर (कलम्बुक जलज शाक विशेष कलिमशाक) कलिम शाक के रस से सब को मर्दन कर गोली बनावे ॥ १ ॥

प्रातर्भोजनकाले वा भक्षयेच्च यथाबलम् ।
शूलाद्विमुच्यते जन्तुः सहसा परिणामजात् ॥ २ ॥

इस गोली को प्रातःकाल अथवा भोजन के समय बलानुसार खिलाने से शीघ्र ही परिणाम शूल से रोगी छूट जाता है ॥ २ ॥

अथ क्षीरमण्डूरः—लोहकिट्टं पलान्यष्टौ गोमूत्रार्धाढके पचेत् ।
परिणामभवं शूलं सद्यो हन्ति न संशयः ॥ १ ॥

मण्डूर ८ पल गोमूत्र आधा आढक में मिलाकर पकावे । इसकी उचित मात्रा देने से निश्चय पूर्वक परिणाम शूल शीघ्र नष्ट हो जाता है ॥ १ ॥

अथ तारमण्डूरः—विडङ्गं चित्रकं चव्यं त्रिफला त्र्यूषणानि च ।

नवभागानि चैतानि लोहकिट्टसमानि च ॥ १ ॥

वाय विडंग, चीता, चव्य, हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग ले। शुद्ध मण्डूर ६ भाग ले ॥ १ ॥

गोमूत्रं द्विगुणं दत्त्वा मूत्राद्द्विगुणको गुडः।
शनैर्मृद्वग्निना पक्त्वा सुसिद्धं पिण्डतां गतम् ॥ २ ॥

गोमूत्र १८ भाग ले। पहिले गोमूत्र में मण्डूर और गुड ३६ भाग डालकर तथा उपर्युक्त पानी डालकर पकावे (नोट—अन्यत्र मूत्र से आधा गुड लेना लिखा है)। पाक शेष होने पर ऊपर कहे हुए वायविडंगादि नौ द्रव्यों का चूर्ण उस में डालें इस प्रकार पक चुकने पर जब पिण्ड सा बन जाये तो उतारकर चिकने पात्र में रखे ॥ २ ॥

स्निग्धभाण्डे विनिक्षिप्य भक्षयेत्कोलमात्रया।
प्राङ्मध्यान्तक्रमेणैव भोजनस्य प्रयोजितः ॥ ३ ॥

इसे एक कोल भर अर्थात् एक तोला भर लेकर भोजन के आदि में, मध्य में तथा अन्त में खावे ॥ ३ ॥

योगोऽयं शमयत्याशु पक्तिशूलं सुदारुणम्।
कामलां पाण्डुरोगं च शोथमेदोनिलार्शसाम् ॥
शूलार्तानां कृपाहेतोस्तारया प्रकटीकृतः ॥ ४ ॥

यह रोग अत्यन्त भयंकर पक्ति शूल को भी शीघ्र नाश करता है, कामला, पाण्डुरोग, शोथ, मेद वृद्धि, वातरोग और ववासीर इनको नाश करता है। शूल के रोगियों के दुःख को देखकर उन पर कृपा करने के विचार से यह योग श्रीमती तारा ने प्रगट किया था इस लिये इसका नाम तारा मण्डूर है ॥ ४ ॥

अथ भीममण्डूरः—यवक्षारकणाशुण्ठीकोलग्रन्थिकचित्रकात्।
प्रत्येकं पलमादाय प्रस्थं लोहस्य किट्टतः ॥ १ ॥

जौखार, पिप्पली, सोंठ, बेर, पिप्पलामूल, चीता इन में से प्रत्येक द्रव्य एक एक पल ले। शुद्ध मण्डूर एक प्रस्थ लेकर ॥ १ ॥

शनैः पचेदयस्पात्रे यावद्दर्वीप्रलेपनम्।
दत्त्वाऽष्टगुणगोमूत्रं किट्टाच्छुद्धाद्विचक्षणः ॥ २ ॥

लोहे के पात्र में डालकर और ८ प्रस्थ गोमूत्र डालकर मन्द २ अग्नि से पकावे। जब गाढ़ा होकर कड़छी को लगने लगे तब पूर्व लिखित यवक्षारादि द्रव्यों के चूर्ण को इसमें मिला दें ॥ २ ॥

ततोऽक्षमात्रान्वटकान्योजयेत्सप्तरात्रतः।
आदिमध्यावसानेषु भोजनस्योचितस्य वै ॥
स भीमवटको ह्येषः परिणामरुगन्तकः ॥ ३ ॥

और एक अक्ष भर की गोलियां बनाकर रक्खे । इन गोलियों को रोग के लिये पथ्य कहे हुए भोजन के आदि, मध्य और अन्तमें सात रात खाने से परिणाम शूल निश्चय से नष्ट होता है । इसका नाम भीम मण्डूर है ॥ ३ ॥

अथ शतावरीमण्डूरः—संशोध्य चूर्णितं कृत्वा मंडूरस्य पलाष्टकम् ।
शतावरीरसस्याष्टौ दध्नश्च पयसस्तथा ॥ १ ॥

शुद्ध मण्डूर का चूर्ण ८ पल, शतावर का रस ८ पल, दही ८ पल, दूध ८ पल लें ॥ १ ॥

पलान्यादाय चत्वारि तथा गव्यस्य सर्पिषः ।
विपचेत्सर्वमेकस्थं यावत्पिण्डत्वमाप्नुयात् ॥ २ ॥

गौ का घी ४ पल इन सब को एकत्र मिलाकर पकावे । तब तक पकावे जब तक गाढ़ा हो जावे ॥ २ ॥

सिद्धं तु भक्षयेन्मध्ये प्रान्ते भुक्तस्य चाग्रतः ।
वातात्मकं पित्तभवं शूलं च परिणामजम् ॥ ३ ॥

इस को पकने के बाद भोजन के आदि, मध्य और अन्त में खावे । इस से वातिक, पैत्तिक और परिणामज शूल नष्ट होते हैं ॥ ३ ॥

निहन्त्येव हि योगोऽयं मण्डूरस्य न संशयः ।
दुग्धे निर्वापणं कार्यं यद्वा बहुसुतारसे ॥ ४ ॥

यह मण्डूर का प्रयोग निश्चय से शूलों का नाश करता है इस में सन्देह नहीं । मण्डूर को गरम करके दूध में बुझावे या शतावर के रस में बुझावे ॥४॥

अथवा चोभयोरेव लोहकिट्टस्य सप्तधा ।
रसो गन्धः शुभः पाके वर्तिः स्याद्यदि मर्दनात् ॥
तदा पाकं विजानीयान्मण्डूरस्य भिषग्वरः ॥ ५ ॥

अथवा दोनों के रस में बुझावे । प्रत्येक में सात २ बार बुझाना चाहिये । जब मण्डूर का रस और गन्ध शुभ प्रतीत हो और पाक कर के हाथ से मलने पर बत्तियां सी बन जांय तो मण्डूर का ठीक पाक समझना चाहिये ॥ ५ ॥

इति शतावरी मण्डूरः ॥

अथ लोहगुग्गुलुः—त्रिफला मुस्तकं व्योषं विडंगं पौष्करं वचा ।
चित्रकं मधुकं चैव पलांशं श्लक्ष्णचूर्णितम् ॥ १ ॥
अयोभस्म पलान्यष्टौ गुग्गुलुस्तावदेव तु ।
सर्पिषा मेलयित्वाऽथ कर्षमात्रवटीकृतम् ॥ २ ॥

त्रिफला, मोथा, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, पोहकरमूल, बच, चीता, मुलठ्ठी इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ पल लेकर चूर्ण करे, लौहभस्म ८ पल ले, गूगल ८ पल डाले । इन सब को मिलाकर घी डाल २ कर कूटे । इस की एक कर्षभर की गोली बनावे ॥ २ ॥

अद्यादनु पिबेत्कोष्णं वारि शूलाद्विमुच्यते।
जीर्णान्नसंभवात्पाण्डोः कामलाया हलीमकात् ॥ ३ ॥

इस गोली को खाकर गरम जल पीवे तो अन्नद्रवशूल से रोगी छूट जाता है। तथा इस से पाण्डु, कामला और हलीमक रोग भी नष्ट होजाते हैं ॥३॥

अथ विडङ्गाद्यो मोदकः—विडङ्गतण्डुलं व्योषं त्रिवृद्दन्ती सचित्रकम्।
सर्वाण्येतानि संहृत्य सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥१॥
गुडेन मोदकान्कृत्वा भक्षयेत्प्रातरुत्थितः।
उष्णोदकानुपानेन दद्यादग्निविवर्धनम् ॥
जयेत्त्रिदोषजं शूलं परिणामसमुद्भवम् ॥ २ ॥

वायविडंग के तण्डुल, सोंठ, मिरच, पीपल, त्रिवी, दन्तीमूल, चीता इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर गुड से मिलाकर मोदक बना लेवे। इसे प्रातःकाल गरम पानी से खावें तो अग्निवृद्धि होती है तथा त्रिदोषज शूल और परिणामज शूल नष्ट होते हैं ॥ २ ॥

अथैरण्डादिभस्मयोगः—एरण्डवह्निशम्बूकवर्षाभूगोक्षुरं समम्।
अन्तर्दग्ध्वा पिबेदद्भिरुष्णाभिः शूलशान्तये ॥१॥

एरण्डमूल, चीते की जड़, शम्बूकभस्म, पुनर्नवा, गोखरू इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर एक हांडी में डालें और मुंह बन्द कर के नीचे आंच देवे। जब ये सब पदार्थ अन्दर ही भस्म हो जांये। तो इस भस्म को स्वांगशीतल होने पर उचित मात्रा में गरम जल से पीवें तो शूल शान्त हो जाता है ॥ १ ॥

अथ पथ्याद्यं लोहम्—पथ्यालोहरजः शुण्ठी तच्चूर्णं मधुसर्पिषा।
परिणामभवं हन्ति वातपित्तकफात्मकम् ॥ १ ॥

हरड़, लोहभस्म, सोंठ इन में से प्रत्येक का चूर्ण समभाग लेकर शहद और घी से मिलाकर चाटें तो वातपित्तकफात्मक परिणामशूल नष्ट होता है ॥१॥

अथ कृष्णाद्यं लोहम्—कृष्णाभयालोहचूर्णं विलिहन्मधुसर्पिषा।
परिणामभवं शूलं सद्यो हन्ति सुदारुणम् ॥ १ ॥

पिप्पली, हरड़, लोहभस्म इन के समभाग चूर्ण को शहद और घी से मिला कर चाटें तो शीघ्र ही भयंकर परिणामशूल नष्ट होता है ॥ १ ॥

अथ चतुःसमं लोहम्—गन्धं ताम्रं रसं लोहं प्रत्येकं मारितं पलम्।
सर्वमेतत्समाहृत्य विपचेत्कुशलो भिषक् ॥ १ ॥
आज्ये पलद्वादशके दुग्धे शतपले वरे।
पक्त्वा तत्र क्षिपेच्चूर्णं सुपूतं घनतां नयेत् ॥ २ ॥

शुद्ध गंन्धक, ताम्रभस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध लोहभस्म प्रत्येक द्रव्य एक २ पल लें। इन सब को एकत्र पीसकर १२ पल घी में तथा एकसौ पल दूध में कुशलता से वैद्य पकावे। पक जाने पर अर्थात् कुछ घना हो जाने पर ॥ २ ॥

विडङ्गत्रिफलावह्नित्रिकटूनां तथैव च ।
क्षिप्त्वा पलोन्मितानेतान्यथा संमिश्रतां नयेत् ॥ ३ ॥

वायविडंग, हरड़, बहेड़ा, आंवला, चीता, सोंठ, मिरच, पीपल इन में से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ पल लेकर मिला देवे ॥ ३ ॥

ततः पिष्ट्वा शुभे भाण्डे स्थापयेच्च विचक्षणः ।
आत्मनः शोभने घस्रे पूजयित्वा रविं गुरुम् ॥ ४ ॥

फिर सबको पीसकर शुभ पात्रमें रखे। फिर शुभ दिनमें सूर्य और अपने गुरुकी पूजाकरके

घृतेन मधुना मर्त्यं भक्षयेन्माषसंमितम् ।
अष्ट माषाः क्रमाद्यावन्मात्रां संस्तम्भयेत्ततः ॥ ५ ॥

एक माषाभर इस औषध को लेकर घी और शहद से मिलाकर रोगी को चटावे । क्रमशः इस मात्रा को बढ़ाकर आठ माषा तक खिलावे । और फिर आगे मात्रा न बढ़ाकर कई दिन तक आठ २ माशे की मात्रा ही खिलाता जावे ॥ ५ ॥

अन्नपानं च दुग्धेन नारिकेलोदकेन वा ।
जीर्णशाल्यन्नमुद्गाश्च सितामांसरसादयः ॥ ६ ॥

पथ्य में दूध पीवे, नारियल का जल पीवे । पुराने शाली चावल, मूंग, खांड मांस का रस आदि देवें ॥ ६ ॥

रसानामविरुद्धानि पानान्नान्यपि भक्षयेत् ।
हृच्छूलं पार्श्वशूलं च सामवातं कटिग्रहम् ॥ ७ ॥

अन्य अन्नपान जो रस सेवन करने वालों के लिये अपथ्य कहे हैं सब त्याग देवे । इससे हृदय का शूल, पसलियों का शूल, आमवात, कटिग्रह ॥ ७ ॥

गुल्मशूलं च सर्वं च यकृत्प्लीहा विशेषतः ।
अग्निमान्द्यं क्षयः कुष्ठं श्वासकासविचर्चिकाः ।
अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रं च योगेनानेन शाम्यति ॥ ८ ॥

सब प्रकार का गुल्म शूल विशेष करके यकृत् और प्लीहा का शूल, अग्निमान्द्य, क्षय और कुष्ठरोग, श्वास, कास, विचर्चिका अश्मरी और मूत्रकृच्छ्र नष्ट होते हैं ॥ ८ ॥ इति चतुःसमं लोहम् ॥

अथ सामुद्राद्यं चूर्णम्—सामुद्रं सैन्धवं क्षारौ रुचकं रौमकं बिडम् ।
दन्ती लोहरजः किट्टं त्रिवृत्सूरणकं समम् ॥ १ ॥

समुद्र लवण, सेंधानमक, यवक्षार, सज्जीक्षार, रुचक लवण, रौमक लवण, विड्लवण, दन्तिमूल, लोहभस्म, शुद्ध मण्डूर, त्रिवि, शूरनकन्द ॥ १ ॥

दधिगोमूत्रपयसा मन्दपावकपाचितम् ।
तद्यथाग्निबलं चूर्णं पिबेदुष्णेन वारिणा ॥ २ ॥

प्रत्येक पदार्थ समभाग लेवे। इनका चूर्ण करके उसे दही, गोमूत्र और दूध में डालकर मन्द २ अग्नि से पकावे । पकने के पश्चात् उसका चूर्ण कर अपनी अग्नि बल के

अनुसार इस चूर्ण को गरम जल से पीवे ॥ २ ॥

जीर्णेऽजीर्णे च भुञ्जीत मांसादि घृतसाधितम्।
नाभिशूलं च हृच्छूलं गुल्मप्लीहकृतं च यत् ॥ ३ ॥

भोजन के पचने या न पचने पर भी घी में सिद्ध किया हुवा मांसरस आदि खावे। इससे नाभिशूल, हृदय का शूल, गुल्म का शूल तथा प्लीहा का शूल नष्ट होते हैं ३

विद्रध्यष्ठीलजं हन्ति कफवातोद्भवं तथा।
अन्नद्रवं जरयितुमजीर्णं ग्रहणीमपि ॥ ४ ॥

विद्रधि और अष्ठीला का शूल तथा कफवात से हुवा २ शूल नष्ट होता है। अन्न द्रव का शूल नष्ट होता है। अजीर्ण और ग्रहणी रोग भी शान्त होता है ॥४॥

शूलानामपि सर्वेषामौषधं नास्त्यतः परम्।
परिणामसमुत्थस्य विशेषेणान्तकं मतम् ॥ ५ ॥

सब शूलों की औषधि इससे बढ़कर और कोई नहीं है। यह परिणाम शूल की विशेष औषध है। इति सामुद्राद्यं चूर्णम्।

अथ पिप्पल्यादियोगः—**समागधीगुडं सर्पिः प्रस्थं क्षीरं चतुर्गुणम्।**
पक्वं पीत्वा जयत्याशु पक्तिशूलं समुद्धतम् ॥

पिप्पली गुड समभाग ले। घी १ प्रस्थ, दूध ४ प्रस्थ सबको मिलाकर पकावे। इससे भयंकर पक्तिशूल आराम होता है ॥ १ ॥

अथ त्रिपुरभैरवो रसः—**भागौ रसस्य भागश्च हेम्नः पिष्टं विधाय च।**
तथा द्वादशभागानि ताम्रपत्राणि लेपयेत् ॥ १ ॥

शुद्ध पारद २ भाग, सुवर्ण १ भाग दोनों को खरल कर। शुद्ध ताम्र के पत्रों का चूर्ण १२ भाग लेकर इन सबको मिलाकर खरल करे ॥१॥

ऊर्ध्वाधो गन्धकं दत्वा पलमात्रं समन्ततः।
क्षारस्य मृगशृङ्गस्य चूर्णं योज्यं समन्ततः ॥ २ ॥

शुद्ध गन्धक का चूर्ण १ पल लेकर आधा ऊपर आधा नीचे रखकर बीच में सुवर्ण आदि रक्खे और चारों ओर यवक्षार और हिरण के सींग का चूर्ण बिछावे ॥ २ ॥

छिन्नमत्स्याक्षिनीरेण रुद्ध्वा यामचतुष्टयम्।
पचेच्छूलहरः सूतो भवेत्त्रिपुरभैरवः ॥ ३ ॥

इसमें मछेछी का रस डालकर चारों ओर से बन्द कर शराब सम्पुट कर आग पर १२ घण्टे पकावे। यह त्रिपुर भैरव रस शूल नाशक है ॥ १ ॥

माषो मध्वाज्यसंयुक्तो देयोऽस्य परिणामजे।
अन्येष्वेरण्डतैलेन कटुत्रययुतो हितः ॥ ४ ॥

इसकी १ माशा मात्रा शहद और घी के साथ देने से परिणाम शूल नष्ट

होता है। अन्य शूलों में इसे एरण्ड के तेल और त्रिकुटे के चूर्ण से मिलाकर देवे ॥ ४ ॥

अथ शूलदावानलः सारसंग्रहात्—शुद्धसूतं विषं गन्धं पलांशं मर्दयेद्दृढम्।
मरीचं पिप्पली शुण्ठी हिङ्गु सौवर्चलं द्वयम् ॥ १ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध विष लें। तीनों को एक २ पल लेकर दृढ़ता से मर्दन करे। फिर मिरच का चूर्ण, पपिल का चूर्ण, सोंठ का चूर्ण हींग का चूर्ण, सोंचल नमक, प्रत्येक दो २ पल लें ॥ १ ॥

पलाष्टकं पटूनां च चिञ्चाक्षारं पलाष्टकम्।
सप्तवारं शङ्खभस्म जम्बीराम्ले निषेचयेत् ॥ २ ॥

पांचों नमक ८ पल, इमली का सार ८ पल, शङ्ख की भस्म ८ पल लेकर गरम कर के जंबीरी नींबू के रस में ७ बार बुझावे ॥ १ ॥

पलाष्टकं च संयोज्य तत्सर्वं निम्बुकद्रवैः।
दिनं मर्द्य कोलमात्रं भक्षयेत्सर्वशूलनुत् ॥ ३ ॥

इन सब को एकत्र कर नींबू के रस में १ दिन खरल करे फिर इस की मात्रा १ कोल भर खाने से सब शूल नष्ट होते हैं ॥ ३ ॥

अजीर्णोदरमन्दाग्निमसाध्यमपि साधयेत्।
शूलदावानलाख्योऽयं रसोऽजीर्णादिरोगहा ॥ ४ ॥

अजीर्णरोग, उदररोग, मन्दाग्निरोग यदि असाध्य भी हों तो भी इस शूल दावानल रस से आरोग्य हो जाते हैं ॥ ४ ॥ इति शूल दावानलः ॥

अथ पथ्यापथ्यम्।

माषादिशिम्बीधान्यानि मद्यानि वनिता हिमम्।
आतपं जागरं क्रोधं शुचं संधानमम्लकम् ॥
वर्जयेत्पक्तिशूलार्तस्तथाऽजीर्णे तिलानपि ॥ १ ॥

उड़द आदि शिम्बी धान्य, मद्य, स्त्री, शीत, धूप, जागना, क्रोध, शोक, सिरका तथा कांजी आदि अम्ल पदार्थ सेवन करना, अजीर्ण भोजन तथा तिल इन सब को पक्तिशूल का रोगी अपथ्य समझकर त्याग दे ॥ १ ॥ इति परिणाम शूल चिकित्सा ॥

इति हरद्वारीयगुरुकुलविश्वविद्यालयस्नातकेन श्रीविद्याधरविद्यालंकारेण लवपुरीय श्रीमद्दयानन्दायुर्वेदमहाविद्यालयीय वैद्यकविराजोपाधिधारिणा राजयक्ष्मचिकित्सकेन जलचिकित्सा विशेषज्ञेन रसेन्द्रसारसंग्रहटीकाकर्त्रा कृतायां योगरत्नाकरस्य रत्नगर्भानाम्निटीकायां परिणामशूलचिकित्सा समाप्ता ॥

अथोदावर्तनिदानम्।

वातविण्मूत्रजृम्भाश्रुक्षवोद्गारवमीन्द्रियैः।

क्षुत्तृष्णोच्छ्वासनिद्राणां धृत्योदावर्तसंभवः॥ १॥

अपान वायु, मल, मूत्र, जंभाई, आंसू, छींक, डकार, वमन, जननेन्द्रिय, भूख, प्यास, उच्छ्वास और नींद इन सब के वेगों को रोकने से उदावर्तरोग उत्पन्न हो जाता है॥ १॥

अथ तेषां क्रमेण लक्षणान्याह—अथापानवातावरोधजमाह—

वातमूत्रपुरीषाणां सङ्गोऽध्मानं क्लमो ज्वरः।
जठरे वातजाश्चान्ये रोगाः स्युर्वातनिग्रहात्॥ २॥

अपानवायु के वेग को रोकने से वात मूत्र और मल रुक जाते हैं। पेट फूल जाता है। शरीर क्लान्त हो जाता है और ज्वर होजाता है तथा पेट में अन्य वातजरोग उत्पन्न हो जाते हैं॥ २॥

अथ पुरीषावरोधजमाह—

आटोपशूलौ परिकर्तिका च सङ्गः पुरीषस्य तथोर्ध्ववातः।
पुरीषमास्यादथवा निरेति पुरीषवेगेऽभिहते नरस्य॥ ३॥

मल के वेग को रोकने से पेट में गुड़गुड़ाहट और शूल होता है और परिकर्तिका अर्थात् गुदा में काटने की सी पीड़ा होती है। मल रुक जाता है तथा ऊर्ध्ववात होता है अथवा मल मुंह के रास्ते निकलता है॥ ३॥

अथ मूत्रनिग्रहजमाह—**बस्तिमेहनयोः शूलं मूत्रकृच्छ्रं शिरोरुजा।**
विनामो वङ्क्षणानाहः स्याल्लिङ्गं मूत्रनिग्रहे॥४॥

मूत्र के वेग को रोकने से वस्ति और लिंग में शूल होता है और मूत्र कृच्छ्र रोग तथा सिर में दर्द हो जाती है (विनामः व्यथया शरीर नमने) दर्द के मारे शरीर झुक जाता है और वंक्षन में आनाह हो जाता है॥ ४॥

अथ जृम्भाविघातजमाह—

मन्यागलस्तम्भशिरोविकारा जृम्भोपघातात्पवनात्मकाः स्युः।
तथाऽक्षिनासावदनामयाश्च भवन्ति तीव्राः सह कर्णरोगैः॥ ५॥

जंभाई के वेग को रोकने से मन्या, गले का स्तम्भ, शिर के रोग तथा अन्य वायु रोग होते हैं और आंख, नाक, मुख तथा कान के रोग भी होते हैं॥ ५॥

अथाश्रुविघातजमाह—

आनन्दजं वाऽप्यथ शोकजं वा नेत्रोदकं प्राप्तममुञ्चतो हि।
शिरोगुरुत्वं नयनामयाश्च भवन्ति तीव्राः सह पीनसेन॥ ६॥

आनन्द से उत्पन्न हुये अथवा शोक से उत्पन्न हुए आंखों में आये हुए आंसुओं को रोकने से सिर भारी हो जाता है और भयंकर नेत्र रोग उत्पन्न हो जाते हैं तथा पीनस रोग हो जाता है॥ ६॥

अथ क्षवथु निरोधजमाह—मन्यास्तम्भः शिरःशूलमर्दितार्धावभेदकौ।
इन्द्रियाणां च दौर्बल्यं क्षवथोः स्याद्विधारणात् ॥७

छींक के वेग को रोकने से मन्यास्तम्भ हो जाता है, शिर में शूल हो जाता है और अर्दित रोग होता है तथा अर्धावभेदक रोग होता हैं। इन्द्रियें दुर्बल होती हैं॥ ७ ॥

अथोद्गारविधारणजमाह—

कण्ठास्यपूर्णत्वमतीव तोदः कूजश्च वायोरथ वा प्रवृत्तिः।
उद्गारवेगेऽभिहते भवन्ति घोरा विकाराः पवनप्रसूताः ॥८॥

डकार के वेग को रोकने से कण्ठ और मुख भरा हुवा सा रहता है। अत्यन्त तोद अर्थात् पीड़ा होती है। वायु पेट में शब्द करता है अथवा बाहिर निकलता है तथा वायु से होने वाले घोर विकार होते हैं॥ ६ ॥

अथ छर्दिनिग्रहजमाह—कण्डूकोठारुचिव्यङ्गशोथपाण्ड्वामयज्वराः।
कुष्ठहृल्लासवीसर्पाश्छर्दिनिग्रहजा गदाः ॥६॥

वमन के वेग को रोकने से खुजली, कोठ, अरुचि, व्यङ्ग, शोथ, पाण्डुरोग, ज्वर, कुष्ठरोग, हृल्लास तथा विसर्प रोग होते हैं॥ ६ ॥

अथ शुक्रविधारणजमाह—

मूत्राशये वै गुदमुष्कयोश्च शोफो रुजा मूत्रविनिग्रहश्च।
शुक्राश्मरी तत्स्रवणं भवेच्च ते ते विकाराभिहते च शुक्रे ॥१०॥

वीर्य के वेग को रोकने से मूत्राशय में सूजन होती है तथा गुदा और अण्डकोषों में सूजन हो जाती है और पीड़ा होती है तथा मूत्र रुक जाता है। शुक्राश्मरी रोग हो जाता है तथा वीर्य स्रवित होना शुरू हो जाता है॥ १० ॥

अथ क्षुधावरोधजमाह—

तन्द्राङ्गमर्दावरुचिः श्रमश्च क्षुधोऽभिघातात्कृशता च दृष्टेः ११॥

भूख के वेग को रोकने से तन्द्रा, अंगड़ाई, अरुचि, थकान तथा दृष्टि की कमी हो जाती है॥ ११ ॥

अथ तृष्णानिरोधजमाह—

कण्ठास्यशोषः श्रवणावरोधस्तृष्णाभिघाताद् हृदयव्यथा च १२

तृष्णा के वेग को रोकने से कण्ठ और मुख सूखता है। कानों की सुनने की शक्ति रुक जाती है और हृदय में पीड़ा होती है॥ १२ ॥

अथ श्वासावरोधजमाह—

श्रान्तस्य निश्वासविनिग्रहेण हृद्रोगमोहावथ वाऽपि गुल्मः १३॥

थका हुवा आदमी श्वास, निश्वास को रोके तो हृदय के रोग, मोह तथा गुल्म रोग हो जाते हैं॥ १३ ॥

अथ निद्रानिग्रहजमाह—

जृम्भाङ्गमर्दोऽक्षिशिरोतिजाड्यं निद्राविघातादथवाऽपि तन्द्रा ॥१४॥

नींद के वेग को रोकने से जंभाई, अंग टूटना, आंख और सिर में अति जड़ता, तथा तन्द्रा होती है ॥ १४ ॥ इति त्रयोदश ।

अथ रूक्षभोजनजनितविकारमाह—

वायुः कोष्ठानुगो रूक्षकषायकटुतिक्तकैः ।
भोजनैः कुपितः सद्य उदावर्तं करोति च ॥ १५ ॥

रूखे, कसैले, कटु और तिक्त भोजनों से कुपित हुवा २ कोष्ठ गत वायु शीघ्र ही उदावर्त रोग को करता है ॥ १५ ॥

अथ तस्य संप्राप्तिमाह—वातमूत्रपुरीषाश्रुकफमेदोवहांनि वै ।
स्रोतांस्युदावर्तयति पुरीषं चातिवर्तयेत् ॥ १६ ॥

वेगों को रोकने से वायु, मूत्र, मल, अश्रु, कफ और मेद इनको बहाने वाले स्रोतों को घेर लेता है और मल को (अतिवर्तयेत्) सुखा देता है ॥१६॥

ततो हृद्बस्तिशूलार्तो हृल्लासारतिपीडितः ।
वातमूत्रपुरीषाणि कृच्छ्रेण लभते नरः ॥ १७ ॥

इस से हृदय और बस्ति में शूल होता है । हृल्लास होता है और बेचैनी रहती है । वायु, मूत्र और मल कठिनता से निकलते हैं ॥ १७ ॥

श्वासकासप्रतिश्यायदाहमोहतृषाज्वरान् ।
वमिहिक्काशिरोरोगमनःश्रवणविभ्रमान् ॥
बहूनन्यांश्च लभते विकारान्वातकोपजान् ॥ १८ ॥

श्वास, कास, प्रतिश्याय, दाह, मोह, तृषा और ज्वर, वमन, हिक्का और शिरोरोग होते हैं । मन अस्थिर रहता है तथा श्रवणशक्ति कम हो जाती है और भी वायु के अनेक रोग होजाते हैं ॥ १८ ॥

अथासाध्यलक्षणमाह—तृष्णार्दितं परिक्लिष्टं क्षीणं शूलैरुपद्रुतम् ।
शकृद्वमन्तं मतिमानुदावर्तिनमुत्सृजेत् ॥ १ ॥

जो उदावर्त का रोगी अत्यन्त तृष्णा अनुभव करे, अत्यन्त क्षीण होगया हो और शूलग्रस्त हो । जिस के मुख में से मल निकल रहा हो ऐसे रोगी को असाध्य समझकर छोड़ देवे ॥ १ ॥ इत्युदावर्त निदानम् ।

अथ उदावर्तचिकित्सा ।

सर्वेष्वेतेषु भिषगा चोदावर्तेषु कृत्स्नशः ।
वायोः क्रिया विधातव्याः स्वमार्गप्रतिपत्तये ॥ १ ॥

इन सभी प्रकार के उदावर्तों मे वायु को अपने मार्ग में ले जाने के लिये वैद्य सब क्रियायें करे ॥ १ ॥

आस्थापनं मारुतजे स्निग्धस्विन्ने विशेषतः।
पुरीषजे तु कर्तव्यो विधिरानाहकोदितः॥ २॥

वात उदावर्त में स्निग्ध और स्विन्न कराये हुए रोगी को आस्थापन वस्ति देवे। और पुरीषज उदावर्त में आनाह रोग में कही हुई सब क्रिया करे॥ २॥

अथ सौवर्चलादिः—सौवर्चलाढ्यां मदिरां मूत्रे त्वभिहते पिबेत्।
एलां वाऽप्यथ मस्त्वन्नं क्षीरं वाऽथ वराम्बु वा॥१॥

मूत्रज उदावर्त में मदिरा में सोंचल नमक खूब मिलाकर पीवे। अथवा छोटी इलायची मदिरा में मिलाकर पीवे। अथवा दही के पानी के साथ अन्न खावे। अथवा दूध पीवे। अथवा त्रिफले का जल पीवे॥ १॥

अथोर्वारुबीजादियोगः—उर्वारुबीजं तोयेन पिबेद्वा लवणान्वितम्।
पञ्चमूलशृतं क्षीरं द्राक्षारसमथापि वा॥ १॥

ककड़ी के बीज जल में घोटकर नमक डालकर पीवे। अथवा पञ्चमूली से पकाया हुवा दूध पीवे। अथवा द्राक्षारस पीवे॥ १॥

अथ यवक्षारादियोगः—यवक्षारं सितायुक्तं पिबेद्वा मृद्विकारसैः।
वरिकूष्माण्डयोस्तोयं सितायुक्तं पिबेदथ॥ १॥

जौखार में खांड मिलाकर दाख के रस से पीवे। अथवा शतावर और पेठे के स्वरस में खांड मिलाकर पीवे॥ १॥

अथ मूषकादियोगः—मूषकस्य विशा लेपं बस्तेरुपरि वा चरेत्।
किंशुकानां प्रलेपो वा कवोष्णो मूत्ररोधहा॥१॥

चूहे की विष्ठा का लेप वस्ति के ऊपर कर देवे। अथवा केसू अर्थात् ढाक के फूलों को कुछ गरम करके वस्ति पर लेप कर दे। इससे मूत्रावरोध रोग नष्ट होता है॥ १॥

पिष्ट्वा श्वदंष्ट्राफलमूषिकाविडैरुर्वारुबीजानि सकाञ्जिकानि।
आलिप्यमानानि समानि बस्तौ मूत्रस्य निष्यन्दकराणि सद्यः।
अत्र सर्वं प्रयुञ्जीत मूत्रकृच्छ्राश्मरीविधिम्॥ २॥

गोखरु, चूहे की बीट, ककड़ी के बीज इनको समभाग लेकर कांजी से पीस कर वस्ति के ऊपर लेप करे तो तुरन्त ही मूत्र आ जाता है। इस मूत्रावरोध रोग में मूत्र कृच्छ्र और अश्मरी नाशक सभी उपाय करने चाहियें॥२॥ इति मूत्रावरोधेयोगाः।

अथावशेषाणां चिकित्सा।

स्नेहस्वेदैरुदावर्तं जृम्भाजं समुपाचरेत्।
अश्रुमोक्षोऽश्रुजे कार्यः स्निग्धस्विन्नस्य देहिनः॥ १॥

जंभाई के वेग को रोकने से हुए २ उदावर्त रोग का स्नेह और स्वेद देकर चिकित्सा करे। आंसू रोकने से हुए २ उदावर्त रोग में रोगी को स्नेहन और

स्वेदन कराके आंसू निकलवाने का यत्न करना चाहिये ॥ १ ॥

मरीचाद्यञ्जनैर्धूमैरादित्याद्यवलोकनैः ।
क्षवजे क्षवयन्त्रेण घ्राणस्थेनाऽऽनयेत्क्षवम् ॥ २ ॥

मरीचादि का अञ्जन आंखों में लगाने से, और धुयें में बैठने से, सूर्य को देखने से आंसू निकाल देवे । छींक को रोकने से हुए २ उदावर्त रोग में क्षव यन्त्र को नाक में डालकर छींक लावे अथवा तृणादि डालकर छींके लावे ॥२॥

उद्गारजे क्रमोपेतं स्नैहिकं धूममाचरेत् ।
भक्षयेद्रुचकं सार्द्रं खण्डं वा मथितान्वितम् ॥ ३ ॥

उद्गारज उदावर्त में स्नेह युक्त धूम को पीवे तथा नमक, अदरक खांड मिला कर खावे । अथवा दही के मठे से इनको खावे ॥ ३ ॥

वम्या वान्तं यथादोषं नस्यस्नेहादिभिर्जयेत् ।
बस्तिशुद्धिकरैः सिद्धं चतुर्गुणजलं पयः ॥ ४ ॥

वमन के वेग को रोकने से हुवे २ उदावर्त में दोषानुसार वमन करावे और नस्य दे और स्नेहादि कर्म करावे । वस्ति को शुद्ध करने वाले द्रव्यों से पकाया हुवा दूध चौगुना पानी डालकर ॥४॥

आवारिनाशात्कथितं पीतवंतं प्रकामतः ।
रमयेयुः प्रिया नार्यः शुक्रोदावर्तिनं नरम् ॥ ५ ॥

पानी के जल जाने तक पकावे इस दूध को पिलाने के बाद रोगी को प्रिय नारियों से रमण करावे तो शुक्रोदावर्त रोग नष्ट होता है ॥ ५ ॥

तस्याभ्यङ्गोऽवगाहश्च मदिराश्चरणायुधाः ।
शालिः पयो निरूहाश्च हितं मैथुनमेव च ॥ ६ ॥

इसको तेलों की मालिश करावे । नदी आदि में प्रवेश कराकर स्नान करना, मदिरा पिलाना, कुक्कुट का मांस खिलना, शालि चावल और दूध पिलाना, निरूह वस्ति कराना तथा मैथुन कराना ये सब क्रियायें शुक्रादावर्त वाले को हितकारी हैं ॥ ६ ॥

क्षुद्विघाते हितं स्निग्धं रुच्यमल्पं च भोजनम् ।
तृषाघाते पिबेन्मद्यं यवागूं स्वादुशीतलाम् ॥ ७ ॥

क्षुधाविघातज उदावर्त में स्निग्ध, रुचिकारक और थोड़ा भोजन कराना चाहिये । तृषावघातज उदावर्त में मधुर और शीतल मद्य और यवागु पीवे ॥७॥

रसेनाद्यात्तु विश्रान्तः श्रमश्वासार्दितो नरः ।
निद्राघाते पिबेद् दुग्धं माहिषं रजनीमुखे ॥ ८ ॥

श्रम जनित श्वासावरोध से हुए २ उदावर्त का थका हुवा मांसरस पीवे । निद्राघातज उदावर्त में रात के आरम्भ में भैंस का दूध पीवे ॥ ८ ॥

तिलतैलेन संमृज्य भूतले शयनं चरेत् ।
उदावर्तिनमभ्यक्तं स्निग्धगात्रमुपाचरेत् ।
वर्तिकास्थापनस्वेदबस्तिरेचनकर्मणा ॥ १ ॥

तिल के तेल से शरीर पर मालिश करके धरती पर सोवे । मालिश किये हुए स्निग्ध गात्र वाले उदावर्त रोगी को फल वर्तियें दे। आस्थापन, स्वेद, वस्ति तथा विरेचन देकर चिकित्सा करे ॥ १ ॥

अथ सामान्यविधिः ।

अथ श्यामादिकषायो वृन्दात्—

श्यामा दन्ती द्रवन्ती स्नुङ्महाश्यामाऽमृता त्रिवृत् ।
सप्तला शङ्खिनी श्वेता राजवृक्षः सबिल्वकः ॥ १ ॥

श्यामलता अर्थात् कृष्ण शारिवा, बड़ी दन्तीमूल, छोटीदन्ती, थोहर, महाश्यामालता, गिलोय, त्रिवि, (सप्तला स्नुही भेदे, आरण्य रीठा करञ्जे बनरीठा) विशेष प्रकार की थोहर, शंखपुष्पी, श्वेत शारिवा, अमलतास और बिल ॥१॥

कंपिल्लकं करञ्जश्च हेमक्षीरीत्ययं गणः ।
सर्पिस्तैलरजःक्वाथकल्केष्वन्यतमेषु च ॥
उदावर्तोदरानाहविषगुल्मविनाशनः ॥ २ ॥

कमीला, करञ्जुवा और सुवर्ण क्षीरी अथवा सत्यानासी इनका गण लेकर इससे घृतपाक करे अथवा तेल पाक करे । चूर्ण बनावे, क्वाथ करे । इन सब से उदावर्त, उदररोग, आनाह रोग, विषरोग तथा गुल्म रोग नष्ट होता है ॥ २ ॥

अथ वृन्दाद्वाट्यादियूषः—वाट्यायूषेण पिप्पल्या मूलकानां रसेन वा ।
भुक्त्वा स्निग्धमुदावर्तवातगुल्माद्विमुच्यते ॥१॥

खिरेंटी के यूष से अथवा पिप्पली और मूलियों के रस से स्निग्ध भोजन करके उदावर्त और वातगुल्म से रोगी छूट जाता है ॥ १ ॥

अथ वाट्यादिः—वाट्यक्षीररसैः सेव्यं यच्च वातानुलोमनम् ।
वातघ्नैर्लवणाद्यैश्च रसाद्यैश्चान्नमाचरेत् ॥ १ ॥

खिरेंटी से पके हुए दूध अथवा खिरेंटी के रस से वात को अनुलोमन करने वाले पदार्थ सेवन करे । वातनाशक अन्य भोजनों से लवणादि के सेवन से तथा मांस रस आदि से मिला करके अन्न को सेवन करे तो उदावर्त नाश होता है ॥ १ ॥

अथ चूर्णानि ।

अथ हरीतक्यादिचूर्णम्—हरीतकी यवक्षारः पीलूनि त्रिवृता तथा ।
घृतैश्चूर्णं त्विदं पेयमुदावर्तप्रशान्तये ॥ १ ॥

हरड़, जौखार, पीलू, त्रिवि इनको समभाग लेकर चूर्ण करके घी के साथ

से उदावर्त नष्ट होता है ॥ १ ॥

अथ द्विरुत्तरं चूर्णम्—हिङ्गुकुष्ठवचास्वर्जिबिडं चेति द्विरुत्तरम्।
पीतं मद्येन तच्चूर्णमुदावर्तहरं परम् ॥१॥

हींग १ भाग और कूठ २ भाग, वच ४ भाग, सज्जी ८ भाग, बिडनमक १६ भाग इन सबका चूर्ण करके मद्य के साथ पीने से उदावर्त रोग नष्ट होता है॥१॥

अथ नाराचचूर्णम्—खण्डपलं त्रिवृतासममुपकुल्याकर्षचूर्णितं सूक्ष्मम्।
प्राग्भोजनस्य समधु बिडालपदकं लिहेत्प्रातः ॥१॥

खांड १ पल, त्रिवि १ पल, पिप्पली १ कर्ष सबका चूर्णकरके शहद के साथ मिलाकर भोजन से पहिले प्रातःकाल १ कर्ष भर खावे ॥ २ ॥

एतद्गाढपुरीषे पित्ते कफे च विनियोज्यम्।
स्वादुर्नृपयोग्योऽयं चूर्णो नाराचको नाम ॥ २ ॥

जब मल गाढा हो तब उसे देने से मल पतला हो जाता है। पित्त तथा कफ में भी इस चूर्ण को देना चाहिये। यह नाराच चूर्ण स्वादु और राजाओं के योग्य है ॥ २ ॥

हिङ्गु त्रिगुणसैन्धवं तस्माच्च शुद्धतैलमैरण्डम्।
तत्त्रिगुणरसोनरसं गुल्मोदावर्तशूलघ्नम् ॥ ३ ॥

हींग १ भाग, सेंधानमक ३ भाग, एरण्ड का तैल ६ भाग, लहसुन का रस २७ भाग इन सबको मिलाकर उचित मात्रा में पीने से गुल्म और उदावर्त का शूल नष्ट होता है ॥ ३ ॥

अथ प्रलेपः—वल्मीकमृत्करञ्जस्य त्वङ्मूलफलपल्लवम्।
सिद्धार्थं चेति पिष्टानां मूत्रेणाऽऽलेपनं हितम् ॥
उदावर्तेषु सर्वेषु सम्यग्वातानुलोमनम् ॥ १ ॥

बांबी की मिट्टी, करञ्ज की छाल, जड़, फल और पत्ते, सफेद सरसों इन सब को गोमूत्र के साथ पीसकर लेप करने से उदावर्त में लाभ होता है। सब उदावर्त रोगों में वात को अनुलोमन करने वाली चिकित्सा करनी चाहिये ॥ १ ॥

अथ फलवर्त्तयः।

तत्र मदनादिः—मदनं पिप्पलीकुष्ठं वचा गौराश्च सर्षपाः।
गुडक्षीरसमायुक्ता फलवर्तिः प्रशस्यते ॥ १ ॥

मैनफल, पीपली, कूठ और वच, सफेद सरसों इन सब को समभाग लेकर गुड़ और दूध से मिलाकर बत्ती बनाई जावे। यह फलवर्ति उदावर्त रोग में श्रेष्ठ है॥१॥

अथागारधूमादिः—अगारधूमः पिप्पल्यो मदनं राजसर्षपाः।
गोमूत्रपिष्टा सगुडा फलवर्तिः प्रशस्यते ॥ १ ॥

रसोई घर का धुंआं, पिप्पली, मैनफल, काली सरसों इन सब को गुड़ से मिलाकर गोमूत्र में पीसकर बत्ती बनावे। ये फलवर्तियें उदावर्त रोगों में श्रेष्ठ है॥१

अथ हिङ्ग्वादिः—हिंगुमाक्षिकसिन्धूत्थैः पक्त्वा वर्तिं सुवर्तिताम्।
घृताभ्यक्तां गुदे दद्यादुदावर्तविनाशिनीम् ॥ १ ॥

हींग, शहद और नमक इन को पका कर के सुन्दर गोलाकार लंबी बत्ती बनावे। इस को घी से चिकना कर गुदा में देने से उदावर्तरोग नष्ट होता है (हींग ४ माशा, सेंधा नमक १ कर्ष, शहद १ पल इस प्रकार से लेने का व्यवहार है परन्तु अन्य वैद्य हींग और सेंधा नमक बराबर लेकर बत्ती बनाने लायक शहद डालकर गुड़पाक के समान इस का पाक कर के बत्ती बनाते हैं) ॥ १ ॥ इति फलवर्तयः ॥

अथोदयमार्तण्डो रसः—हिङ्गूलं जयपालटङ्कणविषाण्यन्त्यार्धभागोत्तरं
सर्वं खल्वतले विमर्द्य मतिमान्गुञ्जाद्वयं वै ददेत्।
मार्तण्डोदयको ज्वरादिसहिते यः सोदराध्मानके
पाण्ड्वाजीर्णगदेऽनुपानवशतः पथ्यं च तक्रौदनम् १

शोधित विष १ भाग, शुद्ध सुहागा $1\frac{1}{2}$ भाग, शुद्ध जमालगोटा २ भाग, शुद्ध हिंगुल $2\frac{1}{2}$ भाग इन सब को खरल कर के रक्खे। इस मार्तण्डोदय रस को २ रत्तीभर देवे। इस से ज्वरादि सहित उदराध्मानरोग नष्ट होता है। पाण्डुरोग, अजीर्णरोग नष्ट होता है। इसे भिन्न २ अनुपानों से देना चाहिये। पथ्य के लिये तक्र और चावल देने चाहियें ॥ १ ॥

व्योषेणाऽऽर्द्ररसेन तत्र सितया युक्तो ज्वरे दारुणे
मान्द्ये गुल्मकफानले च पवने शूले च शोफोदरे।
वातास्रे स्वरवर्णकुष्ठगुदजान्रोगानशेषाञ्जयेत् ॥ २ ॥

त्रिकुटा और अदरक का रस और खांड मिलाकर इस रस को देवें तो भयंकर ज्वर, अग्निमान्द्य, गुल्मरोग, कफ और पित्त के रोग, वायु के रोग, शूल रोग, शोथ, उदररोग, वातरक्त, स्वररोग, वर्णरोग, कुष्ठरोग, अर्शरोग तथा अन्य सम्पूर्ण रोगों को भी नाश करता है ॥ २ ॥

अथ नाराचरसः—जेपालेन समैः सूतव्योषटङ्कणगन्धकैः।
नाराचः स्याद्रसो ह्येष माषः सर्पिःसितायुतः।
हन्त्युदावर्तमानाहमुदराणि च गुल्मकम् ॥ १ ॥

शुद्ध जमालगोटा १ भाग, पारा १ भाग, सोंठ, मिरच, पीपल प्रत्येक का चूर्ण एक २ भाग, शुद्ध सुहागा १ भाग, गन्धक १ भाग, विधिपूर्वक खरल करके रक्खे। इस रस को माशाभर (दो रत्ति मात्रा पर्याप्त है) शहद और खांड मिलाकर देनेसे उदावर्त,आनाह,उदर रोग और गुल्म रोग नष्ट होता है॥१॥ इत्युदावर्तचिकित्सा।

इति हरद्वारीय गुरुकुलविश्वविद्यालयस्नातकेन श्रीविद्याधरविद्यालंकारेण लवपुरीय श्रीमद्दयानन्दायुर्वेदमहाविद्यालयीय वैद्यकविराजोपाधिधारिणा राजयक्ष्म-

चिकित्सकेन जलचिकित्साविशेषज्ञेन रसेन्द्रसारसंग्रहटीकाकर्त्रा कृतायां योगरत्नाकरस्य रत्नगर्भानाम्निटीकायामुदावर्त्त चिकित्सा समाप्ता।

अथाऽऽनाहनिदानम्।

आमं शकृद्वा निचितं क्रमेण भूयो विबद्धं विगुणानिलेन।
प्रवर्तमान न यथास्वमेनं विकारमानाहमुदाहरन्ति ॥ १॥

आम अथवा मल इकट्ठा हुवा २ वायु के विपरीत होने से क्रमशः और भी कठोर हुआ २ यथोचित मार्ग से न निकले और कोष्ठ में ही पड़ा रहे। इस विकार को आनाह कहते हैं ॥ १ ॥

अथाऽऽमजमानाहमाह—

तस्मिन्भवत्यामसमुद्भवे तु तृष्णाप्रतिश्यायशिरोविदाहाः।
आमाशये शूलमथो गुरुत्वं हृत्स्तम्भनोद्गारविघातनं च ॥ २ ॥

आमज आनाह के होने पर तृष्णा, प्रतिश्याय, सिर का जलना, आमाशय में शूल होना और गुरुता, हृदय का स्तम्भन और डकार न आना ये सब लक्षण होते हैं ॥ २ ॥

अथ शकृत्संचयजमाह—

स्तम्भः कटीपृष्ठपुरीषमूत्रे शूलोऽथ मूर्च्छा शकृतो वमिश्च।
श्वासश्च पक्वाशयजे भवन्ति तथाऽलसोक्तानि च लक्षणानि ॥ ३॥

शरीर का स्तम्भ हो जाना, कमर और पीठ में शूल होना, मल और मूत्र करने में शूल होना, मूर्च्छा होनी और वमन के रास्ते मल का निकलना और श्वास होना ये सब लक्षण मल के पक्वाशय में होने पर होते हैं। तथा अलस रोग के भी ये ही सब लक्षण होते हैं ॥ ३ ॥

उदावर्तिनमप्येनमानाहिनमथापि वा।
तृष्णोपद्रवसंयुक्तं तं त्यजेद्भिषजां वरः ॥ ४ ॥

इस उदावर्त रोग वाले तथा आनाह रोग वाले को यदि प्यास लगती हो तो वैद्य त्याग देवे अर्थात् वह असाध्य है ॥ ४ ॥

अथाऽऽनाहचिकित्सा।

आनाहेऽपि प्रयुञ्जीत् उदावर्तहरीं क्रियाम्।

आनाह रोग में भी उदावर्त रोग को नाश करने वाली क्रिया करनी चाहिये।

तत्राप्यत्र विशेषमाह—**त्रिवृद्धरीतकीश्यामाः स्नुहीक्षीरेण भावयेत्।**
वटिका मूत्रपीतास्ताः श्रेष्ठास्त्वानाहभेदिकाः॥१॥

त्रिवि, हरड़, श्यामालता इनको समभाग ले चूर्ण करके थोहर के दूध में भावना देकर गोलियें बनावे। इन गोलियों को गोमूत्र के साथ पीवें तो यह आनाह रोग को भेदन करने में समर्थ होती है ॥ १ ॥

हिङ्गूग्रगन्धाबिडशुण्ठ्यजाजीहरीतकीपुष्करमूलकुष्ठम् ।
भागोत्तरं चूर्णितमेतदिष्टं गुल्मोदरानाहविषूचिकासु ॥ १ ॥

हींग, वच, विडनमक, सोंठ, सफेद जीरा, हरड़, पोहकरमूल और कूठ इन में से क्रमशः एक २ भाग बढ़ाकर सब द्रव्य लेवें अर्थात् हींग १ भाग, वच २ विडनमक ३ भाग इत्यादि । सब पदार्थों का चूर्ण करके रक्खें । इस चूर्ण को खाने से गुल्मरोग, उदररोग, आनाहरोग और विषूचिका रोग नष्ट होते हैं ॥१॥

वचाभयाचित्रकयावशूकान्सपिप्पलीकातिविषान् सकुष्ठान् ।
उष्णाम्बुनाऽऽनाहविमूढवातान्पीत्वा जयेदाशु रसौदनाशी ॥२॥

वच, हरड़, चीता, यवक्षार, पिप्पली, अतीस और कूठ इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर चूर्ण करके गरम जल से पीवें तो आनाह-रोग तथा विमूढ वात-रोग शीघ्र ही नष्ट होते हैं । इसके साथ मांसरस और चावल खाना चाहिये ॥२॥

अथ राढधूमादिवर्तिः—राढधूमबिडव्योषगुडमूत्रविपाचिता ।
गुदेऽङ्गुष्ठसमा वर्तिर्विधेयाऽऽनाहशूलनुत् ॥ १ ॥

राढफल, रसोई घर का धुंआ, विडलवण, सोंठ, मिरच, पीपल, गुड और गोमूत्र इन सबको यथाविधि एकत्र कर अग्नि पर पकावें । फिर इसकी १ अंगूठे भर मोटी बत्ती बनाकर गुदा में देवे । इससे आनाह शूल नष्ट होता है ॥ १ ॥

विपाच्य मूत्राम्लरसेन दन्तीपिण्डीतकृष्णाबिडकृष्णधूमैः ।
वर्तिं कराङ्गुष्ठनिभां घृताक्तां गुदे रुजानाहहरीं विदध्यात् ॥२॥

दन्ती की जड़, काला मैनफल, पिप्पली, विडनमक, काली सरसों और रसोई घर का धुंआ । इन सबको समभाग लेकर गोमूत्र और कांजी में मिलाकर पकावें । इसकी हाथ के अंगूठे के बराबर मोटी बत्ती बनावे । इसे घी से मिलाकर गुदा में देने से पीड़ा और आनाह रोग दूर होता है ॥ २ ॥ इत्यानाहचिकित्सा ॥

अथ पथ्यापथ्यम्—विष्टम्भीनि विरुद्धानि कषायाणि गुरूणि च ।
उदावर्ते प्रयत्नेन वर्जयेत्सततं नरः ॥ १ ॥

विष्टम्भकारक पदार्थ, विरुद्ध भोजन, कसैले रस और गुरु पदार्थ इनको उदावर्त रोगी निरन्तर यत्न से त्याग देवै ॥ १ ॥

उदावर्ते हितं सर्वं पाचनं लङ्घनं तथा ।
आनाहे तु यथायोग्यं सेवयेन्मतिमान्नरः ॥ २ ॥

उदावर्त रोग में सब प्रकार के पाचन द्रव्य तथा लंघन करना लाभदायक है । और आनाह रोग में यथायोग्य दोषानुसार पथ्य आदि बुद्धिमान् मनुष्य को सेवन कराना चाहिये ॥ २ ॥ इति पथ्यापथ्यम् ।

इति हरद्वारीय गुरुकुलविश्वविद्यालयस्नातकेनश्रीविद्याधरेणविद्यालंकारेण लवपुरीय श्रीमद्दयानन्दायुर्वेदमहाविद्यालयीय वैद्यकविराजोपाधिधारिणा राजदत्तमजल-

चिकित्साविशेषज्ञेन रसेन्द्रसारसंग्रहटीकाकर्त्रा कृतायां योगरत्नाकरस्य रत्नगर्भानाम्नि-टीकायामानाहरोगचिकित्सा समाप्ता ।

अथातो गुल्मनिदानं व्याख्यास्यामः ।

अथ तस्य संप्राप्तिमाह—दुष्टा वातादयोऽत्यर्थं मिथ्याहारविहारतः ।
कुर्वन्ति पञ्चधा गुल्मं कोष्ठान्तर्ग्रन्थिरूपिणम् ॥ १ ॥

मिथ्या अहार और विहार से अत्यन्त दूषित हुये २ वातादि दोष पेट के अन्दर १ गांठ पैदा कर देते हैं । इसे गुल्म कहते हैं । यह पांच प्रकार का होता है ॥ १ ॥

तेषां स्थानान्याह—तस्य पञ्चविधं स्थानं पार्श्वहृन्नाभिबस्तयः ।

उन का पांच प्रकार का स्थान होता है । दोनों ओर की पसलियें, हृदय, नाभि तथा बस्ति ॥ १ ॥

तस्य लक्षणमाह—हृन्नाभ्योरन्तरे ग्रन्थिः संचारी यदि वाऽचलः ।
वृत्तश्चयापचयवान्स गुल्म इति कीर्तितः ॥ २ ॥

हृदय और नाभि के बीच में जो गांठ चलायमान हो, अथवा अचल हो, गोल हो, बढ़ती घटती हो उसे गुल्मरोग कहते हैं ॥ २ ॥

विशेषलक्षणं चरके—तृष्णाज्वरपरीतश्च दाहस्वेदाग्निमार्दवैः ।
गुल्मिनामरुचौ चापि रक्तमेवावसेचयेत् ॥ ३ ॥

रोगी तृष्णा और ज्वर से युक्त हो, दाह हो, स्वेद हो तथा अग्निमन्दता हो और अरुचि हो तो गुल्म रोगियों का रक्त निकलवावे ॥ ३ ॥

भट्टारकहरिश्चन्द्रः—स्त्रीणामार्तवजो गुल्मो न पुंसामुपजायते ।
अन्यस्त्वसृग्भवो गुल्मः स्त्रीणां पुंसां च जायते ॥४॥

स्त्रियों को एक आर्तव से पैदा हुआ २ रक्त गल्म होता है वह पुरुषों को नहीं होता । इस के अतिरिक्त खून से पैदा होनेवाला एक और रक्तगुल्म होता है जो स्त्री पुरुष दोनों को होता है ॥ ४ ॥

निरूढमूलप्रभवो हि कोष्ठे स्थितः स्वतन्त्रः परसंश्रयो वा ।
स्पर्शोपलब्धः परिपिण्डितत्वाद्गुल्मो यथादोषमुपैति नाम ॥ ५ ॥

इस की जड़ गहरी होती है । यह कोष्ठ में स्वतन्त्र रहता है या किसी स्थान पर आश्रय कर के रहता है । गोल होता है इस कारण छूने से स्पष्ट पता लग जाता है । इस गुल्म के दोषानुसार नाम रक्खे गये हैं ॥ ५ ॥

स व्यस्तैर्जायते दोषैः समस्तैरपि चोच्छ्रितैः ।
पुरुषाणां तथा स्त्रीणां ज्ञेयो रक्तेन चापरः ॥ ६ ॥

यह गुल्मरोग पृथक् २ वात, पित्त, कफ के बिगड़ने से वातिक गुल्म, पैत्तिक

गुल्म और कफज गुल्म कहाता है । तथा तीनों दोषों के बिगड़ने से चौथा सान्निपातिक गुल्म कहाता है । और एक रक्तगुल्म होता है जो पुरुष स्त्री दोनों को होता है (स्त्रियों को आर्तव जन्य रक्तगुल्म भी होता है) ॥ ६ ॥

तस्य पूर्वरूपमाह—उद्गारबाहुल्यपुरीषबन्धतृप्त्यक्षमत्वान्त्रविकूजनानि।
आटोपमाध्मानमपक्तिशक्तिरासन्नगुल्मस्य वदन्ति चिह्नम् ॥७॥

जब गुल्मरोग होना हो उस से पहिले आगे लिखे पूर्व रूप होते हैं । डकार बहुत आते हैं । मल बंध जाता है । तृप्ति रहती है और शरीर अशक्त रहता है आंतों में कूं कूं शब्द होता है । आटोप अर्थात् गुड़गुड़ाहट होती है । आध्मान होता है । और भोजन को पचाने की शक्ति नहीं रहती ॥ ७ ॥

सर्वगुल्मानां सामान्यलक्षणमाह—

अरुचिः कृच्छ्रविण्मूत्रं वातान्त्रप्रतिकूजनम् ।
आनाहं चोर्ध्ववातत्व सर्वगुल्मेषु लक्षयेत् ॥ ८ ॥

भोजन में अरुचि होना, कठिनता से मलमूत्र निकलना, वायु का आंतो में शब्द करना, आनाह होना और ऊर्ध्ववात होना ये लक्षण सभी प्रकार के गुल्मरोगों में होते हैं ॥ ८ ॥

अथ वातजमाह—रूक्षान्नपानं विषमातिमात्रं विचेष्टनं वेगविनिग्रहश्च ।
शोकोऽभिघातोऽतिमलक्षयश्च निरन्नता चानिलगुल्महेतुः ९॥

रूखे अन्न खाना पीना, विषम भोजन करना, अतिमात्र भोजन करना, अधिक घूमना फिरना अथवा अन्य चेष्टायें करना, मलमूत्रादि के वेगों को रोकना, शोक में रहना, किसी चोट आदि के लगने से, मल के अत्यन्त क्षीण हो जाने से अन्न सर्वथा न खाने से वातिक गुल्म की उत्पत्ति होती है ॥ ९ ॥

यः स्थानसंस्थानरुजाविकल्पं विड्वातसङ्गं गलवक्त्रशोषम् ।
श्यावारुणत्वं शिशिरज्वरं च हृत्कुक्षिपार्श्वांसशिरोरुजं च ॥१०॥

जिस की पीड़ा कभी कहीं हो और कभी कहीं हो, कभी अधिक प्रतीत हो, कभी कम प्रतीत होवे । जिस से मल और अपानवायु निकलनी बंद हो जाये । गला और मुंह सूख जाये । सांवला तथा लालरंग का गुल्मस्थान दिखाई देवे । शीत लगकर ज्वर आता हो । हृदय, कुक्षि, पसलियें, कंधे तथा शिर में पीड़ा रहती हो ॥ १० ॥

करोति जीर्णेऽभ्यधिकं प्रकोपं भुक्ते मृदुत्वं समुपैति यश्च ।
वातात्स गुल्मो न च तत्र रूक्षं कषायतिक्तं कटु चोपशेते ॥११॥

भोजन के पचने के बाद जो अधिक पीड़ा देने लगे । और खाना खाते ही जो कोमल प्रतीत होवे । उस गुल्म को वातिक गुल्म समझो । इस वातिक गुल्म में रूखा, कसैला, कड़वा तथा कटु पथ्यादि दें तो यह गुल्म शान्त नहीं होता

प्रत्युत पीड़ा बढ़ जाती है ॥ ११ ॥

पैत्तिकमाह—

कट्वम्लतीक्ष्णोष्णविदाहिरूक्षक्रोधातिमद्यार्कहुताशसेवा ।
आमाभिघातो रुधिरं च दुष्टं पित्तस्य गुल्मस्य निमित्तमुक्तम् १२

चरपरे, अम्ल, तीक्ष्ण, उष्ण, विदाही, रूक्ष भोजनादि से, क्रोध से तथा अत्यन्त मद्य पीने से, धूप में अत्यन्त फिरने से तथा अग्नि के समीप अत्यधिक बैठने से, विदग्धाजीर्ण जन्य आमरस से, अभिघात से या स्वयं रुधिर के दूषित होजाने से पित्त का गुल्म होता है ॥ १२ ॥

ज्वरः पिपासा वदनाङ्गरागः शूलं महज्जीर्यति भोजने च ।
स्वेदो विदाहो व्रणवच्च गुल्मः स्पर्शासहः पैत्तिकगुल्मरूपम् ॥१३॥

इस पैत्तिक गुल्म में ज्वर होता है, प्यास लगती है, मुंह तथा अंगों का लाल रंग होजाता है । भोजन के पचने के समय महान शूल होता है । स्वेद होता है तथा विदाह होता है, तथा व्रणों के समान गुल्म भी स्पर्श को सह नहीं सकता । ये सभी पैत्तिकगुल्म के लक्षण हैं ॥ १३ ॥

अथ श्लैष्मिकमाह—

शीतं गुरु स्निग्धमचेष्टनं च संपूरणं प्रस्वपनं दिवा च ।
गुल्मस्य हेतुः कफसंभवस्य सर्वश्च दुष्टो निचयात्मकस्य ॥ १४ ॥

शीतल पदार्थों के अधिक सेवन करने से, भारी पदार्थों के अधिक सेवन करने से, स्निग्ध पदार्थों के अति सेवन से । चेष्टा आदि के न करने से, शरीर को हर समय तृप्त रखने से, तथा दिन में सोने से, तथा सभी प्रकार के दूषित कफादि के कोष्ठ में एकत्र हो जाने से कफजगुल्म होजाता है ॥ १४ ॥

स्तैमित्यशीतज्वरगात्रसादहृल्लासकासारुचिगौरवाणि ।
शैत्यं रुगल्पा कठिनोन्नतत्वं गुल्मस्य रूपाणि कफात्मकस्य ॥१५॥

कफजगुल्म में शरीर गीले कपड़े से लिपटा हुआ सा प्रतीत होता है, शीत लगकर ज्वर आता है, गात्र सन्न होजाते हैं, हृल्लास होता है, कास तथा अरुचि होती है, शरीर में गौरव रहता है । शरीर शीतल रहता है, मन्द२ वेदना होती है, गुल्म कठिन तथा उठा हुआ प्रतीत होता है ॥ १५ ॥

द्वंद्वत्रिदोषजेषु हेतुलक्षणनिर्देशार्थमाह—

निमित्तलिङ्गान्युपलभ्य गुल्मे द्विदोषजे दोषबलाबलं च ।
व्यामिश्रलिङ्गानपरांस्तु गुल्मांस्त्रीनादिशेदौषधकल्पनार्थम् ॥१६॥

द्विदोषज गुल्मों में गुल्म करनेवाले हेतुओं के चिन्ह देखकर तथा दोषों का बलाबल देखकर । अन्य मिश्रित लक्षणोंवाले तीनों द्वन्द्वजगुल्मों को औषध करने के लिये निश्चय करे । अर्थात् अपने २ चिन्हों से वात पित्तजगुल्म, वात-

कफजगुल्म तथा पित्तकफजगुल्म का निश्चय करना चाहिये। यह द्वन्द्वजगुल्म का निर्देश औषध करने में सुगमता हो इसलिये है ॥ १६ ॥

अथ त्रिदोषजस्यासाध्यत्वमाह—

महारुजं दाहपरीतमश्मवद्घनोन्नतं शीघ्रविदाहि दारुणम्।
मनःशरीराग्निबलापहारिणं त्रिदोषजं गुल्ममसाध्यमादिशेत् ॥१७॥

अत्यन्त पीड़ा करने वाले, दाह से युक्त, पत्थर के समान ठोस और उठे हुए, शीघ्र विदाह करन वाले, भयंकर, मन शरीर और अग्नि के बल को नष्ट करने वाले, त्रिदोष से उत्पन्न हुए २ गुल्म को असाध्य समझना चाहिये ॥१७॥

अथ स्त्रीणां रक्तगुल्मस्य संप्राप्तिमाह—

नवप्रसूताऽहितभोजना या या चाऽऽमगर्भं विसृजेदृतौ वा।
वायुर्हि तस्याः परिगृह्य रक्तं करोति गुल्मं सरुजं सदाहम् ॥१८॥

जिस स्त्री को नई २ सन्तान हुई हो और अहित भोजन करती हो, और जिस स्त्री का कच्चा गर्भ गिर गया हो, उस स्त्री के रक्त को ऋतुकाल में वायु ग्रहण करके रक्तगुल्म उत्पन्न कर देता है। उसमें पीड़ा तथा दाह होता है ॥१८॥

उक्तं चरके—**ऋतावनाहारभयातपेन विरूक्षणैर्वेगविधारणैश्च।**
संस्तम्भनोल्लेखनयोनिदोषैर्गुल्मः स्त्रिया रक्तभवोऽभ्युपैति ॥१९॥

ऋतुकाल में भोजन न करने से, भय से तथा धूप सेवन करने से, अति रूक्ष भोजनों से, वेगों को धारण करने से, संस्तम्भन और उल्लेखन द्रव्यों के सेवन करने से, रक्तज गुल्म स्त्री को हो जाता है ॥ १९ ॥

तस्य लिङ्गमाह—

पित्तस्य गुल्मेन समानलिङ्गं विशेषणं चाप्यपरं निबोध।
यः स्पन्दते पिण्डित एव नाङ्गैश्चिरात्सशूलः समगर्भलिङ्गः।
स रौधिरः स्त्रीभव एव गुल्मो मासे व्यतीते दशमे चिकित्स्यः॥२०

रक्तगुल्म में पित्तज गुल्म के सभी लक्षण प्रायः होते हैं, विशेष करके रक्तज गुल्म गोला सा होकर स्पन्दन करता अर्थात् फड़कता रहता है परन्तु गर्भ के बच्चे के समान उसके अंग नहीं होते, देर के बाद उसमें शूल होने लगता है तथा गर्भ के समान उसमें अन्य चिन्ह भी होते हैं (अर्थात् हरमास गर्भ के समान बढ़ता रहता है तथा माता को वमन अरुचि आदि दूसरे मास से आरम्भ हो जाते हैं) यह रक्तगुल्म केवल स्त्रियों को ही होता है। इसकी दस महीने के बाद चिकित्सा करनी चाहिये ॥ २० ॥

असाध्यलक्षणमाह—**संचितः क्रमशो गुल्मो महावास्तुपरिग्रहः।**
कृतशूलः शिरानद्धो यदा कूर्म इवोन्नतः ॥ २१ ॥

क्रमशः बढ़ा हुआ यह गुल्म, बड़े भारी आकार वाला हो जाये, शूल करता

हो, पेट पर शिरायें अर्थात् नसें फैल गई हों, तथा कछुवे के समान उठा हुआ हो

दौर्बल्यारुचिहृल्लासकासवम्यरतिज्वरैः।
तृष्णातन्द्राप्रतिश्यायैर्युज्यते स न सिध्यति ॥ २२ ॥

दुर्बलता हो, अरुचि हो, हृल्लास हो, खांसी, वमन तथा बेचैनी हो, ज्वर हो तृष्णा हो, तन्द्रा हो अर्थात् ऊंघती रहे, तथा प्रतिश्याय हो, इन सब लक्षणों के प्रगट होने पर रक्त गुल्म की रोगिणी असाध्य होती है ॥ २२ ॥

पुनरसाध्यलक्षणमाह—गृहीत्वा सज्वरं श्वासच्छर्द्यतीसारपीडितम्।
हृन्नाभिहस्तपादेषु शोथः कर्षति गुल्मिनम् ॥२३॥

ज्वरग्रस्त, श्वास, छर्दि तथा अतीसार से पीड़ित गुल्म रोगी को हृदय, नाभि तथा हाथ पैरों में शोथ हो जाता है जो उसके शरीर को कृश कर देता है ॥२४॥

श्वासः शूलं पिपासाऽन्नविद्वेषो ग्रन्थिमूढता।
जायते दुर्बलत्वं च गुल्मिनो मरणाय वै ॥ २४ ॥

जब श्वास तथा शूल होवे, प्यास अधिक हो तथा अन्न से विद्वेष हो जाये। गांठ विमूढ हो जाय, और रोगी का शरीर दुर्बल हो जाये तो वह गुल्म रोगी अवश्य मर जाता है वह नहीं बचता ॥ २४ ॥ इति गुल्मनिदानम्।

अथ गुल्मचिकित्सा।

लङ्घनं दीपनं स्निग्धमुष्णं वातानुलोमनम्।
बृंहणं च भवेदन्नं तद्धितं सर्वगुल्मिनाम् ॥ १ ॥

लंघन कराना, दीपन, स्निग्ध, उष्ण, वात को अनुलोमन करनेवाले तथा बृंहण अन्न देने से सब प्रकार के गुल्मरोगियों को लाभ होता है ॥ १ ॥

गुल्मिनामनिलशान्तिरुपायैः सर्वशो विधिवदाचरितव्या।
मारुते तु विजितेऽन्यमुदीर्णं दोषमल्पमपि कर्म निहन्यात् ॥२॥

गुल्मरोगियों को सब से पहले वायु को शान्त करने की चिकित्सा करनी चाहिये। वायु के जीते जाने पर अन्य बढ़े हुए दोषों को थोड़ा सा भी उपाय शान्त कर सकता है ॥ २ ॥

सुखोष्णा जाङ्गलरसाः सुस्निग्धा व्यक्तसैन्धवाः।
कटुत्रिकसमायुक्ता हिताः पानेषु गुल्मिनाम् ॥ ३ ॥

जांगल जीवों का सुखोष्ण रस, घी आदि से स्निग्ध कर के, सेंधानमक डाल कर, सोंठ मिरच तथा पीपल के चूर्ण से मिलाकर पीने को दे तो गुल्मरोगियों को लाभ देता है ॥ ३ ॥

कुम्भिपिण्डेष्टकास्वेदान्कारयेत्कुशलो भिषक्।
उपनाहाश्च कर्तव्याः सुखोष्णाः शाल्वणादयः ॥ ४ ॥

वातनाशक क्वाथादि से पूर्ण हुई २ भाफ से भरी हुई २ कुम्भी या घड़े से

स्वेद देवें। पिण्डस्वेद अर्थात् पसीजे हुए उड़दों की पिण्डी बना वस्त्र में बांधकर गरम २ स्वेद देवें। तथा ईंट को तपाकर वातनाशक क्वाथ से सिंचन कर पसीना देवें। तथा शाल्वण स्वेद आदि (आदि शब्द से वेशवार आदि समझें) से उपनाह करना चाहिये ॥ ४ ॥

गुल्मस्थाने रक्तमोक्षो बाहुमध्ये शिराव्यधः।
स्वेदानुलोमनं चैव प्रशस्तं सर्वगुल्मिनाम् ॥ ५ ॥

गुल्म स्थान से रक्त निकलवाना चाहिये, बाहुओं के मध्य की शिरा खोलकर खून निकलवा देना चाहिये। (यदि स्थिरगुल्म हो तो रक्त निकलवाना चाहिये। बाहु के मध्य में सन्धि के नीचे छोटी शिरा खोलनी चाहिये, मध्या वा बड़ी शिरा न खोलनी चाहिये क्योंकि वह मर्मस्थान माना है। और जिस ओर गुल्म हो उसी ओर की बांह की शिरा खोलनी चाहिये)। स्वेद देना चाहिये तथा वात को अनुलोमन करनेवाली क्रियायें करनी चाहिये। ये क्रियायें सभी गुल्मरोगियों के लिये प्रशस्त मानी है ॥ ५ ॥

अथ वातगुल्मचिकित्सा—**प्रागेव वातजे गुल्मे सुस्निग्धं स्वेदितं नरम्।**
रेचितं स्नेहरेकैश्च निरूहैः सानुवासनैः ॥
उपाचरेद्भिषक्प्राज्ञो मात्राकालविशेषतः ॥ १ ॥

वातजगुल्म में पहले रोगी को भली प्रकार से स्निग्ध करे फिर स्वेद देवे, स्निग्ध विरेचनों से विरेचन देवे। फिर निरूह तथा अनुवासन वस्ति देवे। ये सभी कर्म वैद्य मात्रा, काल को अच्छी प्रकार सोच समझ कर करे ॥ १ ॥

अथ मातुलुङ्गादियोगः—**मातुलुङ्गरसे हिंगु दाडिमं बिडसैन्धवम्।**
सुरामण्डेन पातव्यं वातगुल्मरुजापहम् ॥ १ ॥

बिजौरे के नींबू के रस में हींग, अनारदाना, बिड्नमक, सेंधानमक, सबको मिलाकर सुरामण्ड से पीना चाहिये। इससे वातिक गुल्म शान्त होती है ॥ १ ॥

अथ वृन्दान्नागरादि—**नगरार्धपलं पिष्टं द्वे पले लुञ्चितस्य च।**
तिलस्यैकं गुडपलं क्षीरेणोष्णेन पाययेत् ॥
वातगुल्ममुदावर्तं योनिशूलं च नाशयेत् ॥ १ ॥

सोंठ आधापल, दो पल साफ धुले हुए तिल, गुड १ पल सबको मिलाकर दूध से पीसकर पिलावे तो वातगुल्म, उदावर्त रोग तथा योनिशूल नष्ट होता है १ (यहां इतनी अधिक मात्रा खाना रोग की महिमा के कारण ही लिखा है तो भी रोगी का बलाबल देखकर कम या अधिक करनी उचित है; वाग्भट ने इसी कारण इसका मान आधा करके लिखा है—"शुण्ठ्याः कर्षं गुडस्य द्वौ धौतात् कृष्ण-तिलात् पलम्। खादेदेकत्र सञ्चूर्ण्य कोष्णक्षीरानुयोजितम्। वातहृद्रोगगुल्मार्शो योनिशूलशकृद्ग्रहान् ॥"

अथ हिङ्गुपंचकम्—हिङ्गुसैन्धववृक्षाम्लराजिकानागरैः समैः।
चूर्णं गुल्मप्रशमनं स्यादेतद्धिङ्गुपञ्चकम्॥ १॥

हींग, सेंधानमक, वृक्षाम्ल, राई और सोंठ इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर चूर्ण करले। इस हिंगुपञ्चकचूर्ण से वातगुल्म नष्ट होता है॥ १॥

अथ केतकीक्षारयोगः—स्वर्जिकाकुष्ठसहितः क्षारः केतकिसंभवः।
पीतस्तैलेन शमयेद्वातगुल्मं सुदारुणम्॥ १॥

केतकी या केवड़े के पौधे की क्षार, सज्जी और कूठ मिलाकर तेल से पीवें तो भयंकर वातगुल्म शान्त होता है॥ १॥

अथैरण्डतैलादियोगः—पिबेदेरण्डतैलं वा वारुणीमण्डमिश्रितम्।
तदेव तैलं पयसा वातगुल्मी पिबेन्नरः॥ १॥

अथवा वारुणी के मण्ड से युक्त एरण्ड तेल पीवे, अथवा एरण्ड का तेल दूध में मिलाकर पीना चाहिये। इस से वातगुल्म शान्त होता है॥ १॥

अथ वृन्दाद्धपुषाद्यं घृतम्—हपुषाजाजिपृथ्वीकापिप्पलीमूलचित्रकैः।
क्षीरमूलककोलानां रसैश्च विपचेद् घृतम्॥१॥

हौबेर, श्वेतजीरा, बड़ी इलायची, पिप्पलीमूल, चीतामूल, इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लेकर कल्क करे। यह मिला हुआ कल्क पांच तोले ले, गौ का घी २० तोले ले। तथा गौ का दूध ८० तोले, मूली का क्वाथ ८० तोले तथा बेर का क्वाथ ८० तोले। सब को मिलाकर क्रमशः घी पकालें॥ १॥

वातगुल्मारुचिश्वासशूलानाहज्वरार्शसाम्।
ग्रहणीयोनिदोषाणां घृतमेतन्निवारणम्॥ २॥

इस घी के प्रयोग करने से वातगुल्म, अरुचि, श्वास, शूल, आनाह, ज्वर, अर्श, ग्रहणीरोग तथा योनिदोष नष्ट होते हैं॥ २॥

अथ चित्रकाद्यं घृतम्—चित्रकव्योषसिन्धूत्थपृथ्वीकाचव्यदाडिमैः।
दीप्यकग्रन्थिकाजाजीहपुषाधान्यकैः समैः॥ १॥
दध्यारनालबदरमूलकस्वरसैर्घृतम्।
पक्त्वा पिबेद्वातगुल्मदौर्बल्याटोपशूलनुत्॥ २॥

चीता, सोंठ, मिरच, पीपल, सेंधानमक, बड़ी इलायची के बीज, चव्य, अनारदाना, अजवायन, पिप्पलामूल, जीराश्वेत, हौबेर और धनियां इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लें। सब पदार्थों का कल्क करें। यह कल्क मिलित १३ तोले, गौ का घी ५२ तोला लें। दही २०८ तोला लें, कांजी २०८ तोला लें, बेर का क्वाथ २०८ तोला लें, मूली का स्वरस २०८ तोला लें। क्रमशः एक २ द्रव्य का स्वरस घी में डालकर पकावें। घी मात्र बच जाये तो उतारकर

छानकर रखे। इस घी को पीने से वातगुल्म, दुर्बलता, आटोप तथा शूलरोग नष्ट होते हैं॥ २॥

अथ पथ्यम्—तित्तिरांश्च मयूरांश्च कुक्कुटान्क्रौञ्चवर्तिकान्।
सर्पिः शालिप्रपन्नांश्च वातगुल्मे च योजयेत्॥ १॥

तित्तिर, मोर, कुक्कुट, क्रौंच या कूंज, बतख इन को घी तथा शालिधान्यों से मिलाकर वातगुल्म में खावे॥ १॥

वातगुल्मप्रतीकारे प्रकुप्यति यदा कफः।
शस्तमुल्लेखनं तत्र चूर्णाद्याश्च कफापहाः॥ २॥

जब वातगुल्म की चिकित्सा करते २ कफ कुपित हो जावे तो उल्लेखन कर्म करे तथा कफनाशक चूर्णादि का प्रयोग करे॥ २॥

यदि कुप्यति वा पित्तं विरेकस्तत्र भेषजम्।
दोषघ्नैरप्यशान्ते च गुल्मे शोणितमोक्षणम्॥ ३॥

यदि वातगुल्म के प्रतिकार करते २ पित्त कुपित हो जाये तो तब विरेचन देवें। यदि पित्त, कफ आदि दोषों के नाश करनेवाली औषधों के देने पर भी गुल्म शान्त न हो तो रक्तमोक्षण करा देना लाभदायक होता है॥ ३॥ इति वातगुल्मचिकित्सा॥

अथ पित्तगुल्मचिकित्सा।

अथ त्रिवृच्चूर्णम्—पित्तगुल्मे त्रिवृच्चूर्णं पातव्यं त्रिफलाम्बुना।
विरेचनाय ससितं कम्पिल्लं च समाक्षिकम्॥ १॥

पैत्तिकगुल्मरोग में विरेचन के लिये त्रिफला के जल से त्रिवी का चूर्ण पीना चाहिये। तथा कमीला, खांड और शहद मिलाकर चटाना चाहिये॥ १॥

अथ द्राक्षादियोगः—द्राक्षाभयारसं गुल्मे पैत्तिके सगुडं पिबेत्।
सशर्करं वा विलिहेत्त्रिफलाचूर्णमुत्तमम्॥ १॥

पैत्तिक गुल्म में दाख तथा हरड़ का क्वाथ करके शीतल किया हुआ रस गुड मिलाकर पीवें। अथवा त्रिफला का चूर्ण खांड मिलाकर खावे॥ १॥

अथ पथ्याद्यं घृतम्—रसेनाऽऽमलकेक्षूणां घृतपादं विपाचयेत्।
पथ्यायाश्च पिबेत्सर्पिस्तत्सिद्धं पित्तगुल्मनुत्॥१॥

आंवला का स्वरस एक सेर, ईख का स्वरस एक सेर, गौ का घी एक पाव। तथा हरड़ का क्वाथ एक सेर डालकर घी पका लेवे। इसे क्रमशः एक २ के रस में पाक करें। इस घी के प्रयोग से पित्तगुल्म शान्त होता है॥ १॥

अथ द्राक्षाद्यं घृतम्—द्राक्षामधुकखर्जूरं विदारीं सशतावरीम्।
परूषकाणि त्रिफलां साधयेत्पलसंमिताम्॥ १॥

दाख, मुलहटी, खजूर, विदारीकन्द, शतावर, फालसा और हरड़, बहेड़ा,

आंवला इनमें से प्रत्येक द्रव्य को एक २ पल लें ॥ १ ॥

जलाढके पादशेषे रसमामलकस्य च।
घृतमिक्षुरसं क्षीरमभयाकल्कपादिकम् ॥ २ ॥

एक आढ़क जल में इन सब को डालकर क्वाथ करें। जब चतुर्थांश अर्थात् १ प्रस्थ शेष रह जावे तब उतार कर छानकर रक्खें। आंवले का स्वरस १ प्रस्थ ईख का रस १ प्रस्थ, दूध १ प्रस्थ। गौ का घी एक कुड़व लें। हरड़ १ पल लेकर कल्क करके घी में डालकर और क्रमशः क्वाथ तथा स्वरस आदि डालकर घृत पाक कर ले ॥ २ ॥

साधयेत्तद् घृतं सिद्धं शर्कराक्षौद्रपादिकम्।
प्रयोगः पित्तगुल्मघ्नः सर्वगुल्मविकारनुत् ॥ ३ ॥

घृत मात्र शेष रहने पर छान ले। इस घी में चतुर्थांश खांड और शहद मिलाकर रक्खे। इसके सेवन करने से पैत्तिक गुल्म नष्ट होता है तथा गुल्म के सभी विकार नष्ट होते हैं ॥ ३ ॥

अथ पथ्यम्—शालिं गोछागदुग्धं च पटोलं घृतमिश्रितम्।
द्राक्षां परूषकं धात्रीं खर्जूरं दाडिमं सिताम् ॥
पथ्यार्थं पैत्तिके गुल्मे बलातोयं च योजयेत् ॥ १ ॥

शालि धान्य, गौ का दूध, बकरी का दूध, घी में पकाया हुआ परवल का शाक, दाख, फालसा, आंवला, खजूर, अनार और मिश्री तथा खिरेंटी का स्वरस या क्वाथ ये सब पैत्तिक गुल्म में पथ्य कहे हैं ॥ १ ॥ इति पित्त गुल्म चिकित्सा।

अथ श्लेष्मगुल्मचिकित्सा।

स्नेहोपनाहनस्वेदैस्तीक्ष्णस्रंसनबस्तिभिः।
योगैश्च वातगुल्मोक्तैः श्लेष्मगुल्ममुपाचरेत् ॥ १ ॥

स्नेह पदार्थों के पिलाने से, उपनाह कर्म करने से, स्वेद देने से, तीक्ष्ण स्रंसन बस्तियों से तथा वात गुल्म में कहे हुए योगो से श्लेष्म गुल्म की चिकित्सा करें ॥ १ ॥

अथ तिलादिस्वेदः—तिलैरएडातसीबीजसर्षपैः परिलिप्य च।
श्लेष्मगुल्ममयस्पात्रैः सुखोष्णैः स्वेदयेद्भिषक् ॥ १ ॥

तिल, एरण्ड के बीज, अलसी के बीज और सरसों इन सब को पसिकर श्लेष्म गुल्म पर लेप करे फिर लोहे के पात्र को कुछ २ गरम कर उस गुल्म को स्वेद देवे ॥ १ ॥

अथ यवान्यादि—यवानीं चूर्णितां तक्रे बिडेन लवणीकृताम्।
श्लेष्मगुल्मे पिबेद्वातमूत्रवर्चोनुलोमनीम् ॥ १ ॥

अजवायन का चूर्ण बिड लवण मिलाकर तक्र से पिलावें तो श्लेष्म गुल्म में अधोवात मूत्र और मल का अनुलोमन होता है। अर्थात् वात मूत्र मल आदि

सुगमता से निकलते हैं ॥ १ ॥

अथ क्षीरषट्पलं घृतम्—पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरैः।
पलिकैः सयवक्षारैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥ १ ॥

पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चीता, सोंठ और यवक्षार इन मे से प्रत्येक द्रव्य एक २ पल लेकर कल्क बनावे ॥ १ ॥

क्षीरप्रस्थेन तत्सर्पिर्हन्ति गुल्मं कफात्मकम्।
ग्रहणीपाण्डुरोगघ्नं प्लीहकासज्वरापहम् ॥ २ ॥

घी १ प्रस्थ ले, दूध १ प्रस्थ ले। सबको एकत्र कर घृत पाक करे। इस घी से कफज गुल्म नष्ट होता है। ग्रहणी रोग, पाण्डुरोग, प्लीहा, खांसी और ज्वर ये सब नष्ट होते हैं ॥ २ ॥

अथ मिश्रकस्नेहः—त्रिवृता त्रिफला दन्ती दशमूलं पलोन्मितम्।
जले चतुर्गुणे पक्त्वा चतुर्भागावशेषिते ॥ १ ॥

त्रिवि, हरड़, बहेड़ा, आवला, दन्तीमूल, बिल की छाल, श्योनाक की छाल, गम्भारी की छाल, पाढ की छाल, अरणी की छाल, छोटी कटेली, बड़ी कटेली, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, गोखरु इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ पल लेकर सब द्रव्यों से चौगुना जल डालकर पकावे और चतुर्थांश जल शेष रक्खे ॥ १ ॥

सर्पिरेरण्डतैलं च क्षीरं चैकत्र साधयेत्।
संसिद्धो मिश्रकस्नेहः सक्षौद्रः कफगुल्मनुत् ॥ २ ॥

गौ का घी, एरण्ड का तेल और गौ का दूध और पूर्वोक्त क्वाथ, इन में से प्रत्येक एक २ भाग लेकर एकत्र पाक करे। जलीयांश जल जाने पर उतार कर छान लेवे। इसे "मिश्रक स्नेह" कहते हैं। इसमें शहद मिलाकर पीवे तो कफज गुल्म नष्ट होता है ॥ २ ॥ इति मिश्रकः स्नेहः।

अथ पथ्यम्—कुलत्थाञ्जीर्णशालींश्च षष्टिकान्यवजाङ्गलान्।
मद्यं तैलं घृतं तक्रं कफगुल्मे प्रयोजयेत् ॥ १ ॥

कुलथी, पुराने शालि चावल, साठी के चावल, जौ, जांगल जीवों का मांसरस, मद्य, तेल, घी और तक्र इन सब पदार्थों को गुल्म में पथ्य समझ कर सेवन करना चाहिये ॥ १ ॥ इति कफगुल्मचिकित्सा ॥

अथ त्रिदोषगुल्मचिकित्सा।

वरुणादिकषायस्तु गुल्मं दोषत्रयोत्थितम्।
हन्ति हृत्पार्श्वशूलाढ्यं सोपद्रवमसंशयम् ॥ १ ॥

वरुणादि कषाय पीने से त्रिदोषज गुल्म नष्ट होता है। हृदय का शूल और पसलियों का शूल नष्ट होता है और भी गुल्म के सब उपद्रव नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथ शार्ङ्गधराद्वरुणादिक्वाथः—

वरुणो बकपुष्पश्च बिल्वापामार्गचित्रकाः।

अग्निमन्थद्वयं शिग्रुद्वयं च बृहतीद्वयम् ॥ १ ॥
सैरेयकत्रयं मूर्वा मेषशृङ्गी किरातकः ।
अजशृङ्गी च बिम्बी च करञ्जश्च शतावरी ॥ २ ॥

बरने की छाल, अगस्त्य का फूल, बिल की छाल, अपामार्ग की जड़, चीता, छोटी अरणी, बड़ी अरणी, सुहांजना, लाल सुहांजना, छोटी कटेली, बड़ी कटेली श्वेत कटसरैया नीली कटसरैया और पीली कटसरैया, मूर्वामूल, मैढासिंगी, चिरायता, अज शृङ्गी, बिम्बी, करञ्ज और शतावर ॥ २ ॥

वरुणादिगणक्वाथः कफमेदोहरः स्मृतः ।
हन्ति गुल्मं शिरःशूलं तथाऽभ्यन्तरविद्रधीन् ॥ ३ ॥

ये वरुणादि गण कहाता है । इसका क्वाथ कफ और मेद का नाश करता है । गुल्म को नष्ट करता है । शिरःशूल और अन्तर्विद्रधि को नष्ट करता है ॥३॥
इति त्रिदोषगुल्मचिकित्सा ॥

अथ रक्तगुल्मप्रतीकारः ।

पित्तवद्रक्तगुल्मिन्या नार्याः कार्यो यथाविधि ।
प्रस्निग्धस्विन्नकोष्ठाया योज्यं स्नेहविरेचनम् ॥ १ ॥

रक्त गुल्म वाली नारी की चिकित्सा पित्तगुल्म के समान करे । पहिले स्नेह पान कराकर कोष्ट को स्वेद देवे फिर स्निग्ध विरेचन देवे ॥ १ ॥

अथ शताह्वादिकल्कः—शताह्वाचिरिबिल्वत्वग्दारुभार्ङ्गीकणोद्भवः ।
कल्कः पीतो जयेद् गुल्मं तिलक्वाथेन रक्तजम् ॥१॥

सौंफ, नाटा करञ्ज की छाल, देवदारु, भारङ्गी और पिप्पली इनको समभाग लेकर कल्क करके तिलों के क्वाथ से मिलाकर पीवे तो रक्तज गुल्म नष्ट होता है । (तिल क्वाथ से तिलों का क्वाथ लेना चाहिये परन्तु कुछ वैद्य तिलों के पौधे का क्षार बनाकर उस क्षार के जल से भी पिलाते हैं) ॥ १ ॥

अथ तिलक्वाथः—तिलक्वाथो गुडघृतव्योषभार्ङ्गीरजोन्वितः ।
पानं रक्तभवे गुल्मे नष्टे पुष्पे च योषितः ॥ १ ॥

तिलों के क्वाथ में गुड़, घी, सोंठ, मिरच, पीपल और भारङ्गी का समभाग चूर्ण मिलाकर पिलाने से रक्तज गुल्म नष्ट होता है तथा स्त्रियों का बन्द हुआ मासिक धर्म खुल जाता है ॥ १ ॥

अथ सुश्रुतात्तिलमूलादिचूर्णम्—

तिलमूलं च शिग्रुं च ब्रह्मदण्डीयमूलकम् ।
मधुयष्टीत्रिकटुकैर्युतं चूर्णमुपासयेत् ॥
पुष्परोधे वातगुल्मे स्त्रीणां सद्यः सुखावहम् ॥ १ ॥

तिल की जड़, सुहांजने की जड़, ब्रह्मदण्डी की जड़, मुलहठी, सोंठ, मिरच, और पीपल इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग लेकर उसका चूर्ण करके सेवन

करें तो मासिक धर्म की रुकावट में तथा वातगुल्म में स्त्रियों को लाभ होता है ॥१॥
अथ भार्ग्यादिचूर्णम्—भार्ङ्गीकृष्णाकरञ्जत्वग् ग्रन्थिकामरदारुजम् ।
चूर्णं तिलानां क्वाथेन रक्तगुल्मरुजापहम् ॥ १ ॥

भारंगी, पिप्पली, करञ्ज की छाल, पिप्पला मूल और देवदारु की छाल, प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर चूर्ण करके तिलों के क्वाथ से पीवे तो रक्त गुल्म की पीड़ा नष्ट होती है ॥ १ ॥

अथ दन्त्यादिगुटिका—दन्तीहिङ्गुयवक्षाराला बुबीजकणागुडाः ।
स्नुहीक्षीरेण गुटिका सर्वेषां कर्षमात्रिका ॥
भक्षिता रक्तगुल्मघ्नी रुधिरस्रावकारिणी ॥ १ ॥

दन्तीमूल, हींग, जौखार, कड़वी तुम्बी के बीज, पिप्पली और गुड़ इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग लेकर थोहर का दूध डालकर गोलियां बनावे । इस गोली को १ कर्ष भर खाने से रक्त गुल्म का नाश होता है तथा मासिक धर्म रुका हुआ हो तो खुल जायेगा ॥ १ ॥

अथार्कपुष्पयोगः—पक्वं तैलेऽर्कजं पुष्पं रुधिरस्रावकारि च ॥ १ ॥

आक के फूल को तेल में पकाकर पिलाने से रुका हुआ मासिक धर्म का खून जारी हो जाता है ॥ १ ॥

अथ पलाशक्षारघृतम्—पलाशक्षारतोयेन सर्पिः सिद्धं पिबेद्वधूः ।
यस्मिन्नवसरे क्षारतोयसाध्यघृतादिषु ॥ १ ॥

ढाक के क्षार का जल ४ भाग लें और गौ का घी १ भाग लेकर पकावें । घी मात्र शेष रहने पर इस घी को स्त्री को पिलावें तो रक्तगुल्म दूर होता है तथा मासिक धर्म खुल के होता है । जिस समय क्षारोदक से घृतपाक किया जाता है ॥ १ ॥

फेनोद्गमस्य निर्वृत्तिर्नष्टदुग्धसमाकृतिः ।
स एव तस्य पाकस्य कालो नेतरलक्षणः ॥ २ ॥

तो झाग निकलती है (किलाट के समान होजाता है) और नष्ट हुये २ दूध के समान आकार होजाता है तब समझना चाहिये कि घृतपाक ठीक होगया ॥२॥
इति पलाशक्षारघृतम् ॥

अथ वृन्दान्मुण्ड्यादि—मुण्डीरोचनिकाचूर्णं शर्करामाक्षिकान्वितम् ।
विदधीतास्रगुल्मिन्यां मलसंरेचनाय च ॥ १ ॥

मुण्डी बूटी, वंशलोचन इन दोनों का समभाग चूर्ण लेकर शहद और खांड मिलाकर पिलाने से रक्तगुल्मवाली स्त्री का मल पतला होकर निकल जाता है ॥१॥

उष्णैर्वा भेदयेद्भिन्ने विधिर्वाऽसृग्दरो हितः ।
अतिप्रवृत्तमस्रं तु भिन्ने गुल्मे निवारयेत् ॥ २ ॥

अथवा उष्ण पदार्थों से रक्तगुल्म को भेदन करे और भिन्न होकर खून निकलने के पश्चात् रक्तप्रदर में कहे हुये उपाय से रक्त बन्द करे। रक्तगुल्म के फूटने पर अत्यन्त बहते हुये रक्त को रोकना चाहिये ॥२॥ इति रक्तगुल्मप्रतीकारः।

अथ सामान्यविधिः।

अथ चित्रकादिक्वाथः—चित्रकग्रन्थिकैरण्डशुण्ठीक्काथः परं हितः।
शूलानाहविबन्धेषु सहिङ्गुबिडसैन्धवैः ॥ १ ॥

चीता, पिप्पलामूल, एरण्ड की जड़ और सोंठ इन सब को समभाग लेकर क्वाथ करे। यह क्वाथ हींग, सेंधानमक तथा विड्लवण मिलाकर सेवन किया जावे तो शूलरोग आनाह तथा विबन्धरोग नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

हिङ्ग्वादिचूर्णम्—हिङ्गुग्रन्थिकधान्यजीरकवचाचव्याग्निपाठासटी-
वृक्षाम्लं लवणत्रयं त्रिकटुकं क्षारद्वयं दाडिमम्।
पथ्यापुष्करवेतसाम्लहपुषाजाज्यस्तदेभिः कृतं
चूर्णं भावितमेतदार्द्रकरसैः स्याद्बीजपूरस्य च ॥ १ ॥

हींग, पिप्पलामूल, धनियां, जीरा, बच, चव्य, चीता, पाठा, कचूर, वृक्षाम्ल सेंधालवण, सैंचल लवण, विड्लवण, सोंठ, मिरच, पीपल, यवक्षार, सज्जीखार, अनारदाना, हरड़, पोहकरमूल, अम्लबेत, हौबेर, जीराश्वेत इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग लेकर सबको मिलाकर चूर्ण करें। इस चूर्ण को अदरक के स्वरस से तथा बिजौरे नींबू के स्वरस से क्रमशः भावना देवे ॥ १ ॥

आध्मानग्रहणीविकारगुदजान्गुल्मानुदावर्तकान्-
प्रत्याध्मानगदं तथाऽश्मरियुतं तूनिद्वयारोचकान्।
ऊरुस्तम्भमतिभ्रमं च मनसो बाधिर्यमष्ठीलिकां
प्रत्यष्ठीलिकिकामथापहरते प्राक्पीतमुष्णाम्बुना ॥ २ ॥

इस चूर्ण को गरम जल से पीने से अध्मान, ग्रहणी रोग, अर्शोरोग, गुल्म, उदावर्त, प्रत्याध्मान, अश्मरी, तूनी, प्रतूनी, अरुचि, ऊरुस्तम्भ, मन का अति भ्रान्त होना अथवा भ्रमरोग तथा मानस उन्माद आदि रोग, बधिरता, अष्ठीला, प्रत्यष्ठीला ये सभी रोग नष्ट हो जाते हैं ॥ २ ॥

हृत्कुक्षिवङ्क्षणकटीजठरान्तरेषु
बस्तिस्तनांसफलकेषु च पार्श्वयोश्च।
शूलानि नाशयति वातबलासजानि
हिङ्ग्वादि मान्द्यमिदमाश्विनसंहितायाम् ॥ ३ ॥

तथा हृदय का शूल, कुक्षि का शूल, वंक्षण का शूल, कटिशूल, पेट का शूल बस्ति का शूल, कंधों का शूल, तथा दोनों ओर की पसलियों या पसवाड़ो का शूल तथा वातकफ से हुए २ शूल। ये सभी शूल नष्ट करता है। अग्निमांद्य को

नष्ट करता है। इस चूर्ण का नाम अश्विन संहिता में हिंग्वादि चूर्ण कहाता है ॥३॥

अथ वृन्दाद्धिङ्गुनवकम्—हिङ्गु पुष्करमूलानि तुम्बुरूणि हरीतकी।
श्यामा बिडं सैन्धवं च यवक्षारं महौषधम् ॥१॥

हींग, पोहकरमूल, तुम्बरु अर्थात् तेजबल के फल, हरड़, श्यामलता, विड्लवण, सेंधालवण, यवक्षार, सोंठ ॥ १ ॥

यवक्वाथोदकेनतद् घृतभृष्टेन पाययेत्।
तेनास्य भिद्यते गुल्मः सशूलः सपरिग्रहः ॥ २ ॥

इन सब द्रव्यों को समभाग लेकर चूर्ण कर के रख। फिर जौ का क्वाथ कर के कुछ घी में भूनें। इस क्वाथ से इस चूर्ण को फांकने से शूल और उपद्रवों सहित गुल्मरोग फूट जाता है ॥ २ ॥

अथ भास्करलवणाख्यं चूर्णम्—सामुद्रलवणं ग्राह्यमष्टकर्षमितं बुधैः।
एवं सौवर्चलं ग्राह्यं बिडसैन्धवधान्यकम् ॥१॥

सामुद्र लवण ८ पल लें, सौंचल लवण ८ पल लें। विड्लवण, सेंधानमक, धनियां ॥ १ ॥

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यं जीरकपत्रकम्।
नागकेसरतालीसमम्लवेतसकं तथा ॥ २ ॥

पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, श्वेतजीरा, तेजपात, नागकेसर, तालीसपत्र, अम्लवेत ॥ २ ॥

द्विकर्षमात्राण्येतानि प्रत्येकं कारयेद् बुधः।
मरीचं जीरकं विश्वमेकैकं कर्षमात्रकम् ॥ ३ ॥

इन में से प्रत्येक द्रव्य दो २ कर्ष लें। गोलमरिच, जीरा, सोंठ इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ कर्ष लें ॥ ३ ॥

दाडिमस्य चतुष्कर्षं त्वगेला चार्धकर्षिका।
एतच्चूर्णीकृतं सर्वं लवणं भास्कराभिधम् ॥४॥

अनारदाना ४ कर्ष लें। दारचीनी आधा कर्ष लें और छोटी इलायची के बीज आधाकर्ष लें। इन सबको एकत्र कर के चूर्ण कर लें। यह भास्कर लवण कहाता है ॥ ४ ॥

शाणप्रमाणं देयं तु मस्तुतक्रसुरासवैः।
वातश्लेष्मभवं गुल्मं प्लीहानमुदरं क्षतम् ॥ ५ ॥

इस चूर्ण को दही के पानी, तक्र, सुरा अथवा आसव से एक शाणभर देना चाहिये। इस से वातश्लेष्मजगुल्म, प्लीहा, उदररोग, क्षतरोग ॥ ५ ॥

अर्शांसि ग्रहणीं कुष्ठं विबन्धं च भगंदरम्।
शोथं शूलं श्वासकासमामदोषं च हृद्रुजम् ॥ ६ ॥

अर्श, ग्रहणी, कुष्ठ, विबन्ध, भगन्दर, शूल, श्वास, कास, आमदोष, हृदय की पीड़ा ॥ ६ ॥

मन्दाग्निं नाशयत्येतद्दीपनं पाचनं परम् ।
सर्वलोकहितार्थाय भास्करेणोदितं पुरा ॥ ७ ॥

मन्दाग्नि इन सब रोगों को यह चूर्ण नष्ट करता है । यह अग्निदीपन करता है तथा परमपाचन चूर्ण है ॥ यह चूर्ण सब लोगों के हित के लिये पहले २ भास्कर ने बनाया था ॥ ७ ॥ इति शार्ङ्गधरात् ॥

अथ क्षारद्वयादि—**क्षारद्वयानलव्योषनीलीलवणपञ्चकम् ।**
चूर्णितं सर्पिषा पेयं सर्वगुल्मोदरापहम् ॥ १ ॥

यवक्षार, सज्जीखार, चीता, सोंठ, मिरच, पीपल, नील, सेंधालवण, सौंचल नमक, विड्लवण, समुद्रलवण, उद्भिद्लवण इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर सब को एकत्र चूर्ण करे । इसे घी से मिलाकर सेवन करने से सभी प्रकार के गुल्मरोग तथा उदररोग नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथाग्निमुखरसः—**हिङ्गुभागो भवेदेको वचा च द्विगुणा भवेत् ।**
पिप्पली त्रिगुणा ज्ञेया शृङ्गबेरं चतुर्गुणम् ॥ १ ॥

हींग एक भाग, बच दो भाग, पीपल तीन भाग, सोंठ चार भाग ॥ १ ॥

यवानिका पञ्चगुणा षड्गुणा च हरीतकी ।
चित्रकं सप्तगुणितं कुष्ठं चाष्टगुणं भवेत् ॥ २ ॥

अजवायन पांच भाग, हरड़ छह भाग, चीता सात भाग, कूठ आठभाग ॥२॥

एतद्वातहरं चूर्णं पीतमात्रं प्रसन्नया ।
पिबेद्दध्ना मस्तुना वा सुरया कोष्णवारिणा ॥ ३ ॥

इन सब द्रव्यों का चूर्ण करके प्रसन्ना, दही, दही के पानी से, सुरा से वा कोसे जल से पीने से वात को नष्ट करता है ॥ ३ ॥

उदावर्तमजीर्णं च प्लीहानमुदरं तथा ।
अङ्गानि यस्य शीर्यन्ते विषं वा येन भक्षितम् ।
अर्शोहरो दीपनश्च शूलघ्नो गुल्मनाशनः ॥ ४ ॥

उदावर्त्त, अजीर्ण, प्लीहा तथा उदररोग इन सब को नष्ट करता है । जिस के अंग ढीले हो गये हों अथवा जिस ने बिष खाया हो उन को देने से लाभ होता है । अर्शरोग को नाश करता है, अग्नि को दीपन करता है, शूल को नष्ट करता है तथा गुल्म को नष्ट करता है ॥ ४ ॥

कासं श्वासं निहन्त्याशु तथैव क्षयनाशनः ।
चूर्णो ह्यग्निमुखो नाम्ना न क्वचित्प्रतिहन्यते ॥ ५ ॥

कास तथा श्वास को नष्ट करता है तथा क्षय को नष्ट करता है । यह अग्नि-

मुखचूर्ण अपने प्रभाव को कहीं हीन नहीं होने देता अर्थात् सर्वत्र प्रभाव दिखाता है ॥ ५ ॥

अथ काङ्कायनगुटिका—यवानी जीरकं धान्यं मरिचं गिरिकर्णिका।
अजमोदोपकुञ्ची च चतुःशाणाः पृथक् पृथक् ॥१॥

अजवायन, श्वेत जीरा, धनियां, गोलमिरच, इन्द्रायण, अजवायन, कालाजीरा इन में से प्रत्येक द्रव्य चार २ शाण लेवे ॥ १ ॥

हिंगु षट्शाणिकं कार्यं क्षारौ लवणपञ्चकम्।
त्रिवृच्चाष्टमितैः शाणैः प्रत्येकं कल्पयेत्सुधीः ॥ २ ॥

हींग ६ शाण लेवे। यवक्षार, सज्जी, सेंधानमक, विडलवण, सोंचलनमक, समुद्र लवण, रोमक लवण, त्रिवि इन में से प्रत्येक आठ २ पल लेवे ॥ २ ॥

दन्ती शठी पौष्करं च विडङ्गं दाडिमं शिवा।
चित्रोऽम्लवेतसः शुण्ठी शाणैः षोडशभिः पृथक् ॥ ३ ॥

दन्तीमूल, कचूर, पोहकरमूल, बायविडङ्ग, अनारदाना, हरड़, चीता, अमल वेतस, सोंठ इन में से प्रत्येक द्रव्य सोलह २ शाण लेवे ॥ ३ ॥

बीजपूररसेनैषां गुटिकां कारयेद् बुधः।
घृतेन पयसा चाम्लै रसैरुष्णोदकेन वा ॥ ४ ॥

इन सब को बिजौरे नीबू के रस से घोटकर गोलियां बनावे। इसे घी से, दूध से, अम्ल रसों से तथा गरम जल से ॥ ४ ॥

पिबेत्काङ्कायनप्रोक्ता गुटिका गुल्मनाशिनी।
मद्येन वातिकं गुल्मं गोक्षीरेण च पैत्तिकम् ॥ ५ ॥

खिलावें तो यह कङ्कायन गुटिका गुल्म का नाश करती है। मद्य के साथ पीवें तो वातिक गुल्म का नाश करती है। गौ के दूध से पैत्तिक गुल्म का नाश करती हैं ॥ ५ ॥

मूत्रेण कफगुल्मं च दशमूलैस्त्रिदोषजम्।
उष्ट्रीदुग्धेन नारीणां रक्तगुल्मं निवारयेत् ॥ ६ ॥

गौ के मूत्र से कफगुल्म का नाश करती है। दशमूल के क्वाथ से त्रिदोषज गुल्म का नाश करती है। ऊंटनी के दूध से स्त्रियों के रक्तगुल्म का नाश करती है॥६॥

हृद्रोगं ग्रहणीशूलं कृमीनर्शांसि नाशयेत् ॥ ७ ॥

हृदयरोग, ग्रहणीरोग और शूल रोग, कृमि रोग और अर्श रोग इससे नष्ट होते हैं ॥ ७ ॥ इति शार्ङ्गधरात्।

अथ चिञ्चाक्षारादिशङ्खवटी—चिञ्चाक्षारं स्नुहीक्षारमर्कक्षारं पलं पलम्।
द्विपलं शङ्खजं भस्म रामठं च पलार्धकम् ॥ १ ॥

इमली का क्षार, थोहर का क्षार और आक का क्षार एक २ पल लेकर शंख भस्म दो पल लेवें, हींग आधा पल लेवें ॥ १ ॥

लवणानि च सर्वाणि पलमात्राणि योजयेत्।
क्षारद्वयं पलार्धं च सर्वमेकत्र योजयेत् ॥ २ ॥

पांचों नमक मिला करके एक पल भर लेवे। यवक्षार और सज्जीक्षार मिलित आधा पल ले ॥ २ ॥

जम्बीरकरसैर्मर्द्यमनलस्य दिनत्रयम्।
भृङ्गराजस्य निर्गुण्ड्या मुण्ड्याश्चैव पृथग्द्रवैः ॥ ३ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव प्रत्येकं दिनमार्दितम्।
बदरीबीजमात्रांस्तु वटकान्कारयेद्भिषक् ॥ ४ ॥

इन सबको मिलाकर जंबीरी के रस से तीन दिन तक खरल करे फिर चीते के रस से ३ दिन तक खरल करे, फिर भांगरे के रससे ३ दिन तक खरल करे फिर निर्गुण्डी के रस से तीन दिन खरल करे फिर मुण्डी के रस से ३ दिन तक खरल करे अद्रक के रस से १ दिन खरल करे फिर बेर के बीज के समान वैद्य गोलियां बना लेवे ४

एकैकं भक्षयेत्प्रातः पञ्च गुल्मान्व्यपोहति।
सर्वं शूलं निहन्त्याशु अजीर्णं च विषूचिकाम् ॥ ५ ॥

इस एक २ गोली को प्रातःकाल प्रतिदिन खावे तो पांचों गुल्म नष्ट होते हैं और सब शूलों को शीघ्र ही नष्ट कर देती है तथा अजीर्ण और विशूचिका को नष्ट करती है ॥ ५ ॥

मन्दाग्निं नाशयेच्छीघ्रं पथ्यं तैलाम्लवर्जितम्।
चिञ्चाशङ्खवटी नाम ग्रहणीरोगहृत्परा ॥ ६ ॥

मन्दाग्नि को शीघ्र ही नष्ट करता है। पथ्यों में तेल और खटाई को छोड़कर शेष चीजें भक्षण करे। यह चिञ्चाशंखवटी ग्रहणी रोग नाश करने में श्रेष्ठ है ॥६॥

अथ बज्रक्षारः—सामुद्रं सैन्धवं काचं यवक्षारं सुवर्चलम्।
टङ्कणं स्वर्जिकाक्षारं तुल्यं चूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ १ ॥

सामुद्रलवण, सेंधालवण, काचलवण, यवक्षार, सोंचलनमक, सुहागा, सज्जीखार इन में से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग लेकर एकत्र मिलावे ॥ १ ॥

अर्कक्षीरैः स्नुहीक्षीरैः शोषयेदातपे त्र्यहम्।
अर्कपत्रं लिपेत्तेन रुद्ध्वा भाण्डे पुटे पचेत् ॥ २ ॥
तं क्षारं चूर्णयित्वाऽथ त्र्यूषणं त्रिफलारजः।
जीरकं रजनी वह्निर्नवकस्य समं ततः।
क्षारार्धं योजयेत्सम्यगेकीकृत्य विचूर्णयेत् ॥ ३ ॥

फिर आक के दूध में इस चूर्ण को डालकर धूप में रख तीन दिन तक भावना देवें। फिर थोहर का दूध डालकर धूप में तीन दिन रख कर भावित करें। फिर सबको आक के पत्तों में लपेटकर एक हांडी में रख मुंह बन्द करके आग पर रख भस्म करे। इस भस्म को फिर चूर्ण कर ले। यह क्षार एक पल ले।

और आगे लिखी हुई औषधें दो पल लें । सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, जीरा, हल्दी, चीता इन नौ द्रव्यों को एकत्र समभाग लेवे । फिर क्षार और इन द्रव्यों को एकत्र मिलाकर खरल करके रख लें ॥ ३ ॥

वज्रक्षारमिमं शुद्धं स्वयं प्रोक्तं पिनाकिना ॥ ४ ॥

यह शुद्ध वज्रक्षार स्वयं महादेव जी ने कहा था ॥ ४ ॥

सर्वोदरेषु गुल्मेषु शूले शोफे च योजयेत् ।
अग्निमान्द्ये त्वजीर्णे च भक्षेन्निष्कद्वयं तथा ॥ ५ ॥

सब प्रकार के उदररोग, गुल्मरोग, शोफरोग, शूलरोग । अग्निमांद्य, अजीर्ण रोग इन सबमें दो निष्कभर इस वज्रक्षार को खावे ॥ ५ ॥

वाताधिके जलैः कोष्णैर्घृतैः पित्ताधिके हितः ।
कफे गोमूत्रसंयुक्त आरनालैस्त्रिदोषनुत् ॥ ६ ॥

वाताधिक में कोसे जल से, पित्ताधिक में घी से, कफाधिक में गोमूत्र से युक्त करके खावे । कांजी से सेवन करें तो त्रिदोष गुल्म का नाश होता है ॥ ६ ॥

अथ योगसाराच्छङ्खद्रावः—

प्रस्थं जम्बीरनीरं बदरपरिमितं काकतुण्डस्य मूलं
कर्षार्धं स्वर्जिकायास्त्रिपटुपलयुतं नव्यसारं पलार्धम् ।
तत्सर्वं सूर्यतापे मुनिदिनयुगुलं काचकुप्यां निधाय
हन्याद्गुल्मं सुतीव्रं जठरमलरुजं शङ्खकद्रावसंज्ञः ॥ १ ॥

जम्बीरी नीबू का रस एक प्रस्थ ले । कौआ ठोडी की जड़ दो शाण लेवे । सज्जी आधा कर्ष ले । सेंधालवण तथा विड्लवण मिलित एक पल ले । नौसादर आधा पल ले । इन सबको एकत्र मिलाकर एक शीशे में रखकर धूप में १४ दिन तक रखा रहे । इस रस को शंखद्राव कहते हैं । इसे उपयोग करने से तीव्र गुल्म रोग, उदररोग, मल का ठीक न आना, ये सभी रोग ठीक होते हैं ॥ १ ॥

इति शंखद्रावः ॥

अथान्यः शङ्खद्रावः—फटकीपलमेकं च सैन्धवं पलमेव च ।
द्विपलं च यवक्षारं द्विपलं नवसागरम् ॥ १ ॥

फिटकरी एक पल, सेंधानमक एक पल, जौखार दो पल, नौसादर दो पल॥ १॥

चतुष्पलं सुराक्षारं पलार्धं कासिसं तथा ।
डमरूयन्त्रयोगेन चुल्यां वै बदरीन्धनैः ॥ २ ॥
साधयेल्लाघवात्तूर्णं शङ्खद्रावरसं परम् ।
गुल्मादि सर्वरोगेषु देयः सर्वसुखप्रदः ॥ ३ ॥

शोरा ४ पल कसीस आधा पल इन सबको एकत्र करे । फिर डमरू यंत्र में इन्हें भरकर चूल्हे में रखकर बेर की लकड़ियों से आग देवे । यह रस हल्का होने क कारण ऊपर चढ़ जावेगा । इसे गुल्मादि सभी रोगों में दें तो अति सुख देता

है (डमरूयन्त्र के स्थान में नाड़िकायन्त्र प्रयोग करना समीचीन है) ॥ ३ ॥

अन्यश्च—सैन्धवं च यवक्षारं नव्यसारं तथैव च।
प्रत्येकं द्विपलं ग्राह्यं सुराक्षारं चतुष्पलम् ॥ १ ॥

सेंधालवण, यवक्षार, नौसादर इन में से प्रत्येक दो २ पल लें और शोरा चार पल लें॥ १ ॥

फटकीपलमेकं च पलार्धं कासिसं तथा।
सर्वमेकत्र संयोज्य डमरूयन्त्रमध्यगे ॥ २ ॥

फिटकरी एक पल लें। कासीस आधापल लें। सबको एकत्र कर डमरू यंत्र में रखकर चूल्हे पर चढ़ावे ॥ २ ॥

चुल्ल्यां प्ररोहयेत्तत्तु ज्वालयेत्खादिरेन्धनैः।
द्रावितं तत्समादाय तेजोरूपं जलप्रभम् ॥ ३ ॥

और खैर की लकड़ियों से आग देवे। फिर पिघलकर बने हुए उस तेजोरूप जल के समान तेजाब को लेलें ॥ ३ ॥

द्रावयेदखिलान्धातून्वराटांश्च न संशयः।
शङ्खद्रावरसो नाम गुल्मोदरहरः परः ॥ ४ ॥

इस द्राव से सब धातुओं को तथा कौड़ियों को द्रवित कर सकते हैं इसमें कोई संशय नहीं। यह शंखद्रावरस गुल्म तथा उदर रोग का परम नाशक है (यह भी नाड़ी यंत्र से खींचें तो लाभ देता है) ॥ ४ ॥ इति शंखद्रावः।

अथ क्रव्यादरसः—द्विपलं गन्धकं शुद्धं द्रावयित्वा विनिक्षिपेत् ॥१॥
पारदं पलमानेन मृतशुल्बायसी पुनः ॥ १ ॥

दो पल शुद्ध आंवला सारगन्धक पिघलाकर एक पल शुद्ध पारे में मिला देवे। खूब कज्जली करे। फिर तांबा की भस्म एक कर्ष तथा लोहभस्म एक कर्ष मिलावे ॥ १ ॥

कर्षमानेन संमिश्र्य पंचांगुलदले क्षिपेत्।
ततो विचूर्ण्य यत्नेन निक्षिप्याऽऽयसपात्रके ॥ २ ॥

फिर सबको एकत्र खरल करके लोहे के पात्र में मन्द २ आग पर पकावे। फिर पिघलते ही एरण्ड के पत्ते पर डालकर पर्पटी बनावें ॥ २ ॥

चुल्ल्यां निवेश्य यत्नेन चालयेन्मृदुवह्निना।
पात्रे पात्रं हि जम्बीररसं तत्र प्रचारयेत् ॥ ३ ॥
पंचकोलसमुद्भूतैः कषायैः साम्लवेतसैः।
भावनाः खलु दातव्याः पंचाशत्प्रमितास्तथा ॥ ४ ॥

फिर इसे पीसकर लोहे की कड़ाही में डालकर एक आढक जम्बीरी के रस में मिलाकर मन्द २ अग्नि से पकावें। जब रस सूख जाये तो पञ्चकोल के क्वाथ

(पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चीता और सोंठ प्रत्येक समभाग लेकर आठ गुणा जल डालकर चौथाई भाग शेष क्वाथ रखे इसे पञ्चकोल का क्वाथ कहते हैं) से ५० वार भावित करे तथा अम्लबेत के रस से ५० भावना देवे ॥ ४ ॥

भृष्टटङ्कणचूर्णेन तुल्येन सह मेलयेत्।
तदर्धपञ्चलवणैः सर्वसाम्यमरीचकैः ॥ ५ ॥

फिर सूख जाने पर सार चूर्ण के समान भुने हुए सुहाग का चूर्ण डाले और सुहागे से आधा पांचो लवणों का चूर्ण मिलावे। फिर सारे द्रव्यों के समान गोल मिरचों का चूर्ण डाल ॥ ५ ॥

सप्तधा भावयेत्पश्चाच्चणकक्षारवारिणा।
ततः संशोष्य संपेष्य कूपिकाभ्यन्तरे क्षिपेत् ॥ ६ ॥

फिर सब चूर्ण को एकत्र कर के चने के खार के जल से (शकलचणक शिशिरं चणकजलम्) सात भावना देवे। फिर सुखाकर पीसकर शीशी में रखे॥६॥

अत्यन्तगुरुभोज्यानि गुरुमांसान्यनेकशः।
भक्षेच्चाऽऽकण्ठपर्यन्तं ततो देयो रसोत्तमः ॥ ७ ॥

अत्यन्त गुरु भोज्यपदार्थ, अनेक प्रकार के गुरुमांस कण्ठ तक खिलाकर ऊपर से इस उत्तमरस को देवे ॥ ७ ॥

चतुर्वल्लमितो देयस्तक्रैः सलवणैरपि।
भुक्तं जीर्यति तत्क्षिप्रं जायते दीपनं परम् ॥ ८ ॥

चार वल्ल मात्रा अर्थात् ६ रत्ति से १२ रत्ति तक इस की मात्रा है। इसे लवणसहित तक्र के साथ भी देते हैं। खाया हुआ भोजन इस से शीघ्र ही पच जाता है तथा परम अग्निदीपक है ॥ ८ ॥

रसः क्रव्यादनामाऽयं प्रोक्तो मन्थानभैरवैः।
सिंहलक्षोणिपालाय भूरिमांसभुजे पुरा ॥
ततः क्रव्यादकः प्रोक्तो दृढं प्रत्ययकारकः ॥ ९ ॥

यह क्रव्यादरस मन्थानभैरव न सिंहल देश के राजा के लिये जो अत्यन्त मांसाहारी था बताया था। यह क्रव्यादरस निश्चय से लाभ करता है ॥ ९ ॥

कुर्याद्दीपनमुद्धतं पवनजे देहे परं शोषणं
तुन्दस्थौल्यनिबर्हणो गदहरो दुष्टव्रणार्तिप्रणुत्।
कासश्वासविनाशनो ग्रहणिकाविध्वंसनः स्रंसनो
गुल्मप्लीहजलोदरोपशमनः क्रव्यादनामा रसः ॥ १० ॥

यह शरीर की जाठराग्नि को परमदीपन करता है। वातयुक्त देह में परम-शोषण है। पेट का तुन्द निकल आना तथा स्थूलता इन दोनों में शरीर को सुखाकर आरोग्यता करता है। विष नाश करता है तथा दुष्ट व्रणों की पीड़ा को दूर करता

है । कास तथा श्वास को नष्ट करता है । ग्रहणीरोग को नष्ट करता है । स्रंसन है अर्थात् विरेचन है (पक्तव्यं यदपक्त्व्यं श्लिष्टकोष्ठे मलादिकं । नयत्यधः स्रंसनं तद् यथा स्यात् कृतमालकम् ॥ ऊर्ध्वग् दोषस्याधः करणे, विरेचने । सुश्रुतः ङ) गुल्मप्लीहा तथा जलोदररोग को नष्ट करता है । यह क्रव्यादरस कहाता है ॥१०॥

विश्वहिङ्गुबिडैः सार्धं क्रव्यादो भक्षितो रसः ।
गुल्मानशेषान्प्लीहानं विद्रधीनमपि नाशयेत् ॥ ११ ॥

सोंठ, हींग, विड्लवण प्रत्येक द्रव्य समभाग चूर्ण करे इन से मिलाकर क्रव्यादरस खाया जाये तो सभी प्रकार के गुल्मों को, प्लीहा को तथा विद्रधियों को भी नष्ट करता है ॥ ११ ॥ इति क्रव्यादः ॥

अथ गदनिग्रहाच्चविकासवः—

चविकायास्तुलार्धं तु तदर्धं चित्रकस्य च ।
बाष्पिका पुष्करं मूलं षड्ग्रन्था हपुषा शटी ॥ १ ॥

चव्य ५० पल, चीता २५ पल लें । (वाष्पिका हिंगुपत्री राधुनी कृष्णजीरके वा) हींग वा कालाजीरा, पोहकरमूल, पिप्पलामूल, हौबेर, कचूर ॥ १ ॥

पटोलमूलत्रिफलायवानीकुटजत्वचः ।
विशाला धान्यकं रास्ना दन्ती दशपलोन्मिता ॥ २ ॥

परवल की जड़, त्रिफला, अजवायन, कुड़ की छाल, इन्द्रायण की जड़, धनियां, रास्ना, दन्तीमूल प्रत्येक द्रव्य दश पल लें ॥ २ ॥

कृमिघ्नमुस्तमञ्जिष्ठादेवदारुकटुत्रिकम् ।
भागान्पञ्चपलानेतानष्टद्रोणेऽम्भसः पचेत् ॥ ३ ॥

वायविडंग, नागरमोथा, मंजीठ, देवदारु, सोंठ, मिरच, पीपल इन में से प्रत्येक द्रव्य पांच २ पल लें । सब को एकत्र कर आठ द्रोण जल में डालकर पकावे ॥ ३ ॥

द्रोणशेषेः रसे पूते देयं गुडशतत्रयम् ।
धातक्या विंशतिपलं चातुर्जातं पलाष्टकम् ॥ ४ ॥

जब पकते २ एक द्रोण जल शेष रहे तो गुड तीन सौ पल घोल देवे । धाय के फूल २० पल डाले तथा दारचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर ये सब मिलित आठ पल डाले ॥ ४ ॥

लवङ्गव्योषकङ्कोलं पलिकानि प्रकल्पयेत् ।
निदध्यान्मासमेकं तु घृतभाण्डे सुसंस्कृते ॥ ५ ॥

लौंग, सोंठ, मिरच, पीपल, कंकोल इन में से प्रत्येक द्रव्य एक पल डाले । सब को एकत्र कर घी से चिकने हुए २ पात्र में डालकर मुंह बंद कर के एक मासभर पड़ा रहने देवे ॥ ५ ॥

चतुष्पलां पिबेन्मात्रां प्रातः पीतं नियच्छति ।

सर्वगुल्मविकारांश्च प्रमेहांश्चैव विंशतिम् ॥ ६ ॥

फिर छानकर रखे। इस की चार पल की मात्रा प्रातःकाल पीने से सभी प्रकार के गुल्मरोग तथा २० प्रकार के प्रमेहरोग नष्ट होते हैं ॥ ६ ॥

प्रतिश्यायं क्षयं कासमष्ठीलां वातशोणितम्।
उदराण्यन्त्रवृद्धिं च चविकाख्यो महासवः ॥ ७ ॥

प्रतिश्याय, क्षय, खांसी, अष्ठीला, वातरक्त, उदररोग, अन्त्रवृद्धि ये सभी रोग इस चविकासव से नष्ट होजाते हैं ॥ ७ ॥ इतिचविकासवः ॥

अथ कुमार्यासवः—कुमार्याश्च रसद्रोणे गुडं पलशतं तथा।
तुलाङ्घ्रिसंख्यां विजयां क्वाथयेत्तज्जलार्मणे ॥१॥

घी कुमार के एक द्रोण रस में एक सौ पल गुड घोल दें। भांग २५ पल लेकर एक अर्मण या एक द्रोण जल में डालकर पकावे ॥ १ ॥

चतुर्थांशावशेषे तु पूते तस्मिन्निधापयेत्।
मधुनश्चाऽऽढकं दत्त्वा धातक्या द्विपलाष्टकम् ॥ २ ॥

चौथाइ भाग शेष बचने पर छान लें। इसमें शहद एक आढक डाल लें, धाय के फूल १६ पल डालें ॥ २ ॥

स्निग्धभाण्डे विनिक्षिप्य कल्कं चैव प्रदापयेत्।
जातीफलं लवङ्गं च कङ्कोलं च कबाबकम् ॥ ३ ॥

इन सबको एकत्र कर चिकने घड़े में डालें। और जायफल, लौंग, कंकोल, कबाबचीनी ॥ ३ ॥

जटिलाचव्यचित्रं च जातिपत्री सकर्कटम्।
अक्षं पुष्करमूलं च प्रत्येकं च पलं पलम् ॥ ४ ॥

पिप्पली, चव्य, चीता, जावित्री, काकड़ासिंगी, बहेड़ा, पोहकरमूल प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ पल लें ॥ ४ ॥

मृतं शुल्बं तथा लोहं शुक्तिमात्रं प्रदापयेत्।
भूम्यां वा धान्यराशौ वा स्थापयेद्दिनविंशतिम् ॥ ५ ॥

ताम्रभस्म, लोहभस्म प्रत्येक द्रव्य एक शुक्ति भर डालें। सबको एकत्र करके धान्य के ढेर में दबा दे और २० दिन तक ऐसे ही मुंह बन्द करके रखे ॥ ५ ॥

तमुद्धृत्य पिबेन्मात्रां यथा चाग्निबलाबलम्।
पञ्चकासं तथा श्वासं क्षयरोगं च दारुणम् ॥ ६ ॥

फिर छानकर अग्नि के बल और अबल के अनुसार मात्रा को पीवे। इसे पीने से पांचों प्रकार के कास, श्वास तथा भयंकर क्षयरोग नष्ट होते हैं ॥ ६ ॥

उदराणि तथाऽष्टौ च षडर्शांसि च नाशयेत्।
वातव्याधिमपस्मारमन्यान्रोगान्सुदारुणान् ॥ ७ ॥

आठों प्रकार के उदररोग, छह प्रकार की बवासीर, वातव्याधि, अपस्मार

तथा अन्यान्य भयंकर रोगों को नष्ट करता है ॥ ७ ॥

जाठरं कुरुते दीप्तं कोष्ठशूलं च नाशयेत्।
गुल्माष्टक नष्टपुष्पं नाशयेदेकपक्षतः ॥
कुमारिकासवो ह्येष बृहस्पतिविनिर्मितः ॥ ८ ॥

और जठराग्नि को दीप्त करता है तथा कोष्ठशूल को नाश करता है । आठों प्रकार के गुल्मों को तथा रजोनाश को एक पक्ष में नष्ट करता है । यह कुमारिकासव बृहस्पति ने बनाया था ॥ ८ ॥ इति कुमार्यासवः ।

अथ हिङ्ग्वादिघृतम्—हिंगुपुष्करमूलानि तुम्बरूणि हरीतकी ।
श्यामा बिडं सैन्धवं च यवक्षारं महौषधम् ॥१॥

हींग, पोहकरमूल, तेज बल के फल, हरड़, श्यामालता, बिड्लवण, सेंधानमक, यवक्षार, सोंठ ॥ १ ॥

यवक्वाथोदकेनैतद् घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
तेनास्य भिद्यते गुल्मः सशूलः सपरिग्रहः ॥ २ ॥

प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर कल्क करके इनसे चौगुना वा एक प्रस्थ घी डाले और उससे चौगुणा जौ के क्वाथ को डालकर घृतपाक करे । इस घी के सेवन से शूल सहित तथा उपद्रवों सहित गुल्म फूटकर नष्ट हो जाता है ॥ २ ॥

अथ दाधिकघृतम्—बिडदाडिमसिन्धूत्थहुतभुग्व्योषजीरकैः ।
हिंगुसौवर्चलक्षारचुक्रवृक्षाम्लवेतसैः ॥ १ ॥

बिड्लवण, अनारदाना, सेंधानमक, चीता, सोंठ, मिरच, पीपल, श्वेतजीरा, हींग, सोंचलनमक, यवक्षार, चूका, वृक्षाम्ल, अम्ल बेत ॥ १ ॥

बीजपूररसोपेतैः सर्पिर्दधि चतुर्गुणम् ।
साधितं दाधिकं नाम्ना गुल्महृत्प्लीहनुत्परम् ॥ २ ॥

प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर कल्क करे । इस कल्क से चौगुना गौ का घी लें और उससे बिजौरे नीबू का रस चार गुणा डालें । फिर घी से चौगुना दही डालकर घी पकावें । इस घी से गुल्मरोग तथा प्लीहा रोग नष्ट होते हैं ॥ २ ॥

अथ वृन्दात्त्रायमाणादि—जले दशगुणे साध्यं त्रायमाणं चतुष्पलम् ।
पञ्चभागान्वितं पूतं कल्कैः संयोज्य कार्षिकैः ॥१॥

त्रायमाण चार पल लें, जल दस गुणा डालकर पकावें । जब शेष पांच भाग बचे तो छान ले ॥ १ ॥

रोहिणी कटुका मुस्ता त्रायमाणा दुरालभा ।
द्राक्षा तामलकी वीरा जीवन्ती चन्दनोत्पलम् ॥ २ ॥

(रोहिणी—मंजिष्ठा, कराटकशिरीष, कुटकी, गांभारी, कायफल) मंजीठ, कुटकी, मोथा, त्रायमाना, जवासा, दाख, भुईं आंवला, वीरा अर्थात् विदारीकन्द,

जीवन्ती, लालचन्दन, उत्पल अर्थात् नीलाकमल ॥ २ ॥

रसस्याऽऽमलकानां च क्षीरस्य च घृतस्य च।
पलानि पृथगष्टाष्टौ सम्यग्दत्त्वा विपाचयेत् ॥ ३ ॥

इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेवे। इसका कल्क करे। इस कल्क से चौगुना घी आठ पल लेकर इसमें आंवलों का स्वरस ८ पल, दूध आठ पल तथा पूर्वलिखित त्रायमाण का क्वाथ भी आठ पल ही डाले। यह त्रायमाणादि घृत सिद्ध होने पर रोगी को खिलावें ॥ ३ ॥

पित्तगुल्मं रक्तगुल्मं विसर्पं पित्तजं ज्वरम्।
हृद्रोगं कामलां कुष्ठं हन्यादेतद् घृतोत्तमम् ॥ ४ ॥

तो पित्तगुल्म, रक्तगुल्म, विसर्प, पित्तजज्वर, हृद्रोग, कामला, कुष्ठ, इन सभी रोगों को यह घी नष्ट करता है ॥ ४ ॥

अथ सामुद्रादिवर्तिः—**वातवर्चोनिरोधेषु सामुद्रार्द्रकसर्षपैः।**
कृत्वा पायौ विधातव्या वर्तयो मरिचान्वितैः ॥१॥

यदि अधोवायु तथा मल रुक जाये तो समुद्र लवण, अदरक, सरसों तथा काली मिरच। इन सबको समभाग लेकर पीसकर अंगूठे के बराबर मोटी बत्ती बनाकर गुदा में दें तो यह वात और मल को बाहर निकालती है ॥ १ ॥

अथ रसाः।

तत्राऽऽदौ नाराचो रसः—**शुद्धसूतं समं गन्धं जेपालं त्रिफला समम्।**
त्रिकटु पेषयेत्क्षौद्रमिश्रं गुल्मं लिहन्हरेत्।
उष्णोदकं पिबेच्चानु नाराचोऽयं रसोत्तमः ॥१॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध जमाल गोटा, हरड़, बहेड़ा तथा आंवले को पृथक् २ चूर्ण करके ले। सोंठ, मिरच तथा पीपल का पृथक् २ चूर्ण लेवे। सभी द्रव्यों को एक २ भाग लेवें। पहले पारागन्धक की कज्जली बनावें फिर अन्य द्रव्य मिलाकर सबको एकत्र करके खरल करे। इस रस को नाराचरस कहते हैं। इसे शहद में मिलाकर खावें और ऊपर से गरम जल पीवें तो यह गुल्म रोगों को नष्ट करता है ॥ १ ॥ इति नाराचोरसः ॥

अथ वडवानलरसः—**शुद्धसूतं समं गन्धं मृतं ताम्राभ्रटङ्कणम्।**
सामुद्रं च यवक्षारं स्वर्जिसैन्धवनागरम् ॥ १ ॥

शुद्ध पारा, शुद्धगन्धक, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, भुना हुआ सुहागा, समुद्र लवण, यवक्षार, सज्जी, सेंधानमक, सोंठ ॥ १ ॥

अपामार्गस्य च क्षारं पालाशं वत्सनाभकम्।
प्रत्येकं सूततुल्यं स्याच्चणकाम्लेन मर्दयेत् ॥ २ ॥

अपामार्ग का क्षार, पलाश या ढाक का क्षार शुद्ध वत्सनाभ विष, इन में

प्रत्येक द्रव्य समभाग लेवें। पहले पारागन्धक की कज्जली बनावें फिर अन्य सभी द्रव्यों को मिलावें। फिर सब द्रव्यों में चणकाम्ल डालकर मर्दन करे ॥ २ ॥

हस्तिकन्याद्रवैश्चाहो आर्द्रयुक्तं पुटेल्लघु।
माषैकं भक्षयेन्नित्यं रसोऽयं बडवानलः ॥
सर्वगुल्मं निहन्त्याशु ग्रहणीं च विशेषतः ॥ ३ ॥

(हस्ति, कदली वृक्ष अजमोदायाम्) फिर केले के स्वरस से तथा घीकुमारी के स्वरस से तथा अदरक के स्वरस से घोटकर लघुपुट दे देवे। इस बडवानल रस को नित्य एक माषा खावे। इससे सभी प्रकार के गुल्म रोग शीघ्र नष्ट होते हैं तथा विशेष कर ग्रहणी रोग नष्ट होता है ॥ ३ ॥ इति बडवानल रसः।

अथ गुल्मकुठारोरसः—नागवङ्गाभ्रकं कान्तं समं ताम्रं समांशकम्।
जम्बीरस्वरसैर्घृष्ट्वा वटी गुञ्जाप्रमाणिका ॥ १ ॥

सीसा भस्म, बंग भस्म, अभ्रकभस्म, कान्तभस्म, ताम्रभस्म इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर खरल करे। फिर जम्बीरी नीबू के स्वरस में घोटकर एक रत्ति प्रमाण की गोली बनावे ॥ १ ॥

मधुनाऽऽर्द्रकनीरेण क्षारयुग्मेन सेविता।
अजीर्णमामं गुल्मं च हृत्पार्श्वोदरशूलके।
नाम्ना गुल्मकुठारोऽयं सर्वगुल्मान्व्यपोहति ॥ १ ॥

इसे शहद, अदरक के स्वरस तथा यवक्षार और सज्जी मिलाकर सेवन करने से अजीर्णरोग, आमरोग, गुल्मरोग, हृदय, पसलियां तथा उदर का शूल तथा सारे ही गुल्म नष्ट होते हैं इसका नाम गुल्म कुठार रस है ॥ १ ॥

अथ काश्यपान्मदेभसिंहसूतो रसः—

रसगन्धवराटताम्रशङ्खं विषवङ्गाभ्रककान्ततीक्ष्णमुण्डम्।
अहिहिङ्गुलटङ्कणं समांशं सकलं तत्त्रिगुणं पुराणकिट्टम् ॥ १ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक कौड़ीभस्म, ताम्रभस्म, शुद्धविष, बंगभस्म, अभ्रकभस्म, कान्तलोहभस्म, तीक्ष्णलोहभस्म, मुण्डलोहभस्म। सीसाभस्म, शुद्ध हिंगुल सुहागे की खील, इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग लें। पहले पारागन्धक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य इसमें मिलाकर एकत्र पीसें। फिर सारे चूर्ण से तिगुना गोमूत्र में शोधित किया हुआ मण्डूर डालकर एकत्र मर्दन करे ॥ १ ॥

पशुमूत्रविशोधितं सुघृष्ट्वा त्रिफलाभृङ्गरजार्द्रकोत्थनीरैः।
सुविशोष्य वरामृतालिवासास्वरसैरष्टगुणैः पुनर्नवोत्थैः ॥ २ ॥
पृथगग्निकृतं घनं विपाच्य गुटिका गुञ्जयुता निजानुपानैः।
ज्वरपाण्डुतृषाम्लपैत्यगुल्मक्षयकासस्वरमग्निसादमूर्च्छाः ॥ ३ ॥

फिर त्रिफला के क्वाथ से, भांगरे के स्वरस से, अदरक के स्वरस व भातिव

कर सुखा ले। फिर त्रिफला, गिलोय, वासा तथा पुनर्नवा इन में से प्रत्येक के आठ गुणा स्वरस से मिलाकर अग्नि पर पकाकर घनक्वाथ बना ले। इसकी एक २ रत्ति की गोली बना लेवे। और रोगानुसार पृथक् २ अनुपानों से खिलावे। तो यह ज्वर, पाण्डु, तृष्णा, रक्तपित्त, गुल्म, क्षयरोग, कास, स्वरभंग, अग्निमांद्य, मूर्च्छा ॥ ३ ॥

पवनादिषु दुस्तराष्टरोगान्सकलं पित्तहरं मदावृतं च।
बहुना किमसौ यथार्थनामा सकलव्याधिहरो मदेभसिंहः ॥४॥

वातरोग आदि के तथा भयंकर आठों कुष्ठादि रोगों को नष्ट करता है तथा मदात्यय रोग को नष्ट करता है। अधिक क्या कहें। यह मदेभसिंह सभी रोगों को नष्ट करने वाला है ॥ ४ ॥

अथ प्रवालपंचामृतरसः—

प्रवालमुक्ताफलशङ्खशुक्तिकपर्दिकानां च समांशभागम्।
प्रवालमात्रं द्विगुणं प्रयोज्यं सर्वैः समांशं रविदुग्धमेव ॥ १ ॥
एकीकृतं तत्खलु भाण्डमध्ये क्षिप्त्वा मुखे बन्धनमत्र योज्यम्।
पुटं विदध्यादतिशीतले च उद्धृत्य तद्भस्म क्षिपेत्करण्डे ॥ २ ॥

मोतीभस्म, शङ्खभस्म, शुक्तिभस्म, कौडीभस्म इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग लें, प्रवालभस्म दो भाग लेवे। सब को पीस लेवे और सब द्रव्यों के समभाग आक का दूध मिलाकर खरल करले। फिर इसे शरावसम्पुट में रख संधि बंद कर के गजपुट में रख फूंक देवे। जब स्वांगशीतल होकर सर्वथा ठण्डा होजाये तो इस भस्म को निकालकर किसी शीशी या पात्र में रखे ॥२॥

नित्यं द्विवारं प्रतिपाकयुक्तं वल्लप्रमाणं हि नरेण सेव्यम्।
आनाहगुल्मोदरप्लीहकासश्वासाग्निमान्द्यान्कफमारुतोत्थान् ॥३॥

यह रस डेढ से तीन रत्ति तक लेकर दो बार दिन में सेवन कराना चाहिये॥ आनाह, गुल्म, उदर, प्लीहा, कास, श्वास, अग्निमांद्य, कफवात के विकार ॥ ३ ॥

अजीर्णमुद्गारहृदामयघ्नं ग्रहण्यतीसारविकारनाशनम् ॥ ४ ॥

अजीर्ण, उद्गार, हृदय के रोग, ग्रहणी तथा अतिसार ये सभी रोग नष्ट होते हैं ॥ ४ ॥

मेहामयं मूत्ररोगं मूत्रकृच्छ्रं तथाऽश्मरीम्।
नाशयेन्नात्र संदेहः सत्यं गुरुवचो यथा ॥ ५ ॥

तथा यह प्रमेहरोग, मूत्ररोग, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरीरोग, इन सब को नष्ट करता है। इस में सन्देह न करना चाहिये। यह गुरु के बचन के समान सत्य है ॥ ५ ॥

पथ्याश्रितं भोजनमादरेण समाचरेन्निर्मलचित्तवृत्त्या।
प्रवालपञ्चामृतनामधेयो योगोत्तमः सर्वगदापहारी ॥ ६ ॥

इस प्रवालपंचामृतरस के सेवन के समय निर्मलचित्तवृत्ति रख के रोगी पथ्य भोजन ही करे। यह प्रवालपंचामृत नामक योग परम उत्तम है तथा सब रोगों को नष्ट करता है ॥ ६ ॥ इति रसाः ॥

अथ पथ्यापथ्यम् ।

संवत्सरसमुत्पन्नाः कलमा रक्तशालयः।
खण्डं कुलत्थयूषश्च धन्वमांसरसः सुराः ॥ १ ॥

एक वर्ष पुराने कलम तथा शाली धान्य, खांड, कुलथी का यूष, धन्व जातीय जीवों के मांस के रस, सुरा ॥ १ ॥

गवामजायाश्च पयो मृद्वीका च परूषकम् ।
तक्रमेरण्डतैलं च लशुनं बालमूलकम् ॥ २ ॥

गौ तथा बकरी का दूध, मुनक्का, फालसा, तक्र, एरण्ड का तेल, लशुन, नरम ताजी मूली ॥ २ ॥

पत्तूरो वास्तुकं शिग्रुर्मातुलुङ्गं हरीतकी ।
वातानुलोमनं चैव पथ्यं गुल्मे नृणां भवेत् ॥ ३ ॥

शालिञ्चशाक, बथुआ, सुहांजना, बिजौरा नीबू, हरड़ तथा वात को अनुलोमन करने वाले सभी पदार्थ गुल्मरोग में मनुष्यों के लिये पथ्य कहे हैं ॥३॥

माषादयः शिम्बिधान्ये शूकधान्ये यवादयः।
वल्लूरं मूलकं मत्स्यं मधुराणि फलानि च ॥ ४ ॥

शिम्बीधान्य अर्थात् फलीवाले धान्यों में उड़द आदि न सेवन करे। शूक धान्यों में अर्थात् बालीदार धान्यों में जौ आदि सेवन न करे। (वल्लूरं शुष्कमांसे शूकरमांस) सूखेमांस तथा सूअर के मांस, मूली, मछली, मधुर फल सेवन करना ॥ ४ ॥

अधोवायुशकृन्मूत्रश्रमश्वासाश्रुधारणम् ।
वमनं जलपानं च गुल्मरोगी परित्यजेत् ॥ ५ ॥

अपानवायु, मल, मूत्र, श्वासोच्छ्वास तथा अश्रुओं के वेग को धारण करना, वमन करना, जल को अधिक मात्रा में तथा अनियम से खाली पेट पीना। ये सभी बातें गुल्मरोगी त्याग देवे ॥ ५ ॥ इति पथ्यापथ्यम् ॥ इति गुल्मरोगचिकित्सा ॥

इति हरिद्वारीयगुरुकुलविश्वविद्यालयस्नातकेन श्रीविद्याधरविद्यालंकारेण लवपुरीय श्रीमद्दयानन्दायुर्वेदमहाविद्यालयीय वैद्यकविराजोपाधिधारिणा राजयक्ष्मचिकित्सकेन जलचिकित्सा विशेषज्ञेन रसेन्द्रसारसंग्रह टीकाकर्त्रा कृतायां योगरत्नाकरस्य रत्नगर्भानाम्नीटीकायां गुल्मप्रकरणं समाप्तम् ॥

अथातो हृद्रोगनिदानम् ।

अत्युष्णगुर्वम्लकषायतिक्तैः श्रमाभिघाताध्यशनप्रसङ्गैः ।

संचिन्तनैर्वेगविधारणैश्च हृदामयः पञ्चविधः प्रदिष्टः ॥ १ ॥

अत्युष्ण पदार्थों के सेवन से, अति गुरु द्रव्यों के सेवन से, अत्यम्ल द्रव्यों के सेवन से अति कषाय रस के सेवन से तथा तिक्त रस के अति सेवन से, श्रम करने से, अभिघात अर्थात् चोट पेट लगने से, अध्यशन से तथा मैथुन करने से, अति चिन्ता करने से मल मूत्रादि के वेगों को धारण करने से हृदयरोग पांच प्रकार का होता है ॥ १ ॥

अथ तस्य संप्राप्तिमाह—दूषयित्वा रसं दोषा विगुणा हृदयं गताः।
हृदि बाधां प्रकुर्वन्ति हृद्रोगं तं प्रचक्षते ॥ २ ॥

जब वातादि दोष विगुण होकर रसधातु को दूषित करके हृदय में जाते हैं तो हृदय में पीड़ा करते हैं उसे हृद्रोग कहा जाता है ॥ २ ॥

अथ वातिकमाह—आयम्यते मारुतजे हृदयं तुद्यते तथा।
निर्मथ्यते दीर्यते च स्फोट्यते पाट्यतेऽपि च ॥ ३ ॥

वातज हृदयरोग में हृदय अधिक फैल जाता है। (तुद्यते) पीड़ा होती रहती है, (निर्मथ्यते दीर्यते च) मथित होता है तथा फटता है (स्फोट्यते पाट्यतेऽपि च) फूटता है तथा दो भागों में फटता प्रतीत होता है ॥ ३ ॥

अथ पैत्तिकमाह—तृष्णोष्णदाहचोषाः स्युः पैत्तिके हृद्दे क्लमः।
धूमायनं च मूर्च्छा च स्वेदः शोषो मुखस्य च ॥ ४ ॥

पैत्तिक हृदयरोग में तृष्णा, उष्णता, दाह होना, चोष तथा क्लान्ति होती है। तथा धुआं सा उठता है, मूर्च्छा होती है, स्वेद आता है तथा मुख सूखता है॥४॥

अथ श्लैष्मिकमाह—गौरवं कफसंस्रावोऽरुचिः स्तम्भोऽग्निमार्दवम्।
माधुर्यमपि चाऽऽस्यस्य बलासावतते हृदि ॥ ५ ॥

श्लैष्मिक हृदयरोग में गुरुता, मुंह से कफ अधिक निकलना, अरुचि, स्तम्भ, अग्निमांद्य होता है तथा मुंह मीठा रहता है ॥ ५ ॥

अथ त्रिदोषकृमिजयोर्लक्षणमाह—

विद्यात् त्रिदोषमप्येवं सर्वलिङ्गं हृदामयम्।
त्रिदोषजे तु हृद्रोगे यो दुरात्मा निषेवते ॥ ६ ॥

त्रिदोषज हृदयरोग मे वातपित्तकफ तीनों के लक्षण मिलते हैं। त्रिदोषज-हृदयरोग में जो दुरात्मापुरुष तिल, दूध, गुड आदि का सेवन करता है ॥ ६ ॥

तिलक्षीरगुडादींश्च ग्रन्थिस्तस्योपजायते।
मर्मैकदेशे संक्लेदं रसश्चाप्युपगच्छति ॥ ७ ॥

उस के हृदय में मर्म के एकस्थान में गांठ होजाती है। तथा उस स्थान में क्लेद अथवा आर्द्रता होजाती है तथा रस भी पहुंचता रहता है ॥ ७ ॥

तत्क्लेदात्कृमयश्चास्य भवन्त्युपहतात्मनः।

तीव्रार्त्तितोदं कृमिदं तद्दोषत्रयसंभवम् ॥ ८ ॥

उसी क्लेद से उस अपथ्यसेवी रोगी के कृमि पैदा होजाते हैं। उस में तीव्र पीड़ा तथा तोद होती है। इसे त्रिदोषज कृमिज हृदयरोग कहते हैं ॥ ८ ॥

उत्क्लेदः ष्ठीवनं तोदः शूलं हृल्लासकस्तमः।
अरुचिः श्यावनेत्रत्वं शोषश्च कृमिजे भवेत् ॥ ९ ॥

इस कृमिज हृदयरोग में उत्क्लेद अर्थात् वमन की इच्छा होती है, थूक आता है, तोद होता है, शूल होता है, हृल्लास अर्थात् वमन की सी इच्छा होती है। और तम होता है। अरुचि होना, श्याव नेत्र होने, शोष ये सब रोग भी होते हैं ॥ ९ ॥

उपद्रवाः—क्लोमः सादो भ्रमः शोषो ज्ञेयास्तेषामुपद्रवाः।
क्रिमिजे कृमिजातीनां श्लैष्मिकाणां च ते मताः ॥ १० ॥

हृदयरोग में क्लोम सन्न होजाता है अर्थात् ठीक कार्य नहीं करता है। भ्रम होता है, शोष होता है ये सब उपद्रव होते हैं। तथा क्रिमिज हृदयरोग में कृमियों के उपद्रव होते हैं तथा कफ सम्बन्धी उपद्रव होते हैं ॥ १० ॥ इति हृद्रोगनिदानम् ॥

अथ हृद्रोगचिकित्सा।

अथ वातहृद्रोगः—वातोपसृष्टे हृदये वामयेत्स्निग्धमातुरम्।
द्विपञ्चमूलीकाथेन सस्नेहलवणेन वा ॥ १ ॥

वातज हृदय रोग में रोगी को स्निग्ध कराके वमन करावे। दशमूल के काथ से वा स्नेह पदार्थों में लवण मिलाकर वमन करावे ॥ १ ॥

अथ पिप्पल्यादिचूर्णम्—पिप्पल्येला वचा हिङ्गु यवक्षारोऽथ सैन्धवम्।
सौवर्चलमथो शुण्ठी दीप्यश्चेति विचूर्णितम् ॥ १ ॥

पिप्पली, छोटी इलायची के बीज, वच, हींग, जौखार, सेंधानमक, सोंचल नमक, सोंठ और अजवायन इन सबको समभाग लेकर चूर्ण करे ॥ १ ॥

फलधान्याम्लकौलत्थदधिमद्यासवादिभिः।
पाययेच्छुद्धदेहस्य वातहृद्रोगशान्तये ॥ २ ॥

इस चूर्ण को शुद्ध हुए २ वातिक हृद्रोगी को फलों के रस से, धान्याम्ल से, कुलथी के रस से, दही से, मद्य से अथवा आसव आदि से पिलावे इससे वातिक हृद्रोग शान्त होता है ॥ २ ॥

अथ पुष्करमूलाद्यं चूर्णम्—

सपुष्कराख्यं फलपूरमूलं महौषधं शट्यभया च कल्कः।
क्षाराम्ललसर्पिर्लवणैर्विमिश्रः स्याद्वातहृद्रोगहरो नराणाम् ॥ १ ॥

पोहकरमूल, बिजौरे नीबू की जड़, सोंठ, कचूर, हरड़ इन सबको समभाग

लेकर कल्क बनावे । इस कल्क को यवक्षार, कांजी या अम्लरस, घी तथा नमक मिलाकर खाने से वातिक हृद्रोग शान्त होता है ॥ इति वातहृद्रोगः ॥

अथ पित्तहृद्रोगः—श्रीपर्णीं मधुकं क्षौद्रं सितागुडजलैर्वमेत् ।
पित्तोपसृष्टे हृदये सिञ्चेत मधुरैः शृतैः ॥ १ ॥

गाम्भारी, मुलहठी, शहद, खांड, गुड इनको जल में घोटकरके पिलाकर वमन करावे । पित्तज हृद्रोग की इससे शान्त होती है । तथा पैत्तिक हृदय रोग वाले को मधुर द्रव्यों से पकाये हुए शीतल क्वाथों से सींचे ॥ १ ॥

शीताः प्रदेहाः परिषेचनं च तथा विरेको हृदि पित्तदुष्टे ।
द्राक्षासिताक्षौद्रपरूषकैः स्याच्छुद्धे च पित्तापहमन्नपानम् ॥ १ ॥

शीतल लेप तथा शीतल क्वाथों से हृदय को सिंचन करना, और दाख, खांड शहद और फालसा इनको पिलाकर विरेचन देवे । इससे पित्त से दुष्ट हुआ २ हृदय जब शुद्ध हो जाये तो पित्तनाशक अन्नपान सेवन करावे ॥ १ ॥

अथ द्राक्षादिचूर्णम्—हारहूराहरीतक्योस्तुल्यं शर्करया रजः ।
पीतं हिमाम्बुना हन्ति पित्तहृद्रोगमञ्जसा ॥ १ ॥

दाख तथा हरड़ का चूर्ण एक २ भाग लेवे । दो भाग खांड डालकर सब को एकत्र चूर्ण करले । इस चूर्ण को शीतल जल से पिलावे तो शीघ्र ही पित्तरोग की शान्ति होती है ॥ १ ॥

अथार्जुनादिचूर्णम्—अर्जुनस्य त्वचा सिद्धं क्षीरं पित्तहृदार्तिजित् ।
सितया पञ्चमूल्या वा बलया मधुकेन वा ॥ १ ॥

अर्जुन वृक्ष की छाल का कल्क १ छटांक, गौ का दूध ४ छटांक, जल १ सेर सब को मिलाकर पाक करे दूधमात्र शेष रहने पर शीतल कर के खांड डालकर पिलावे । इस से पैत्तिकहृद्रोग शान्त होता है । खांड और लघुपञ्चमूल से सिद्ध किया हुआ दूध पैत्तिकहृद्रोग को शान्त करता है । अथवा खिरैंटी और मुलहठी से सिद्ध किया हुआ दूध भी पैत्तिकहृद्रोग को शान्त करता है ॥ १ ॥

अथ वृन्दात्कसेरुकादिसर्पिः—

कसेरुकाशैवलशृङ्गबेरप्रपौण्डरीकं मधुकं बिसं च ।
ग्रन्थिश्च सर्पिः पयसा पचेत्तैः क्षौद्रान्वितं पित्तहृदामयघ्नम् ॥१॥

कसेरू और शैवाल या काई और अदरक, पुण्डरीक काष्ठ, मुलहठी और भिस (ग्रन्थिश्च) मोथा वा पिप्पलामूल इन सब को समभाग लेकर कल्क करे । इस कल्क से चौगुना दूध लेकर घृतपाक करे । इस घी को शहद में मिला के पिलाने से पैत्तिक हृदोग शान्त होता है ॥ इति पित्तहृद्रोगः ॥

अथ कफहृद्रोगः—हृद्रोगे कफजे स्विन्नं सुवान्तं लङ्घितं नरम् ।
कफघ्नैर्भेषजैर्युञ्ज्याज्ज्ञात्वा दोषबलाबलम् ॥ १ ॥

कफज हृद्रोग में स्वेद दिये हुए, वमन कराये हुए तथा लंघन कराये हुए रोगी को दोषों का बलाबल देखकर कफनाशक औषध देवें ॥ १ ॥

अथ त्रिवृताद्यौ चूर्णक्वाथौ—

त्रिवृत्सटीबलारास्नाशुण्ठीपथ्याः सपौष्कराः।
चूर्णिता वा शृता मूत्रे पातव्याः कफहृद्गदे ॥ २ ॥

त्रिवी, कचूर, बला, रास्ना, सोंठ, हरड़, पोहकरमूल इन सब औषधों को समभाग लेकर चूर्ण करे। इस चूर्ण को गोमूत्र से पीवे। अथवा इन औषधों का क्वाथ गोमूत्र से मिलाकर पीवे तो कफज हृद्रोग शान्त होता है ॥ २ ॥

अथैलादि—सूक्ष्मैला मागधीमूलं पटोलं सर्पिषा सह।
नाशयेदाशु हृद्रोगं कफजं सपरिग्रहम् ॥ १ ॥

छोटी इलायची के बीजों का चूर्ण, पिप्पलामूल, परवल इन सब का चूर्ण करके घी के साथ मिलाकर खावें तो कफज हृद्रोग उपद्रवों सहित नष्ट होता है ॥ १ ॥

इति कफहृद्रोगः॥ अथ त्रिदोषहृद्रोगः—

त्रिदोषजे लङ्घनमादितः स्यादन्नं तु सर्वेषु हितं विधेयम्।
चूर्णानि सर्पींषि च वक्ष्यमाणान्यत्र प्रयोज्यानि भिषग्भिराशु ॥ १ ॥

त्रिदोषज हृद्रोग में आरम्भ में लंघन करावे। फिर त्रिदोष नाशक अन्न देवे। तथा आगे कहे हुए चूर्ण तथा घी इस रोग में शीघ्र ही प्रयोग करने चाहियें ॥ १ ॥

इति त्रिदोषहृद्रोगः॥

अथ कृमिजहृद्रोगः—हृद्रोगे कृमिजे कार्यं लङ्घनं चापतर्पणम्।
पश्चात्कृमिहरं कर्म कृमिरोगोक्तमाचरेत् ॥ १ ॥

कृमिज हृद्रोग में पहले लंघन करावे फिर अपतर्पण करावे। फिर कृमिरोग में कहे हुए कृमिनाशक कर्मों को करे ॥ १ ॥

कृमिजे च पिबेन्मूत्रं विडङ्गामयसंयुतम्।
हृदि स्थिताः पतन्त्येव ह्यसाध्याः कृमयो नृणाम् ॥ २ ॥

वायविडंग तथा कूठ के समभाग चूर्ण को गोमूत्र से पीने को दें तो हृदयस्थ असाध्य कीड़े भी नष्ट होकर निकल जाते हैं ॥ २ ॥ इति कृमिजहृद्रोगः ॥

अथ सामान्यहृदामयप्रतीकारः।

पवनारिजटा द्विपलाष्टगुणे सलिले पचिता यवजेन युतम्।
कथनं हृदयोद्भवपार्श्वतटीकटिशूलविदारणसिंहनखम् ॥ १ ॥

एरण्ड की जड़ दो पल ले, आठ गुणा जल में डालकर पकावे। चतुर्थांश क्वाथ शेष रहने पर छानकर यवक्षार से मिलाकर खावे तो हृदय के शूल, पार्श्व शूल, कटिशूल इन सब रोगों को फाड़ने में यह शेर के नख के समान है ॥ १ ॥

अथ दशमूलादिक्वाथः—दशमूलकषायस्तु लवणक्षारसंयुतः।

पीतो निहन्ति सहसा हृदामयमसंशयम् ॥ १ ॥

दशमूल का क्वाथ सेंधालवण तथा यवक्षार मिलाकर पीया जाये तो हृद्रोग को निश्चित नाश करता है ॥ १ ॥

अथ पुष्करादिक्वाथः—

क्वाथः कृतः पुष्करमातुलुङ्गपलाशपूतीकशटीसुराह्वैः ।
सनागराजाजिवचायवाह्वक्षार उष्णो लवणेन पेयः ॥ १ ॥

पोहकरमूल, बिजौरे की जड़, ढाक की जड़, पूति करंज, कचूर, देवदारु, सोंठ जीरा, वच, यवक्षार इन सबको मिलाकर किया हुआ क्वाथ सेंधा नमक डालकर गरम २ पीने से हृद्रोग अच्छा होता है ॥ १ ॥

अथ हिङ्ग्वादिचूर्णम्—

हिङ्ग्वग्रगन्धाविडविश्वकृष्णाकुष्ठाभयाचित्रकयावशूकम् ।
पिबेत्ससौवर्चलपुष्कराढ्यं यवाम्भसा शूलहृदामयघ्नम् ॥ १ ॥

हींग, अजवायन, विड्लवण, सोंठ, पीपल, कूठ, हरड़, चीता, जौखार, सोंचलनमक, पोहकरमूल इन सब को समभाग लेकर चूर्ण करे । इस चूर्ण को जौ के क्वाथ से पीवे तो शूलरोग तथा हृदयरोग नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथ पुष्करचूर्णम्—चूर्णं पुष्करमूलस्य मधुना सह लेहयेत् ।
हृल्लासश्वासकासघ्नं हृदामयहरं परम् ॥ १ ॥

पोहकरमूल का चूर्ण शहद से मिलाकर चाटे । इस से हृल्लास, श्वास तथा कासरोग नष्ट होता है तथा हृदयरोग दूर होता है ॥ १ ॥

अथ ककुभाद्यं चूर्णम्—

घृतेन दुग्धेन गुडाम्भसा वा पिबेत्सचूर्णं ककुम्भत्वचोत्थम् ।
हृद्रोगजीर्णज्वररक्तपित्तं जित्वा भवेयुश्चिरजीविनस्ते ॥ १ ॥

अर्जुन वृक्ष की छाल का चूर्ण घी, दूध वा गुड़ के शर्बत से मिलाकर पिलावें तो हृदयरोग, जीर्णज्वर, रक्तपित्त इन सब रोगों को जीतता है तथा आयु को बढ़ाता है ॥ १ ॥

अथैणशृङ्गभस्मयोगः—शरावसंपुटे दग्ध्वा शृंगं हारिणजं पिबेत् ।
गव्येन सर्पिषा पिष्टं हृच्छूलं नश्यति ध्रुवम् ॥ १ ॥

हिरण के सींग को शरावसम्पुट में बंद कर के गजपुट में भस्म कर दे । इस गौ के घी में पीसकर खाने को देवें तो निश्चय से हृदय का शूल नष्ट होता है ॥ १ ॥

अथ वृन्दात्कटुकादिः—पिष्ट्वा वा कटुका पेया सयष्टीका सुखाम्बुना ।
जीर्णज्वरं रक्तपित्तं हृद्रोगं च व्यपोहति ॥ १ ॥

कुटकी और मुलठ्ठी दोनों को पीसकर सुखोष्ण या कोसे जल से पीवे तो

जीर्णज्वर, रक्तपित्त, हृद्रोग ये सभी नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथ घृतानि ।

अथाऽऽदौ वल्लभघृतम्—शतार्धमभयानां तु सौवर्चलपलद्वयम् ।
पचेत्कल्कैर्घृतप्रस्थं दत्त्वा क्षीरं चतुर्गुणम् ।
घृतं वल्लभकं नाम्ना श्रेष्ठं हृद्रोगनाशनम् ॥ १ ॥

बड़ी हरड़ ५० संख्या ले, सोंचलनमक दो पल ले । दोनों का कल्क बना लें । इस में एक प्रस्थ गौ का घी डाले और चार प्रस्थ गौ का दूध डालकर पकावे । घृतमात्र शेष रहने पर उतार कर छानले । इसे वल्लभघृत कहते हैं । यह हृदयरोग को अच्छा करता है ॥ १ ॥

अथ यष्ट्यादिघृतम्—यष्टीनागबलोदीच्यार्जुनैः सर्पिः सुसाधितम् ।
हृद्रोगक्षयपित्तास्रश्वासकासज्वरार्तिजित् ॥ १ ॥

मुलठ्ठी, नागबला, सुगंधबाला, अर्जुन की छाल इन को समभाग लेकर कल्क करे । इस से चौगुना गौ का घी और घी से चौगुना जल डालकर घृत पाक करे । इस घी के सेवन से हृदयरोग, क्षय, रक्तपित्त, श्वास, कास तथा ज्वर नष्ट होते हैं ॥ १ ॥ इति घृतानि ॥

अथ वृन्दात्पुनर्नवादितैलम्—

पुनर्नवादारुसपञ्चमूलरास्नायवाङ्कोलकपित्थबिल्वम् ।
पक्त्वा जले तेन पचेच्च तैलमभ्यङ्गपानेऽनिलहृद्गदघ्नम् ॥ १ ॥

पुनर्नवा, दारुहल्दी, छोटी कटेली, बड़ी कटेली, गोखरू, शालपर्णी, पृष्टपर्णी रास्ना, जौ, अङ्कोल की जड़, कैथ, बिल का गूदा इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर आठ गुणा जल डालकर चौथाई शेष रख । इस क्वाथ से चौथाई तिल का तेल मिलाकर अग्नि पर पकावे । तैलमात्र शेष रहे तो उतार कर छान लेवे । इस तेल की मालिश करने से, पीने से वातजरोग हृद्रोग अथवा वातज-हृद्रोग नष्ट होता है ॥ १ ॥

अथ रसाः ।

तत्राऽऽदौ त्रिनेत्रो रसः—रसगन्धाभ्रभस्मानि पार्थवृक्षत्वगम्बुना ।
एकविंशतिधा घर्मे भावितानि विधानतः ॥१॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, अभ्रकभस्म इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग लेकर पहले कज्जली करे फिर शेष द्रव्य मिलाकर अर्जुनवृक्ष की छाल के स्वरस से २१ बार धूप में भावित करें ॥ १ ॥

माषमात्रमिदं चूर्णं मधुना सह लेहयेत् ।
वातजं पित्तजं श्लेष्मसंभूतं वा त्रिदोषजम् ।
क्रिमिजं चापि हृद्रोगं निहन्त्येव न संशयः ॥ २ ॥

इस चूर्ण को १ माशाभर लेकर शहद में मिलाकर खाने से वातज, पित्तज, कफज, त्रिदोषज और कृमिज हृद्रोग निःसन्देह नष्ट होता है ॥ २ ॥

अथ हृदयार्णवरसः—सूतार्कगन्धं क्वाथेन वराया मर्दयेद्दिनम् ।
काकमाच्या वटीं कृत्वा चणमात्रां तु भक्षयेत् ।
हृदयार्णवनामाऽयं हृद्रोगदलनो रसः ॥ १ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक और शुद्ध ताम्रभस्म इन सबको यथाविधि खरल करे फिर त्रिफला के क्वाथ से १ दिन मर्दन करे । फिर मकोय के स्वरस से खरल करके चने के बराबर गोलियां बनावे । यह हृदयार्णव रस हृद्रोग को नष्ट करने वाला है ॥ १ ॥

अथ पथ्यापथ्यम् ।

शालिमुद्गा यवा मांसं जाङ्गलं मरिचान्वितम् ।
पटोलं कारवेल्लं च पथ्यं प्रोक्तं हृदामये ॥ १ ॥

शाली चावल, मूंग, जौ, जांगल जीवों के मांसरस में काली मिरच का चूर्ण डालकर सेवन करना, परवल, करेला ये सब हृदय रोग में पथ्य हैं ॥ १ ॥

तैलाम्लतक्रगुर्वन्नकषायश्रममातपम् ।
रोषं स्त्रीनर्म चिन्तां वा भाष्यं हृद्रोगवांस्त्यजेत् ॥ २ ॥

तेल, अम्लरस, तक्र, भारी अन्न, कसैले रस, श्रम और धूप में फिरना, क्रोध करना, स्त्री सेवन, चिन्ता करना बहुत बोलना ये हृदय रोगी त्याग देवे ॥२॥ इति हृद्रोगचिकित्सा ॥

इति हरद्वारीय गुरुकुल विश्वविद्यालयस्नातकेन श्रीविद्याधरविद्यालंकारेण लवपुरीय श्रीमद्दयानन्दायुर्वेद महाविद्यालयीय वैद्यकविराजोपाधिधारिणा राजयक्ष्मचिकित्सकेन रसेन्द्रसार संग्रह टीकाकर्त्रा कृतायां योगरत्नाकरस्य रत्नगर्भा नाम्नि टीकायां हृद्रोग प्रकरणं समाप्तम् ।

अथ उरोग्रहनिदानम् ।

अत्यभिष्यन्दिगुर्वन्नशुष्कपूत्यामिषाशनात् ।
सास्रं मांसं यकृत्प्लीह्नोः सद्यो वृद्धिं यदा गतम् ॥ १ ॥

अत्यन्त अभिष्यन्दी पदार्थ सेवन करने से, भारी अन्न खाने, सूखें हुए तथा सड़े हुए बूदार मांस खाने से । जब जिगर और तिल्ली मांसरक्त से मिलकर शीघ्र ही बढ़ जाते हैं ॥ १ ॥

उरोग्रहं तदा कुक्षौ कुरुतः कफमारुतौ ।
सस्तम्भं सज्वरं घोरं रूक्षं स्पर्शासहं गुरुम् ॥ २ ॥

तब कफ और वायु कुक्षि में भरकर उरोग्रह रोग को करते हैं । यह रोग स्तम्भ से युक्त घोर ज्वर से युक्त, रूखा, स्पर्श के अयोग्य तथा भारी होता है ॥ २ ॥

आध्मानं कुक्षिहृत्कण्ठे वातविण्मूत्ररोधतः ।

तन्द्रारोचकशूलानि तस्य लिङ्गानि निर्दिशेत् ॥ ३ ॥

कुक्षि, हृदय तथा कण्ठ में आध्मान होता है, वात, मूत्र तथा मल का अवरोध हो जाता है अर्थात् रुकावट होती है। तन्द्रा, अरुचि, शूल ये सभी उरोग्रह रोग के लक्षण हैं ॥ ३ ॥ इत्युरोग्रह निदानम् ॥

अथ उरोग्रहचिकित्सा ।

अत्राऽऽशु स्वेदनं युक्त्या वमनं रक्तमोक्षणम् ।
तीक्ष्णैर्निरूहणं चैकं क्रमाल्लङ्घनमाचरेत् ॥ १ ॥

उरोग्रह रोग में शीघ्र ही स्वेद देवे, वमन करावे, रक्त निकलवावे, तीक्ष्ण द्रव्यों से एक निरूहण वस्ति देवे, लंघन देवे ये सभी कर्म क्रमशः करे ॥ १ ॥

पुत्रजीवकशिग्रुत्वक्सूर्यावर्तबलोद्भवाः ।
रसा एकैकशः कोष्णा द्विशो वा रामठाश्रिताः ॥ २ ॥

पुत्रजीवक या जीयापोता, सुहांजने की छाल, सूर्यमुखी, बला इन में से एक एक द्रव्य का रस वा दो २ का रस गरम करके हींग मिलाकर पिलावे ॥ २ ॥

सपञ्चलवणाः पेयास्त्रिवृद्गुडसुकल्किताः ।
तन्निवृत्तौ यथालाभं मूत्रतैलसुरासवैः ॥ ३ ॥

तथा पांचों लवण मिलाकर तथा त्रिवी और गुड के कल्क से मिलाकर पिलावे। उरोग्रह रोग के हट जाने पर गोमूत्र, तिल का तेल, सुरा अथवा आसव इन में से कोई एक लेकर ॥ ३ ॥

चव्याम्लवेतसक्षाररसरामठसाचित्रकान् ।
पिबेत्तैलारनालाभ्यामुरोग्रहनिवृत्तये ॥ ४ ॥

चव्य, अम्लवेत, यवक्षार, हींग, चीतामूल इनके चूर्ण को तेल और कांजी से पीवे, इससे उरोग्रह रोग नष्ट होता है ॥ ४ ॥

यो वा नरस्यात्र कृतस्य कर्मणो विधिर्विरुद्धो न भवेन्मनागपि ।
यथाबलं वीक्ष्य च शुद्धविग्रहं तथाविधं पथ्यमपि प्रयोजयेत् ॥५॥

इस रोग में कहे हुए सब कर्म करने के बाद जो पथ्य रोगी के तनिक भी विरुद्ध न पड़ें। उन को रोगी के बलानुसार पथ्यरूप में देवे। परन्तु इस से पूर्व रोगी का शरीर सर्वथा शुद्ध कर रखना चाहिये ॥ ५ ॥ इत्युरोग्रहचिकित्सा श्रीहरिश्चन्द्रस्य ।

इति हरद्वारीय गुरुकुलविश्वविद्यालयस्नातकेन श्रीविद्याधरविद्यालंकारेण लवपुरीय श्रीमद्दयानन्दायुर्वेदमहाविद्यालयीय वैद्यकविराजोपाधिधारिणा जलचिकित्साविशेषज्ञेन रसेन्द्रसारसंग्रहटीकाकर्त्रा कृतायां योगरत्नाकरस्य रत्नगर्भाभिधटीकायां उरोग्रहरोगप्रकरणं समाप्तम् ।

अथातो मूत्रकृच्छ्रनिदानम्।

व्यायामतीक्ष्णौषधरूक्षमद्यप्रसङ्गनृत्यद्रुतपृष्ठयानात्।
आनूपमत्स्याध्यशनादजीर्णात्स्युर्मूत्रकृच्छ्राणि नृणामिहाष्टौ॥१॥

व्यायाम से, तीक्ष्ण औषधियों के सेवन से, रूखे अन्नपानों से, मद्य पीने से, मैथुन से, नृत्य से, तेज चलने से तथा घोड़े आदि की पीठ पर सवारी करने से। आनूप मांसखानेसे मत्स्यसेवनसे, अध्यशनसे, अजीर्णसे, इन कारणोंसे मनुष्यों को आठ प्रकारके मूत्रकृच्छ्र होते हैं॥१॥

अथ तस्य संप्राप्तिमाह—

पृथङ्मलाः स्वैः कुपिता निदानैः सर्वेऽथवा कोपमुपेत्य बस्तौ।
मूत्रस्य मार्गं परिपीडयन्ति यदा तदा मूत्रयतीह कृच्छ्रात्॥२॥

अपने २ कारणों से कुपित हुए २ दोष पृथक् २ अथवा मिलित होकर बस्ति में कुपित होकर जब मूत्र के मार्ग को पीड़ित करते हैं तब कठिनता से मूत्र आता है॥१॥

अथ वातजमाह—

तीव्रा हि रुग्वङ्क्षणबस्तिमेढ्रे स्वल्पं मुहुर्मूत्रयतीह वातात्॥३॥

वंक्षण, बस्ति तथा लिंग में तीव्र पीड़ा होती है, थोड़ा २ तथा बार २ मूत्र आता है ये लक्षण वातिक मूत्रकृच्छ्र के हैं॥३॥

अथ पित्तजमाह—

पीतं सरक्तं सरुजं सदाहं कृच्छ्रं मुहुर्मूत्रयतीह पित्तात्॥४॥

पित्तज मूत्रकृच्छ्र में मूत्र पीला २ रक्त से मिला हुआ, पीड़ युक्त, दाहयुक्त तथा कठिनता से बार २ आता है॥४॥

अथ श्लैष्मिकमाह—

बस्तेः सलिङ्गस्य गुरुत्वशोफौ मूत्रं सपिच्छं कफमूत्रकृच्छ्रे॥५॥

लिंग और बस्ति में गुरुत्व तथा शोथ होता है, तथा मूत्र पिच्छयुक्त होता है॥५॥

अथ त्रिदोषजमाह—

सर्वाणि रूपाणि च संनिपाताद्भवन्ति तत्कृच्छ्रतमं हि कृच्छ्रम्॥६॥

सभी दोषों के कुपित होने से सभी रूप रोग में प्रगट होते हैं। ऐसा मूत्रकृच्छ्र रोग कष्ट साध्य है॥६॥

अथ शल्यजमाह—**मूत्रवाहिषु शल्येन क्षतेष्वभिहतेषु च।**
मूत्रकृच्छ्रं तदाघाताज्जायते भृशवेदनम्।
वातकृच्छ्रेण तुल्यानि तस्य लिङ्गानि निर्दिशेत्॥७॥

मूत्रवाहि स्रोतों के शल्य से क्षत या अभिहत हो जाने पर, उस आघात से भी मूत्रकृच्छ्ररोग होजाता है इस में अत्यन्त पीड़ा होती है॥ उस के लक्षण

वातिकमूत्रकृच्छ्र के समान होते हैं ॥ ७ ॥

अथ पुरीषजमाह—**शकृतस्तु प्रतीघाताद्वायुर्विगुणतां गतः ।**
आध्मानं वातशूलं च मूत्रसङ्गं करोति च ॥ ८ ॥

मल के रुक जाने से वायु विगुण होकर आध्मान तथा वातशूल को करता है तथा मूत्र को रोकता है ॥ ८ ॥

अथाश्मरीजमाह—**अश्मरीषु तु तत्पूर्वं मूत्रकृच्छ्रमुदाहृतम् ॥ ९ ॥**

अश्मरी या पथरीरोग से हुए २ मूत्रकृच्छ्ररोग में पथरी से युक्त मूत्र आता है ॥ ९ ॥

अथ शुक्रजमाह—**शुक्रदोषैरुपहते मूत्रमार्गे विधारिते ।**
सशुक्रं मूत्रयेत्कृच्छ्राद्बस्तिमेहनशूलवान् ॥ १० ॥

वीर्य के दोषों से मूत्रमार्ग के उपहत होने पर विधारण किया हुआ वीर्य मूत्रकृच्छ्ररोग को उत्पन्न कर दता है । उस में वीर्य के साथ २ कठिनता से मूत्र आता है, बस्ति और मेहन अर्थात् लिंग में शूल होता रहता है ॥ १० ॥

अथावान्तरभेदमाह—**अश्मरी शर्करा चैव तुल्यसंभवलक्षणे ।**
शर्करायां विशेषं तु शृणु कीर्तयतो मम ॥११॥

अश्मरी तथा शर्करा दोनों रोगों की उत्पत्ति के कारण तथा लक्षण एक समान ही हैं । शर्करा के विषय में विशेष विवरण लिखते हैं ॥ ११ ॥

पच्यमानाऽश्मरी पित्ताच्छोष्यमाणा च वायुना ।
विमुक्तकफसंधाना क्षरन्ती शर्करा मता ॥ १२ ॥

अश्मरी पित्त से पकती हुई और वायु से सुखाई जाती हुई, कफ के सन्धान से विमुक्त हुई २ अर्थात् पृथक् हुई २ क्षरण करती हुई अर्थात् टूट फूटकर पृथक् होती हुई शर्करा कहाती है ॥ १२ ॥

हृत्पीडा वेपथुः शूलं कुक्षौ वह्निश्च दुर्बलः ।
तथा भवति मूर्च्छा च मूत्रकृच्छ्रं च दारुणम् ॥ १३ ॥

इस शर्करा से हृदय में पीड़ा होती है, कंपन होता है, पेट में शूल होता है तथा जठराग्नि मन्द हो जाती है । तथा मूर्च्छा होती है और भयंकर मूत्रकृच्छ्र हो जाता है ॥ १३ ॥

अथ मूत्रकृच्छ्रचिकित्सा ।

तत्राऽऽदौ वातमूत्रकृच्छ्रम्—

अभ्यञ्जनस्नेहनिरूहबस्तिस्वेदोपनाहोत्तरबस्तिसेकान् ।
स्थिरादिभिर्वातहरैश्च सिद्धान्दद्याद्रसांश्चानिलमूत्रकृच्छ्रे ॥१॥

वातज मूत्रकृच्छ्र में अभ्यंग, स्नेह, निरूह बस्ति देना, स्वेद देना, उपनाह, उत्तर बस्ति देना, सेक अर्थात् औषधादि के क्वाथ से सिंचन करना । तथा (स्थिरा शालपर्णी) शालपर्णी आदि वातनाशक द्रव्यों से सिद्ध हुए २ रसों को वातिक मूत्र

कृच्छ्र में देना चाहिये ॥१॥

अमृता नागरं धात्री वाजिगन्धा त्रिकण्टकम्।
निष्काथ्य प्रपिबेत्काथं मूत्रकृच्छ्रे समीरजे ॥ २ ॥

गिलोय, सोंठ, आंवला, असगन्ध, गोखरु इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग लेकर सबको मिलित दो तोला ले, जल ३२ तोला डालकर क्वाथ करे जब आठ तोला शेष रहे तो उतार छान कर पीवे। इससे वातज मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है ॥ २ ॥ इति वातकृच्छ्रम्।

अथ पित्तकृच्छ्रम्।

सेकावगाहाः शिशिरप्रदेहाः श्रेष्ठो विधिर्बस्तिपयोविरेकाः।
द्राक्षाविदारीक्षुरसैर्घृतं च कृच्छ्रेषु पित्तप्रभवेषु कार्याः ॥ १ ॥

पित्तज मूत्र कृच्छ्र में जलादिका सिंचन, अवगाहन, शिशिर द्रव्यों का लेप, बस्ति तथा दूध आदि पीना तथा विरेचन देना। दाख, विदारीकन्द, गन्ने का रस, इनसे घी पकाकर उस घी को देना चाहिये ॥ १ ॥

अथ तृणपञ्चमूलक्वाथपयसी—

कुशः काशः शरो दर्भ इक्षुश्चेति तृणोद्भवम्।
पित्तकृच्छ्रहरं पञ्चमूलं बस्तिविशोधनम्।
एतत्सिद्धं पयः पीतं मेढ्रगं हन्ति शोणितम् ॥ १ ॥

कुशा की जड़, कास की जड़, शर की जड़, दर्भ की जड़ तथा गन्ने की जड़ इनको समभाग लेकर काथ करे। इससे पित्तकृत मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है तथा बस्ति की शुद्धि होती है। यदि इसी पञ्चतृण मूल के साथ क्षीरपाक करके उस दूध को पिलाया जाये तो यह लिंग से निकलते हुए खून को बन्द कर देता है ॥१॥

अथ शतावर्यादिक्वाथः—

शतावरीकाशकुशश्वदंष्ट्राविदारिशालीक्षुकसेरुकाणाम्।
काथं सुशीतं मधुशर्कराभ्यां युक्तं पिबेत्पैत्तिकमूत्रकृच्छ्रे ॥ १ ॥

शतावर, कास की जड़, कुशा की जड़, गोखरू, विदारीकंद, शाली की जड़, गन्ने की जड़ तथा कसेरू। इन सब को समभाग लेकर काथ करे। इस क्वाथ को सुशीतल कर के शहद और खांड से मिलाकर पीवे। इस से पैत्तिक मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है ॥ १ ॥

अथ हरीतक्यादिक्वाथः—

हरीतकीगोक्षुरराजवृक्षपाषाणभिद्धन्वयवासकानाम्।
काथं पिबेन्माक्षिकसंप्रयुक्तं कृच्छ्रे सदाहे सरुजे विबन्धे ॥१॥

हरड़, गोखरू, अम्लतास का फल, पाषाणभेद, धमासा इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर काथ करे। इस काथ को शीतल कर के शहद मिलाकर पिलावे। इस से दाह, पीडा तथा विबन्ध सहित मूत्रकृच्छ्र को लाभ होता है ॥१॥

अथोर्वारुकबीजयोगः—

उर्वारुबीजं मधुकं सदार्वि पिष्टे पिबेत्तण्डुलधावनेन।
दार्वीं तथैवाऽऽमलकीरसेन समाक्षिकां पित्तकृतेऽथ कृच्छ्रे॥१॥

खीरे के बीज, मुलहठी, दारुहल्दी इन को समभाग लेकर सिला पर पीसकर, चावलों के धोये जल से पिलावे तो पित्तमूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है॥ तथा दारुहल्दी को पीसकर आंवले के स्वरस में तथा शहद में मिलाकर पीने को दें इस से भी पित्तज मूत्रकृच्छ्र को आराम होता है॥ १॥

अथ वृन्दान्मन्थादियोगः—

मन्थं पिबेद्वा ससितं ससर्पिः शृतं पयो वाऽर्धसिताप्रयुक्तम्।
धात्रीरसं चेक्षुरसं पिबेद्वा कृच्छ्रे सरक्ते मधुना विमिश्रम्॥१॥

अथवा किसी मन्थ में घी तथा खांड मिलाकर पीवे। अथवा पकाकर शीतल किये हुए दूध में आधी खांड मिलाकर पीवे। अथवा आंवले का स्वरस वा ईख का स्वरस शहद मिलाकर पीवे तो रक्तयुक्त मूत्रकृच्छ्र दूर होता है॥ १॥

अथ द्राक्षादि—द्राक्षा सितोपलाकल्कं कृच्छ्रघ्नं मस्तुना युतम्।
पिबेद्वा कामतः क्षीरमुष्णं गुडसमन्वितम्।

दाख तथा मिश्री दोनों को समभाग लेकर दही के पानी के साथ मिलाकर खाने से मूत्रकृच्छ्ररोग नष्ट होता है। अथवा गुड़ से युक्त गरम किया हुआ दूध पीवे॥ १॥

अथ वृन्दान्नारिकेलादि—नारिकेलजलं योज्यं गुडधान्यसमन्वितम्।
सदाहं मूत्रकृच्छ्रं च रक्तपित्तं निहन्ति च॥ १॥

नारियल के जल में गुड़ तथा धनियां का चूर्ण मिलाकर पिलावें तो दाह-सहित मूत्रकृच्छ्र तथा रक्तपित्तरोग नष्ट होता है॥ १॥

अन्यच—रक्तस्य नारिकेलस्य जलं कतकसंयुतम्।
शर्करैलासमायुक्तं मूत्रकृच्छ्रहरं विदुः॥ १॥

लाल नारियल का जल निर्मली के फल से मिलाकर तथा खांड और छोटी इलायची के चूर्ण से मिलाकर पिलावे तो मूत्रकृच्छ्ररोग नष्ट होता है॥ २॥

अथ शतावर्यादिसर्पिः—

शतावरीकाशकुशश्वदंष्ट्राविदारिकेक्ष्वामलकल्कसिद्धम्।
सर्पिः पयो वा सितया विमिश्रं कृच्छ्रेषु पित्तप्रभवेषु योज्यम्॥१॥

शतावरी, कास की जड़, कुशा की जड़, गोखरू, विदारीकंद, ईख की जड़ तथा आंवला इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर कल्क करे। इस से घी वा दूध पकाकर खांड से मिलाकर पिलावें तो पित्तजमूत्रकृच्छ्ररोग नष्ट होता है॥१॥

इति पित्तकृच्छ्रम्॥

अथ श्लेष्मकृच्छ्रम् ।

क्षारोष्णतीक्ष्णौषधमन्नपानं स्वेदो यवान्नं वमनं निरूहः ।
तक्रं च तिक्तोषणसिद्धतैलं बस्तिश्च शस्तः कफमूत्रकृच्छ्रे ॥ १ ॥

श्लेष्मजमूत्रकृच्छ्र में यवक्षारादि क्षार, उष्ण तथा तीक्ष्ण अन्नपान करने चाहियें । स्वेद देना, जौ का अन्न खाना, वमन तथा निरूह बस्ति देना । तक्र पिलाना, तिक्त तथा काली मिरचादि से पकाये हुए तेल सेवन कराना तथा बस्ति देना ये सभी बातें लाभ पहुंचाती हैं ॥ १ ॥

अथ मूत्रादियोगः—**मूत्रेण सुरया वाऽपि कदलीस्वरसेन वा ।**
कफकृच्छ्रविनाशाय सूक्ष्मां पिष्ट्वा त्रुटिं पिबेत् ॥ १ ॥

छोटी इलायची के चूर्ण को गोमूत्र से, सुरा से वा केले के स्वरस से पीवे तो कफज मूत्रकृच्छ्र का नाश होता है ॥ १ ॥

अथ तक्रादियोगो वृन्दात्—

तक्रेण युक्तं सितवारुकस्य बीजं पिबेत्कृच्छ्रविघातहेतोः ।
पिबेत्तथा तण्डुलधावनेन प्रवालचूर्णं कफमूत्रकृच्छ्रे ॥ १ ॥

तक्र के साथ शालिञ्च शाक के बीजों का चूर्ण पीवे तो मूत्रकृच्छ्ररोग नष्ट होता है ॥ अथवा चावलों के जल के साथ प्रवालभस्म देने से भी कफजमूत्रकृच्छ्र अच्छा होता है ॥ १ ॥ इति श्लेष्मकृच्छ्रम् ॥

अथ त्रिदोषकृच्छ्रम् ।

सर्वे त्रिदोषप्रभवे तु कृच्छ्रे यथाबलं कर्म समीक्ष्य कार्यम् ।
तत्राधिके प्राग्वमनं कफे स्यात्पित्ते विरेकः पवने तु बस्तिः ॥१॥

त्रिदोषज मूत्रकृच्छ्र में सब क्रिया रोगी का बल देखकर करनी चाहिये । उन दोषों में से यदि कफ की अधिकता हो तो पहले वमन करावे, पित्त की अधिकता हो तो पहले विरेचन देवें । वात की अधिकता हो तो पहले बस्ति देवे ॥ १ ॥

अथ बृहत्यादिक्वाथः—**बृहतीधावनीपाठायष्टीमधुकलिङ्गकान् ।**
पक्त्वा क्वाथं पिबेन्मर्त्यः कृच्छ्रे दोषत्रयोद्भवे ॥१॥

बड़ी कटेली, पृष्टपर्णी, पाठा, मुलहठी, इन्द्रजौ, इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर क्वाथ करे । इस क्वाथ को त्रिदोषज मूत्रकृच्छ्र में पीवे ॥ १ ॥

अथ शतावर्यादिक्वाथः—

शतावर्यास्तु मूलानां निक्वाथःससितामधुः ।
मूत्रदोषं निहन्त्याशु वातपित्तकफोद्भवम् ॥ १ ॥

शतावरी की जड़ का क्वाथ खांड और शहद मिलाकर पीने से वातपित्तकफज मूत्र के दोष शीघ्र ही अच्छे हो जाते हैं ॥ १ ॥

अथ गुडदुग्धयोगः—**गुडेन मिश्रितं दुग्धं कदुष्णं कामतः पिबेत् ।**

मूत्रकृच्छ्रेषु सर्वेषु शर्करा वातरोगनुत्॥ १॥

गुड से मिलाकर कुछ २ गरम दूध को यथेष्ट पीवे। तो सभी प्रकार के मूत्रकृच्छ्रों में लाभ होता है। शर्करारोग तथा वातरोग नष्ट होते हैं॥ १॥

इति त्रिदोषजमूत्रकृच्छ्रम्॥

अथाभिघातमूत्रकृच्छ्रम्।

मूत्रकृच्छ्रेऽभिघातोत्थे वातकृच्छ्रक्रिया हिता।
पञ्चवल्कलमृल्लेपः कवोष्णोऽत्र प्रशस्यते॥ १॥

अभिघातज मूत्रकृच्छ्र में वातकृच्छ्र की क्रिया करनी चाहिये। पञ्चवल्कल अर्थात् बड़, पीपल, गूलर, पिलखन तथा बेत की छाल इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर पीस ले तथा मिट्टी एकभाग ले। सबको जल में पीसकर गरम २ लेप करे तो अभिघातज मूत्रकृच्छ्र में लाभ होता है॥ १॥

अथ मन्थादियोगः—

मन्थं पिबेद्वा ससितं ससर्पिः शृतं पयो वाऽर्धसिताप्रयुक्तम्।
धात्रीरसं वेक्षुरसं पिबेद्वाऽभिघातकृच्छ्रे मधुना विमिश्रम्॥१॥

अथवा घी और खांड मिलाकर मन्थ पीवे। अथवा पकाया हुआ दूध आधा भाग खांड मिलाकर पीवे। अथवा आंवले के स्वरस में शहद या ईख के स्वरस में शहद मिलाकर पीवे तो अभिघातज मूत्रकृच्छ्र अच्छा होता है॥ १॥

इत्यभिघातकृच्छ्रम्॥

अथ शुक्रविबन्धजकृच्छ्रम्।

कृच्छ्रे शुक्रविबन्धोत्थे शिलाजतु समाक्षिकम्।
सक्षीरं ससितं सर्पिर्मद्वापि प्रपिबेन्नरः॥ १॥

शुक्रज मूत्रकृच्छ्र में शिलाजीत में शहद, दूध, खांड तथा घी मिलाकर पीवे तो लाभ होता है॥ १॥

शुक्रदोषविशुद्ध्यर्थं समदां प्रमदां श्रयेत्।
तृणपञ्चकमूलेन सिद्धं सर्पिः पिबेदपि॥ १॥

वीर्य के दोष की शुद्धि के लिये यौवनमदोन्मत्ता स्त्री के साथ मैथुन करे तो यह दोष दूर हो जाता है। अथवा तृणपंचमूल से पकाये हुए घी को पीवे इससे भी शुक्रज मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है॥ १॥

लेहः शुक्रविबन्धोत्थे शिलाजतुसमाक्षिकः।
बलाहिङ्गुयुतं क्षीरं सर्पिर्मिश्रं पिबेन्नरः।
मूत्रदोषविशुद्ध्यर्थं शुक्रदोषहरं परम्॥ २॥

शुक्रविबन्धजमूत्रकृच्छ्र में शिलाजीत शहद से मिलाकर चाटे। खिरैंटी तथा हींग से युक्त दूध में घी मिलाकर पीवे तो इससे मूत्र के दोष शुद्ध होते हैं तथा शुक्रदोष नष्ट करने में भी यह श्रेष्ठ है॥ २॥ इति वृन्दात्॥

अथ शकृद्विघातजं कृच्छ्रम् ।

स्वेदचूर्णक्रियाभ्यङ्गबस्तयः स्युः पुरीषजे ।
कृच्छ्रे तत्र विधिः कार्यः सर्वः शुक्रविबन्धजित् ॥ १ ॥

मल रोकने से पैदा हुए २ मूत्रकृच्छ्र में स्वेद देना, चूर्ण खिलाना, अभ्यङ्ग अर्थात् मालिश करना, तथा बस्ति देना ये सभी बातें तथा शुक्रविबन्धज मूत्र-कृच्छ्र के उपाय करने से यह पुरीषजमूत्रकृच्छ्र आरोग्य होता है ॥ १ ॥

अथ गोक्षुरादिक्वाथः—क्वाथो गोक्षुरबीजानां यवक्षारयुतः सदा ।
मूत्रकृच्छ्रं शकृज्जातं पीतः शीघ्रं निवारयेत् ॥१॥

गोखरू के बीजों के क्वाथ में यवक्षार मिलाकर पिलाने से शकृज्जात मूत्रकृच्छ्र शीघ्र ही अच्छा होता है ॥ १ ॥ इति शकृद्विघातजं कृच्छ्रम् ॥

अथाश्मरीजं कृच्छ्रम् ।

अश्मरीजे मूत्रकृच्छ्रे स्वेदाद्या वातजित्क्रिया ।
पाषाणभेदक्वाथस्तु कृच्छ्रमश्मरिजं जयेत् ॥ १ ॥

अश्मरीज मूत्रकृच्छ्र में स्वेद आदि वातनाशक क्रियायें करनी चाहियें। पाषाणभेद का क्वाथ पिलाने से अश्मरीज मूत्रकृच्छ्र अच्छा होता है ॥ १ ॥

अथैलादि—एलोपकुल्यामधुकाश्मभेदकौन्तीश्वदंष्ट्रावृषकोरुबूकैः ।
शृतं पिबेदश्मजतु प्रगाढं सशर्करं साश्मरिमूत्रकृच्छ्रे ॥ १ ॥

छोटी इलायची, (उपकुल्या दन्तीवृक्षे, पिप्पल्यां च) दन्तीमूल, मुलठी, पाषाणभेद, रेणुका के बीज, गोखरू, बांसा, एरण्ड का मूल इन सब को समभाग लेकर क्वाथ करे। इस क्वाथ में शिलाजीत मिलाकर खांड मिलाकर पिलावे। इस से अश्मरीयुक्त मूत्रकृच्छ्र अच्छा होता है ॥ १ ॥ इत्यश्मरीजं कृच्छ्रम् ॥

अथ सामान्यविधिः ।

अथ त्रिकण्टकादिक्वाथो—गदनिग्रहात् ।

त्रिकण्टकारग्वधदर्भकाशदुरालभापर्पटभेदपथ्याः ।
निघ्नन्ति पीता मधुनाऽश्मरीकां संप्राप्तमृत्योरपि मूत्रकृच्छ्रम् ॥१॥

गोखरू, अम्लतास, दर्भ की जड़, कास की जड़, जवासा, पित्तपापड़ा और हरड़ इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग मिलाकर मिलित दो तोला ले । इस में ३२ तोला पानी डाल कर पकावे। शेष आठ तोला रहे तो छानकर शीतल कर के शहद मिलाकर रोगी को पिलावे तो मृत्यु के निकट पहुंचे हुए अश्मरी और मूत्र कृच्छ्र के रोगी भी बच जाते हैं ॥ १ ॥

अथ पाषाणभेदादिः—

पाषाणभेदस्त्रिवृता च पथ्या दुरालभा पुष्करगोक्षुरं च ।
पलाशशृङ्गाटककर्कटीजबिजं कषायः सुनिरुद्धमूत्रे ॥ १ ॥

पाषाण भेद, त्रिवी, हरड़, जवासा, गोखरू, पोहकरमूल, ढाक के बीज, सिंघाड़े के बीज तथा ककड़ी के बीज, इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर क्वाथ करे। इस क्वाथ को पीने से रुका हुआ मूत्र सुगमता से होजाता है॥१॥

अथ समूलगोक्षुरादिः—समूलगोक्षुरक्वाथः सितामाक्षिकसंयुतः।
नाशयेन्मूत्रकृच्छ्राणि तथा चोष्णसमीरणम्॥१॥

गोखरू का जड़ सहित क्वाथ खांड तथा शहद मिलाकर पीने से मूत्रकृच्छ्र तथा उष्णवात रोग नष्ट होते हैं॥१॥

अथ यवादिर्वृन्दात्—यवोरुबूकस्तृणपञ्चमूलीपाषाणभेदैः सशतावरीभिः।
कृच्छ्रेषु गुल्मेष्वभयाविमिश्रैः कृतः कषायो गुडसंप्रयुक्तः॥१॥

जौ, एरण्डमूल, पंचतृणमूल के पांचों द्रव्य, पाषाणभेद, शतावर तथा हरड़ इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग लेकर क्वाथ करें। इसे छानकर गुड़ मिला कर पीने को दें। इस से मूत्रकृच्छ्र और गुल्मरोग नष्ट होते हैं॥१॥

अथैलादियोगः—एलाश्मभेदकशिलाजतुपिप्पलीनां
चूर्णानि तण्डुलजलैर्लुलितानि पीत्वा।
यद्वा गुडेन सहितान्यवलिह्य धीमा-
नासन्नमृत्युरपि जीवति मूत्रकृच्छ्री॥१॥

छोटी इलायची के बीज, पाषाणभेद, शिलाजीत, पीपल इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग लेकर इन सबका चूर्ण करे। इस चूर्ण को चावलों के जल में घोलकर पीने से। अथवा इस चूर्ण में गुड़ मिलाकर चाटने से मूत्रकृच्छ्ररोगी यदि मृत्युमुख में भी पहुंचा हो तो भी जी जाता है॥१॥

अथ क्षाराणां प्रयोगः—अङ्कोलतिलकाष्ठानां क्षारः क्षौद्रेण संयुतः।
दधिवार्यनुपानेन मूत्ररोधं नियच्छति॥१॥

अङ्कोल के काष्ठ का क्षार तथा तिल के पेड़ का क्षार, दोनों को समभाग लेकर शहद से मिलायें, और दही के पानी से मिलाकर पीवें तो मूत्ररोध दूर होता है॥१॥

सितातुल्यो यवक्षारः सर्वकृच्छ्रनिवारणः।
निदिग्धिकारसो वाऽपि सक्षौद्रः कृच्छ्रनाशनः॥२॥

यवक्षार में समभाग खांड मिलाकर पिलाने से सभी मूत्रकृच्छ्र अच्छे हो जाते हैं। छोटी कटेली के रस में शहद मिलाकर पिलावें तो भी सब प्रकार के मूत्रकृच्छ्र अच्छे होते हैं॥२॥

यवक्षारसमायुक्तं पिबेत्तक्रं च कामतः।
मूत्रकृच्छ्रविनाशाय तथैवाश्मरिनाशनम्॥३॥

यवक्षार से युक्त छाछ को यथेष्ट पीवे, इससे मूत्रकृच्छ्र तथा अश्मरी दोनों नष्ट होते हैं॥३॥

माषमेकं यवक्षारं कूष्माण्डस्वरसं पलम्।
शर्कराकर्षसंयुक्तं मूत्रकृच्छ्रनिवारणम् ॥ ४ ॥

यवक्षार एक माषा लें, पेठे का स्वरस एक पल लें, खांड एक कर्ष मिलाकर पिलावें तो मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है ॥ ४ ॥

अथ वृन्दाद्दाडिमादियोगः—दाडिमाम्लयुतां हृद्यां शुण्ठीजीरकसंयुताम्।
पीत्वा सुरां सलवणां मूत्रकृच्छ्रात्प्रमुच्यते ॥१॥

सुरा में खट्टे अनार का स्वरस, सोंठ, जीरा तथा सेंधालवण मिलाकर पीने को देवे इससे मूत्रकृच्छ्र रोग दूर होता है ॥ १ ॥

अथोर्वारुबीजकल्कं वृन्दात्—

उर्वारुबीजकल्कं च श्लक्ष्णं पिष्ट्वाऽक्षसंमितम्।
धान्याम्ललवणैः पेयं मूत्रकृच्छ्रविनाशनम् ॥ १ ॥

खीरे के बीजों का कल्ककर एक अक्षभर लेवे, इसे धान्याम्ल में सेंधालवण मिलाकर पीने को देवे। इससे मूत्रकृच्छ्र रोग नष्ट होता है ॥ १ ॥

अथ त्रिफलादिकल्कः—

त्रिफलायाः सुपिष्टायाः कल्कं कोलसमन्वितम्।
वारिणा लवणीकृत्य पिबेन्मूत्ररुजापहम् ॥ १ ॥

हरड़, बहेड़ा, आंवला इन तीनों को समभाग लेकर कल्क करे। इस कल्क को सेंधानमक मिलाकर खावे और ऊपर से पानी पीवे तो मूत्रकृच्छ्र रोग दूर होता है ॥ १ ॥

अथैलादिः—पिबेन्मद्येन सूक्ष्मैलां धात्रीफलरसेन वा।
शितिवारकबीजं वा तक्रे श्लक्ष्णं च चूर्णितम् ॥ १ ॥

छोटी इलायची के बीजों को मद्य से पीवे वा आंवले के स्वरस से पीवे। अथवा सुनिषण्णक या शुशुनि शाक के बीजों के चूर्ण को पीसकर तक्र के साथ पीवे। उससे मूत्रकृच्छ्र रोग अच्छा होता है ॥ १ ॥

अथ हरिद्रादिः—हरिद्रागुडकर्षैकं चाऽऽरनालेन वा पिबेत्।
वन्ध्याकर्कोटिकाकन्दंभक्षेत्क्षौद्रसितायुतम्।
अश्मरीं हन्ति नो चित्रं रहस्यं हि शिवोदितम् ॥ १ ॥

हल्दी और गुड़ मिलाकर १ कर्ष की मात्रा कांजी के साथ पीने से। अथवा बांझ ककोड़े के कन्द का चूर्ण शहद और खांड मिलाकर खाने से अश्मरी रोग नष्ट होता है। यह शिव जी का कहा हुवा रहस्य है। इसमें चकित होने की कोई बात नहीं ॥ १ ॥

अथ योगसारादेलादि—एलागोक्षुरयोश्चूर्णं शिशोर्देयं मधुप्लुतम्।
मूत्रकृच्छ्रापहः क्वाथः पेयस्तन्मूलवारिणा ॥ १ ॥

छोटी इलायची और गोखरु का चूर्ण शहद मिलाकर छोटे बच्चे को देना

चाहिये। इससे मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है। तथा गोखरू के जड़ का क्वाथ बनाकर पीने से भी मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है॥ १॥

गोक्षुरजस्तथा क्वाथो यवक्षारयुतः शुभः।
सर्वकृच्छ्रविनाशाय शिलाजतुयुतोऽथ वा॥ २॥

गोखरू का क्वाथ यवक्षार को मिलाकर पिलाने से अथवा शिलाजीत को मिलाकर पिलाने से सब प्रकार के मूत्रकृच्छ्र रोग को नष्ट करता है॥ १॥

अथ खर्जूरादिचूर्णम्—खर्जूरामलबीजानि पिप्पली च शिलाजतु।
एलामधुकपाषाणं चन्दनोर्वारुबीजकम्॥ १॥

पिण्डखजूर, आंवले के बीजों की गिरी, पीपली, शिलाजीत, सफ़ेद इलायची के बीज, मुलैठी, पाषाणभेद, सफेद चन्दन, ककड़ी के बीज॥ १॥

धान्यकं शर्करायुक्तं पातव्यं ज्येष्ठवारिणा।
अङ्गदाहं लिङ्गदाहं गुदवङ्क्षणशुक्रजम्॥
शर्कराश्मरिशूलघ्नं बल्यं वृष्यकरं परम्॥ २॥

धनियां इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग लेकर चूर्णकर समभाग खांड से मिलाकर चावलों के जल से पीवे तो अंगों का दाह, लिंग का दाह, गुदा, वङ्क्षण तथा वीर्य के दाह को नष्ट करता है और शर्करा और अश्मरी के शूल को नष्ट करता है और बलकारक है। और परम वृष्य है। (नोट—ज्येष्ठाम्बु का अर्थ "शालि तण्डुल पानीयं ज्ञेयं ज्येष्ठाम्बु संज्ञितम्" चावलों का पानी है परन्तु इसी योगरत्नाकर में दाह रोग में जो खर्जूरादि चूर्ण लिखा है और जिसके सब द्रव्य यही हैं उसमें इतना पाठ और है, "नाशयेन्मूत्र रोगांश्च तथा शुक्रभवानपि, शर्करा सहितं यष्टी कषायं प्रपिवेदनु" अर्थात् मूत्र वीर्य और शर्करा सम्बन्धी रोगों को नाश करने के लिये मुलेठी का काढ़ा पीना चाहिये)॥ २॥

अथेक्षुरसादियोगः—भ्रष्टेक्षुस्वरसं ग्राह्यमाखुविट्सहितं पिबेत्।
नाशयेन्मूत्रकृच्छ्राणि सद्य एव न संशयः॥ १॥

गन्ने को आग में गरम कर उसका स्वरस निकाल कर चूहे की मींगनों के चूर्ण के साथ पीवे तो निश्चय से तुरन्त ही मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है॥ १॥

अथ कुटजयोगः—पिष्ट्वा गोपयसा श्लक्ष्णं कुटजस्य त्वचं पिबेत्।
तेनोपशाम्यते क्षिप्रं मूत्रकृच्छ्रं सुदारुणम्॥ १॥

कुड़े की छाल पीसकर गौ के दूध के साथ पीवे तो भयंकर मूत्रकृच्छ्र शीघ्र शान्त होता है॥ १॥

अथ त्रिकण्टकाद्यं घृतम्—

त्रिकण्टकैरण्डकुशाद्यभीरुकर्कारुकेक्षुस्वरसेन सिद्धम्।
सर्पिर्गुडार्धांशयुतं प्रपेयं कृच्छ्राश्मरीमूत्रविघातहारि॥ १॥

गोखरू, एरण्ड की जड़, कुशा आदियों की जड़, शतावर, ककड़ी के बीज इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर कल्क करे। इस कल्क से चौगुना गौ का घी और घी से चौगुना गन्ने का स्वरस डालकर घी पका लेवे। इस घी में आधा भाग गुड़ मिलाकर पिलावे तो मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी तथा मूत्राघात रोग नष्ट होते हैं।

अथ शतावरीघृतम्—घृतप्रस्थं शतावर्या रसस्यार्धाढकं पचेत्।
अजाक्षीरेण संयुक्तं चतुष्प्रस्थान्वितेन तु ॥ १ ॥

गौ का घी एक प्रस्थ, शतावर का रस आधा अढ़क मिलाकर पकावे। जब घृत मात्र शेष बचे। तब बकरी का दूध ४ प्रस्थ डालकर पकाकर घी मात्र शेष रक्खे ॥ १ ॥

द्विगोक्षुरामृतानन्ताकाशकण्टकिनीरसान्।
कुडवार्धं पृथग्दत्वा पिष्टैर्यष्टिकटुत्रयम् ॥ २ ॥

छोटा गोखरू, बड़ा गोखरू, गिलोय, अनन्तमूल, कासमूल, छोटी कटेली इन में से प्रत्येक के स्वरस को आधा २ कुड़व लेकर एकत्र मिलाकर घी में डालकर पकावे। और आगे लिखे द्रव्यों का कल्क डाले। मुलहठी, सोंठ, मिरच, पीपल ॥ २ ॥

श्वदंष्ट्राफलिनीदुग्धाशिलाजत्वश्मभेदकैः।
त्रिसुगन्धान्वितैरर्धपलांशैः सघृतं पुनः ॥ ३ ॥

गोखरू, प्रियंगु, दूधी बूटी, शिलाजीत, पाषाणभेद, दालचीनी, इलायची, तेजपात इनमें से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण आधा २ पल लेकर कल्क करे और घी में डालकर चतुर्गुण जल से पकावे ॥ ३ ॥

शर्कराद्विपलोपेतं क्षौद्रपादसमन्वितम्।
हन्ति कृच्छ्राणि सर्वाणि मूत्रदोषाश्मशर्कराः ॥
सर्वकृच्छ्राणि हन्त्याशु एतच्छतावरीघृतम् ॥ ४ ॥

घृत मात्र शेष रहने पर इसमें दो पल खांड और घी से चौथाई भाग शहद मिलावे। यह शतावरी घी सब प्रकार के मूत्र कृच्छ्रों को, मूत्र दोषों को, अश्मरी और शर्करा को शीघ्र दूर करता है ॥ ४ ॥

अथ त्रिकण्टकादिगुग्गुलुः—

त्रिकण्टकानां क्वथितेऽष्टनिघ्ने पुरं पचेत्पाकविधानयुक्त्या।
फलत्रिकव्योषपयोधराणां चूर्णं पुरेण प्रमितं प्रदद्यात् ॥ १ ॥

गोखरू के क्वाथ का आठवां भाग शेष रखे, इसमें शुद्ध गूगल डालकर गूगल पाक के समान पकावे। फिर त्रिफला, सोंठ, मिरच, पीपल, नागरमोथा इन सब में से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ भाग लेकर सबको एकत्र कर गूगल के समान लेकर मिला ले ॥ १ ॥

वटी प्रमेहं प्रदरं च मूत्राघातं च कृच्छ्रं च तथाऽश्मरीं च।

शुक्रस्य दोषान्सकलांश्च वातान्निहन्ति मेघानिव वायुवेगः ॥ २ ॥

इनकी वटी बना ले। इन गोलियों को बलानुसार खाने से प्रमेह, प्रदर, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी तथा सभी प्रकार के वीर्य के दोष तथा सभी प्रकार के वातरोग इस प्रकार नष्ट हो जाते हैं जैसे वायु के वेग से मेघ नष्ट हो जाते हैं॥२॥

अथ सेकलेपौ—

पिष्ट्वा श्वदंष्ट्राफलमूलिकाविडैर्वारुबीजानि सकाञ्जिकानि।
आलिप्यमानानि समानि बस्तौ मूत्रस्य निष्यन्दकराणि सद्यः॥१॥

गोखरु के बीज, मूली, विड्लवण, ककड़ी के बीज इन सबको समभाग लेकर कांजी से पीसकर बस्ति के स्थान पर लेप करें तो शीघ्र मूत्र को निकाल देते हैं ॥ १ ॥

बस्तावेरण्डतैलेन स्निग्धत्वे किंशुकोद्भवैः।
स्विन्नपुष्पैः स्वेदसेकं मूत्रकृच्छ्रोपशान्तये ॥ २ ॥

बस्ति को एरण्ड के तेल से स्निग्ध करके, केसुओं अर्थात् ढाक के फूलों को उबाल कर स्वेद करे तथा सिंचन करे इससे मूत्रकृच्छ्र शान्त होता तथा मूत्र निकलता है ॥ २ ॥

कोष्णाखुविट्कल्कलेपो बस्तेरुपरि कृच्छ्रिणः।
त्रपुसीबीजलेपो वा धारा वा किंशुकाम्भसः ॥ ३ ॥

चूहे की विष्ठा को जल में पीस कुछ गरम २ बस्ति पर लेप करने से। अथवा ककड़ी खीरे के बीजों का बस्ति पर लेप करने से। अथवा केसुओं को जल में उबालकर उस जलधारा को बस्ति पर डालने से ॥ ३ ॥

ध्वजच्छिद्रे चेन्दुदानं दानं वा चटकाविशः।
मेघनादशिफालेपः स्वेदो वा कर्कटाम्भसा ॥ ४ ॥

अथवा मूत्रेन्द्रिय के मुख के छिद्र में कपूर देने से। या चिड़ी की बीठ देने से। अथवा मेघनाद शाक की जड़ का बस्ति पर लेप करने से। अथवा केंकड़े के क्वाथ से स्वेद देने से ॥ ४ ॥

पातो वा कोष्णतैलस्य धारा वा कोष्णवारिणः।
नवैते पादिका योगा मूत्रकृच्छ्रहरा मताः ॥ ५ ॥

अथवा कोसे २ तेल की बस्ति पर धारा डालने से। अथवा गरम पानी की बस्ति पर धारा डालने से। इन ६ प्रकार के योगों से मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है। अर्थात् ये मूत्र ले आते हैं ॥ ५ ॥

अथ चन्द्रकलारसः संग्रहात्—

प्रत्येकं कर्षमात्रं स्यात्सूतं ताम्रं तथाऽभ्रकम्।
द्विगुणं गन्धकं चैव कृत्वा कज्जलिकां शुभाम् ॥ १ ॥

शुद्ध पारा १ कर्ष, शुद्ध तांबा भस्म १ कर्ष, अभ्रकभस्म १ कर्ष लेवे। शोधित आंवला सार गन्धक २ कर्ष लेवे। पहिले पारा गन्धक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलाकर एकत्र पीस ले ॥ १ ॥

मुस्तादाडिमदूर्वोत्थैः केतकीस्तनजद्रवैः।
सहदेव्याः कुमार्याश्च पर्पटस्य च वारिणा ॥ २ ॥

फिर नागरमोथा, अनार, दूबघास, केवड़ा, दूध, सहदेवी, घी कुमार, पित्तपापड़ा ॥ २ ॥

रामशीतलिकातोयैः शतावर्या रसेन च।
भावयित्वा प्रयत्नेन दिवसे दिवसे पृथक् ॥ ३ ॥

राम शीतला, शतावर इन में से प्रत्येक द्रव्य के स्वरस वा क्काथ से पृथक् २ एक २ दिन पूर्वोक्त द्रव्य को भावित करे ॥ ३ ॥

तिक्ता गुडूचिकासत्त्वं पर्पटोशीरमाधवी।
श्रीगन्धं सारिवा चैषां समानं सूक्ष्मचूर्णितम् ॥ ४ ॥

फिर कुटकी, गिलोय का सत, पित्तपापड़ा, खस, माधवी लता, श्वेत चन्दन, तथा शारिवा इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर चूर्ण करे और पूर्वोक्त भावित द्रव्यों के समभाग इस चूर्ण को लेकर उन द्रव्यों में मिला देवे ॥ ४ ॥

द्राक्षाफलकषायेण सप्तधा परिभावयेत्।
ततः पोताश्रयं कृत्वा वट्यः कार्याश्चणोपमाः ॥ ५ ॥

फिर दाख के क्काथ से सातवार भावना देवे फिर खरल में घोटकर चने के बराबर गोलियां बना ले ॥ ५ ॥

अयं चन्द्रकलानाम्ना रसेन्द्रः परिकीर्तितः।
सर्वपित्तगदध्वंसी वातपित्तगदापहः ॥ ६ ॥

यह चन्द्रकला नाम का रस सब प्रकार के पित्त के रोगों को नष्ट करता है तथा वात पित्त के रोगों को नष्ट करता है ॥ ६ ॥

अन्तर्बाह्यमहादाहविध्वंसनमहाघनः।
ग्रीष्मकाले शरत्काले विशेषेण प्रशस्यते ॥ ७ ॥

अन्दर के तथा बाहर के महादाह को नष्ट करने में प्रबल बादल के समान हैं। इसे ग्रीष्मकाल तथा शरद् काल में जब कि पित्त प्रकुपित होने का समय होता है, खावे तो विशेष लाभ करता है ॥ ७ ॥

कुरुते नाग्निमान्द्यं च महातापं ज्वरं हरेत्।
भ्रममूर्च्छाहरश्चाऽऽशु स्त्रीणां रक्तं महास्रवम् ॥ ८ ॥

यह अग्निमान्द्य को नहीं करता तथा ज्वर के महाताप को दूर करता है। भ्रम और मूर्च्छा रोग को नष्ट करता है। स्त्रियों के लगातार बहते हुए अत्यन्त रक्त को शीघ्र बन्द कर देता है ॥ ८ ॥

ऊर्ध्वाधो रक्तपित्तं च रक्तवान्तिं विशेषतः।
मूत्रकृच्छ्राणि सर्वाणि नाशयेन्नात्र संशयः॥ ६॥

मुख नासिका आदि से निकलन वाला ऊर्ध्वग रक्तपित्त तथा गुदा लिंग योनि आदि से निकले वाला अधोग् रक्त पित्त इन दोनों को यह रस रोक देता है तथा रक्त की वमन को विशेष करके रोकता है और सभी प्रकार के मूत्रकृच्छ्रों को नष्ट करता है। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं॥ ६॥ इति चन्द्रकला रसः।

अथ रसरत्नप्रदीपाल्लघुलोकेश्वरो रसः—

रसभस्म च भागैकं चत्वारः शुद्धगन्धकम्।
पिष्ट्वा वराटकान्पूर्याद्रसपादं च टङ्कणम्॥ १॥

पारदभस्म अर्थात् रससिन्दूर एक भाग, शोधित गन्धक ४ भाग, दोनों को खरल करके शुद्ध की हुई कौड़ियों में भर दे। फिर पारे का चतुर्थांश शुद्ध सुहागा लेकर॥ १॥

क्षीरेण पिष्ट्वा रुद्ध्वाऽऽस्यं भाण्डे रुद्ध्वा पुटे पचेत्।
स्वाङ्गशीतं विचूर्ण्याथ लघुलोकेश्वरो रसः॥ २॥

उसे दूध में पीसकर कौड़ियों के मुंह पर लगाकर मुंह बन्द करदे। फिर एक हांडी में भर सम्पुट करके गजपुट में फूंक देवे। इसे स्वांग शीतल होने पर निकाले और चूर्ण करके रखे। इसे लघुलोकेश्वर रस कहते हैं॥ २॥

चतुर्गुञ्जो घृतैर्देयो मरीचैकोनविंशतिः।
जातिमूलपलं चैकमजाक्षीरेण पाचयेत्॥
शर्कराभावितं चानु पीतं कृच्छ्रहरं परम्॥ ३॥

इसको चार रत्ति मात्रा लेकर घी से और १६ गोलमिरचों के चूर्ण से मिला कर देवें। और चमेली की जड़ को एक पल लेकर बकरी के दूध में पकाकर खांड मिलाकर उस दूध को अनुपान में पीवे तो यह योग परम मूत्रकृच्छ्र नाशक है॥३॥ इति लघुलोकेश्वरः।

अथ वैक्रान्तगर्भनामा रसः—

सूतं स्वर्णं च वैक्रान्तं मृतं तुल्यं च मर्दयेत्।
चाण्डालीराक्षसीद्रावैर्दिनयामान्ते च गोलकम्॥ १॥

पारदभस्म या रससिन्दूर, स्वर्णभस्म, वैक्रान्तभस्म तीनों समभाग लेकर एकत्र मर्दन करे। फिर (चाण्डाली) शिवलिंगी (राक्षसी) चौरा वा मुरामांसी इन दोनों के स्वरस वा क्वाथ से ६ घंटे भावित करे। फिर गोला बनावे॥ १॥

शुष्कं रुद्ध्वा पुटे पाच्यं करीषाग्नौ महापुटे।
माषैकं मधुना लेह्यं मूत्रकृच्छ्रप्रशान्तये॥ २॥

और इसे सुखाकर एक हांडी में रख सम्पुट करके उपलों की अग्नि में रख महापुट देवे। इसे स्वांग शीतल होने पर निकाल कर खरल करे। इसे एक

माषा भर (मात्रा दो रत्ति पर्याप्त है) लेकर शहद से मिलाकर चाटे इससे मूत्रकृच्छ्र शान्त होता है ॥ २ ॥

वैक्रान्तगर्भनामाऽयं सर्वकृच्छ्रामयाञ्जयेत्।
अपामार्गस्य मूलं तु तक्रे पिष्ट्वाऽनुपाययेत् ॥ ३ ॥

यह वैक्रान्त गर्भ नामक रस सभी मूत्रकृच्छ्रों को शान्त करता है। इसके साथ अपामार्ग की जड़ को तक्र में पीसकर अनुपान में पीने को देना चाहिये ॥ ३ ॥ इति वैक्रान्तगर्भ रसः।

अथ लोहभस्मयोगः—अयोभस्म श्लक्ष्णपिष्टं मधुना सह योजितम्।
मूत्रकृच्छ्रं निहन्त्याशु त्रिभिर्लेहैर्न संशयः ॥ १ ॥

लोहे की भस्म अत्यन्त महीन पीसकर शहद से मिलाकर खावें। ऐसे तीन बार चाटने से ही मूत्रकृच्छ्र का शीघ्र नाश हो जाता है ॥ १ ॥

अथ रसादियोगः—रसवल्लं यवक्षारं सितातक्रयुतं पिबेत्।
मूत्रकृच्छ्राण्यशेषाणि हन्यन्ते पानतो जवात् ॥१॥

शुद्ध रस सिन्दूर डेढ़ रत्ति (वल्ल = डेढ़ रत्ति, दो वा तीन रत्ति) लेकर उस में यवक्षार, खांड और तक्र मिलाकर पीवे तो सभी प्रकार के मूत्रकृच्छ्र शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं ॥ १ ॥

अथ पथ्यापथ्यम्।

पुरातना लोहितशालयश्च धन्वामिषं मुद्गरसः सिता च।
तक्रं पयो गोश्च दधि प्रभूतं पुराणकूष्माण्डफलं पटोलम् ॥१॥

पुराने लाल शाली धान्य, धन्वमांस, मूंग का रस, खांड। गौ का तक्र, दूध वा दही अधिक मात्रा में खाना, पुराना पेठा, परवल ॥ १ ॥

उर्वारुखर्जूरकनारिकेलं तण्डुलियं चाऽऽमलकं च सर्पिः।
प्रतीरनीरं हिमवालुका च मित्रं नृणां स्यात्सति मूत्रकृच्छ्रे ॥२॥

ककड़ी के बीज, खजूर, नारियल, चौलाई, आंवला, घी, नदी के किनारे का पानी ये सभी मूत्रकृच्छ्र में हितकारी हैं ॥ २ ॥

मद्यं श्रमं निधुवनं गजवाजियानं सर्वं विरुद्धमशनं विषमाशनं च।
ताम्बूलमत्स्यलवणार्द्रकतैलभृष्टं पिण्याकहिङ्गुतिलसर्षपमूत्रवेगान्।
माषान्करीरमतितीक्ष्णविदाहि रूक्षमम्लं प्रमुञ्चतु जनः सति मूत्रकृच्छ्रे

परन्तु मद्य पीना, श्रम, मैथुन करना, हाथी तथा घोड़े की सवारी, सब प्रकार का विरुद्ध भोजन, विषम भोजन। ताम्बूल, मछली, लवण तथा अदरक खाना, तेल में भूने पदार्थ खाना, तिलकुट, हींग, तिल, सरसों, मूत्र के वेग को रोकना। उड़द, डेला या टेंट या करीर, अति तीक्ष्ण, विदाही पदार्थ, रूक्ष, अम्ल इन सब द्रव्यों को मूत्रकृच्छ्र का रोगी त्याग देवे ॥ ३ ॥ इति मूत्रकृच्छ्रचिकित्सा ॥

इति हरिद्वारीय गुरुकुलविश्वविद्यालयस्नातकेन श्रीविद्याधरविद्यालङ्कारेण लवपुरीय श्रीमद्दयानन्दायुर्वेदमहाविद्यालयीय वैद्यकविराजोपाधिधारिणा राजयक्ष्मचिकित्सकेन जलचिकित्साविशेषज्ञेन रसेन्द्रसारसंग्रहटीकाकर्त्रा कृतायां योगरत्नाकरस्य रत्नगर्भानाम्निटीकायां मूत्रकृच्छ्रप्रकरणं समाप्तम् ॥

अथ मूत्राघातनिदानं व्याख्यास्यामः ।

जायन्ते कुपितैर्दोषैर्मूत्राघातास्त्रयोदश ।
प्रायो मूत्रविघाताद्यैर्वातकुण्डलिकादयः ॥ १ ॥

कुपित हुए २ वातादि दोषों से १३ प्रकार के मूत्राघात होते हैं । मूत्रघातादि से प्राय: वातकुण्डलिकादिरोग होजाते हैं ॥ १ ॥

तत्रादौ तेषां मध्ये क्रमेण वातकुण्डलिकामाह—
रौक्ष्याद्वेगविघाताद्वा वायुर्बस्तौ सवेदनः ।
मूत्रमाविश्य चरति विगुणः कुण्डलीकृतः ॥ २ ॥

रूक्षता से, वा मूत्रादि के वेगों को रोकने से वायु बस्ति देशस्थ मूत्र में प्रविष्ट होकर विगुण हुआ २ पीड़ा करता हुआ कुण्डल के समान होकर रहता है ॥२॥

मूत्रमल्पाल्पमथवा सरुजं संप्रवर्तते ।
वातकुण्डलिकां तां तु व्याधिं विद्यात्सुदारुणम् ॥ ३ ॥

तब मूत्र थोड़ा २ अथवा पीड़ा सहित प्रवृत्त होता है । इस भयंकर रोग को वात कुण्डलिका कहते हैं ॥ ३ ॥

अथाष्ठीलामाह—**आध्मापयन्बस्तिगुदं रुद्ध्वा वायुश्चलोन्नताम् ।**
कुर्यात्तीव्रार्तिमष्ठीलां मूत्रमार्गनिरोधिनीम् ॥ ४ ॥

वायु आध्मान कर के बस्ति तथा गुदा को रोककर चलायमान तथा उभरी हुई तीव्र पीड़ा करनेवाली अष्ठीला या गांठ को उत्पन्न कर देता है, इस अष्ठीला से मूत्रमार्ग रुक जाता है ॥ ४ ॥

अथ वातबस्तिमाह—**वेगं विधारयेद्यस्तु मूत्रस्याकुशलो नरः ।**
निरुणद्धि मुखं तस्य बस्तेर्बस्तिगतोऽनिलः ॥ ५ ॥

जो मूर्ख मनुष्य मूत्र के वेग को रोक लेता है । उस के बस्ति में ठहरा हुआ वायु बस्ति के मुख को रोक लेता है ॥ ५ ॥

मूत्रसङ्गो भवेत्तेन बस्तिकुक्षिरुजाकरः ।
वातबस्तिः स विज्ञेयो व्याधिः कृच्छ्रप्रसाधनः ॥ ६ ॥

इस से मूत्र रुक जाता है तथा बस्ति और कुक्षि में पीड़ा होती है । इसे वात बस्तिरोग कहते हैं और यह कष्ट साध्य होता है ॥ ६ ॥

अथ मूत्रातीतमाह—**चिरं धारयतो मूत्रं त्वरया न प्रवर्तते ।**
मेहमानस्य मन्दं वा मूत्रातीतः स उच्यते ॥ ७ ॥

यदि मूत्र को देर तक रोके रहें तो फिर मूत्र शीघ्रता से बाहर नहीं निकलता है और जब निकालें तो मन्द निकलता है, इसे मूत्रातीत रोग कहते हैं ॥ ७ ॥

अथ मूत्रजठरमाह—**मूत्रस्य वेगेऽभिहते तदुदावर्तहेतुकः।**
अपानः कुपितो वायुरुदरं पूरयेद्भृशम् ॥ ८ ॥

मूत्र के वेग को रोकने से उदावर्त्त को उत्पन्न कर देनेवाला अपान वायु कुपित होकर पेट को भर देता है ॥ ८ ॥

नाभेरधस्तादाध्मानं जनयेत्तीव्रवेदनम्।
तन्मूत्रजठरं विद्याद्गुदबस्तिनिरोधनम् ॥ ९ ॥

इस से नाभि के नीचे तीव्र पीड़ा करनेवाला आध्मान हो जाता है। उस से गुदा और बस्ति के मार्ग रुक जाते हैं। इसे मूत्रजठररोग कहते हैं ॥ ९ ॥

अथ मूत्रोत्सङ्गमाह—**बस्तौ वाऽप्यथ वा नाले मणौ वा यस्य देहिनः।**
मूत्रं प्रवृत्तं सज्जेत सरक्तं वा प्रवाहतः ॥ १० ॥

रोगी के बस्ति में, नाल में अर्थात् मूत्रप्रणाली में अथवा मणि में अर्थात् मूत्रेन्द्रिय के अगले भाग में बहता हुआ मूत्र रुक जाये। अथवा जोर लगायें तो खूनसहित मूत्र आवे ॥ १० ॥

स्रवेच्छनैः शनैरल्पं सरुजं वाऽथ नीरुजम्।
त्रिगुणानिलजो व्याधिः स मूत्रोत्सङ्गसंज्ञितः ॥ ११ ॥

मूत्र थोड़ा २ और धीरे २ स्रवित होवे, पीड़ा हो वा पीड़ा न हो, उस रोग को मूत्रोत्संग कहते हैं। यह रोग वायु के त्रिगुण होने से होता है ॥ ११ ॥

अथ मूत्रक्षयमाह—**रूक्षस्य क्लान्तदेहस्य बस्तिस्थौ पित्तमारुतौ।**
मूत्रक्षयं सरुग्दाहं जनयेतां तदाह्वयम् ॥ १२ ॥

रूखे तथा थकी हुई देहवाले मनुष्य के बस्ति में स्थित पित्त तथा वायु कुपित होकर पीड़ा और दाहसहित मूत्रक्षयरोग को कर देते हैं ॥ १२ ॥

अथ मूत्रग्रन्थिमाह—**अन्तर्बस्तिमुखे वृत्तः स्थिरोऽल्पः सहसा भवेत्।**
अश्मरीतुल्यरुग्ग्रन्थिर्मूत्रग्रन्थिः स उच्यते ॥ १३ ॥

बस्ति के मुख के अन्दर गोल, स्थिर, छोटीसी, अश्मरी के समान पीड़ा करती हुई गांठ एकदम उत्पन्न होजाती है। उसे मूत्रग्रन्थि कहते हैं ॥ १३ ॥

तन्त्रान्तरे उक्तं—**मूत्रं वातकफाद्दुष्टं बस्तिद्वारेषु दारुणम्।**
ग्रन्थिं कुर्यात्स कृच्छ्रेण सृजेन्मूत्रं तदावृतम् ॥ १४ ॥

वात कफ से दूषित हुआ २ मूत्र बस्ति के द्वार पर भयंकर गांठ उत्पन्न कर देता है। उस गांठ से घिरा हुआ मूत्र कठिनता से बाहर निकलता है। उसे मूत्रग्रन्थि कहते हैं ॥ १४ ॥

अथ मूत्रशुक्रमाह—**मूत्रितस्य स्त्रियं यातो वायुना शुक्रमुद्धतम्।**

स्थानाच्च्युतं मूत्रयतः प्राक्पश्चाद्वाप्रवर्तते ॥
भस्मोदकप्रतीकाशं मूत्रशुक्रं तदुच्यते ॥ १५ ॥

मूत्र के वेग से युक्त पुरुष स्त्री के पास जावे तो वायु के कोप से उद्धत हुआ २ वीर्य अपने स्थान से च्युत होकर मूत्र करते समय आगे या पीछे निकलता है। इस का रंग राख घुले हुए पानी के समान होता है इस मूत्रशुक्र कहते हैं ॥१५॥

अथोष्णवातमाह—व्यायामाध्वातपैः पित्तं बस्तिं प्राप्यानिलावृतम्।
बस्तिं मेढ्रं गुदं चैव प्रदहेत्स्रावयेदधः ॥ १६ ॥
मूत्रं हारिद्रमथवा सरक्तं रक्तमेव वा।
कृच्छ्रात्पुनः पुनर्जन्तोरुष्णवातं वदन्ति तम् ॥ १७ ॥

व्यायाम करने से, मार्ग चलने स, धूप में चलने से, पित्त बस्ति में पहुंचकर वायु से घिर जाता है और बस्ति, लिंग, तथा गुदा को जलाता है। और नीचे की ओर हल्दी के रंग का, कुछ २ लाल रंग मिश्रित अथवा केवल लालरंग का ही मूत्र स्रवित होता है। और मूत्र करते समय कष्ट होता है। इस रोग को उष्णवात कहत हैं ॥ १७ ॥

अथ मूत्रसादमाह—पित्तं कफो द्वावपि वा संहन्येतेऽनिलेन चेत्।
कृच्छ्रान्मूत्रं तदा रक्तं पीतं श्वेतं घनं सृजेत् ॥ १८ ॥

यदि वायु से पित्त अथवा पित्त और कफ दोनो ही मिलकर बिगड़ जायें तो कष्ट से मूत्र लालरंग का, पीला, श्वेत तथा घना निकलेगा ॥ १८ ॥

सदाहं रोचनाशङ्खचूर्णवर्णं भवेच्च तत्।
शुष्कं समस्तवर्णं वा मूत्रसादं वदन्ति तम् ॥ १९ ॥

इसमें दाह होता है, गोरोचन, शङ्ख तथा चूने के समान श्वेत रंग का मूत्र निकलता है। अथवा सूखा हुआ मूत्र समस्त रंगों का निकलता है। इसे मूत्र-साद रोग कहते हैं ॥ १९ ॥

अथ विड्विघातमाह—रूक्षदुर्बलयोर्वातादुदावृत्तं शकृद्यदा।
मूत्रस्रोतोऽनुपद्येत विड्विसृष्टं तदा नरः।
विड्गन्धं मूत्रयेत्कृच्छ्राद्विड्विघातं तमादिशेत् २०

रूखे तथा दुर्बल मनुष्य का वात के कुपित होने से मल जब उदावृत्त अर्थात् घिर कर रुक जये तब मूत्र के स्रोत को पहुंच कर वह उस में कुछ २ घुस जाता है। तब कठिनता से मूत्र आता है और उस में मल या विष्टा की सी दुर्गन्ध आती है। इसे विड्विघातरोग कहते हैं ॥ २० ॥

अथ बस्तिकुण्डलमाह्—द्रुताध्वलङ्घनायासैरभिघातात्प्रपीडनात्।
स्वस्थानाद्बस्तिरुद्वृत्तः स्थूलस्तिष्ठति गर्भवत्॥२१॥

तेज चलने से, बहुत लंबा मार्ग चलने से, उपवास करने से, बहुत परिश्रम

करने से, अभिघात अर्थात् चोट पेट लगने से, प्रपीड़न करने से, अपने स्थान से बस्ति ऊपर को उठकर स्थूल तथा गर्भ के समान होजाता है ॥ २१ ॥

शूलस्पन्दनदाहार्तो बिन्दुं बिन्दुं स्रवत्यपि।
पीडितस्तु सृजेद्धारां संस्तम्भोद्वेष्टनार्तिमान् ॥ २२ ॥

शूल, स्पन्दन अर्थात् फड़फड़ाहट तथा दाह से दुखी हुआ २ रोगी बूंद २ मूत्र को स्रवण करता है। जब बस्ति को दबावें तो मूत्र धारा रूप में बहता है। और रोगी को स्तम्भ तथा पीड़ा रहती है ॥ २२ ॥

बस्तिकुण्डलमाहुस्तं घोरं शस्त्रविषोपमम्।
पवनप्रबलं प्रायो दुर्निवारमबुद्धिभिः ॥ २३ ॥

बस्ति कुण्डल नाम इसी रोग का है। यह घोर अर्थात् भयंकर होता है। तथा शस्त्र तथा विष के समान प्राणान्त कष्टदायक है। यह व्याधि वात की अधिकता से होती है तथा मूर्ख लोग इस की चिकित्सा नहीं कर सकते ॥२३॥

तस्मिन्पित्तावृते दाहः शूलं मूत्रविवर्णता।
श्लेष्मणा गौरवं शोफः स्निग्धं मूत्रं घनं सितम् ॥ २४ ॥

यदि इस रोग में पित्त से बस्ति घिरी हुई हो तो शूल, दाह तथा मूत्र का रंग बदला हुआ होता है ॥ कफ यदि इस रोग में मिला हुआ हो तो गुरुता, शोफ, स्निग्धता होती है। तथा मूत्र घन तथा श्वेत रंग का होता है ॥ २४ ॥

श्लेष्मरुद्धबिलो बस्तिः पित्तोदीर्णो न सिध्यति।
अविभ्रान्तबिलः साध्यो न च यः कुण्डलीकृतः।
स्याद्बस्तौ कुण्डलीभूते तृण्मोहः श्वास एव च ॥ २५ ॥

कफ से जिस का मार्ग रुक गया हो और अन्दर पित्त बढ़ी हुई हो ऐसी बस्ति ठीक नहीं हो सकती। जिस बस्ति का छिद्र टेढ़ा मेढ़ा (रोग के कारण) हो गया हो, तथा जो कुण्डल के समान न बन गई हो ऐसी अवस्था में बस्ति कुण्डलिका साध्य होती है। बस्ति जब कुण्डलीभूत हो जाती है तो प्यास मोह तथा श्वास हो जाते हैं ॥ २५ ॥ इति मूत्राघातनिदानम् ॥

अथ मूत्राघातचिकित्सा।

स्नेहस्वेदोपपन्नस्य हितं स्नेहविरेचनम्।
दद्यादुत्तरबस्तिं च मूत्राघाते सवेदने ॥ १ ॥

स्नेहन तथा स्वेदन करा के रोगी को स्निग्ध विरेचन देवे। वेदना सहित मूत्राघात में उत्तरबस्ति भी देवे ॥ १ ॥

अथ नलादिक्वाथः—

नलकुशकाशेक्षुशिफाक्वथितं प्रातः सुशीतलं ससितम्।
पिबतः प्रयाति नियतं मूत्राघातः सवेदनः पुंसः ॥ १ ॥

नड़े की जड़, कुशा की जड़, काश की जड़, ईख की जड़ इन सब को सम भाग लेकर क्वाथ कर के सुशीतल कर के खांड मिलाकर प्रातःकाल पिलावें। तो वेदनासहित मूत्राघात निश्चय से नष्ट होजाता है ॥ १ ॥

अथ गोधावत्यादिः—**गोधावत्या मूलकाथितं घृततैलगोरसोन्मिश्रम्।**
पीतं निरुद्धमचिराद्भिनत्ति मूत्रस्य संघातम् ॥ १ ॥

(गोधावती) वटपत्री नामक पाषाणभेद (गोहालिया इति ख्याता) की जड़ का क्वाथ, घी, तेल और गौ के दूध में मिलाकर पिलाने से मूत्र के संघात को भेदन कर के शीघ्र बाहर निकालता है ॥ १ ॥

अथ शार्ङ्गधरात्—**वीरतरुर्वृन्दवृन्दा वासा सहचरद्वयम्।**
कुशद्वयं नलो गुन्द्रा बकपुष्पोऽग्निमन्थकः ॥ १ ॥

(वीरतरु—भल्लातकवृक्षे, बिल्वान्तरवृक्षे, अर्जुनवृक्षे, शरतृणे) सरकंडे की जड़ (वृन्दां—तुलसी वृक्षे, वृक्षोपरि जातलतायाम्) बन्दाक, बांसा, नीलझिण्टी, पीतझिण्टी, कुशामूल, दर्भमूल, नले की जड़, गन्ध पटेर की जड़, अगस्त का फूल, अग्निमन्थ या अरणी की छाल ॥ १ ॥

मूर्वा पाषाणभेदश्च स्योनाको गोक्षुरस्तथा।
अपामार्गश्च कमलं ब्राह्मी चेति गणो वरः ॥ २ ॥

मूर्वामूल, पाषाणभेद, श्योणाक छाल, गोखरु, अपामार्ग, कमल, ब्राह्मी ये सब औषध वीरतर्वादिगण की हैं ॥ २ ॥

वीरतर्वादिरित्येष शर्कराश्मरिकृच्छ्रहा।
मूत्राघातं वातरोगान्नाशयेदखिलानपि ॥ ३ ॥

इस वीरतर्वादिगण के क्वाथ से शर्करा, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, तथा सभी वातरोग नष्ट होते हैं ॥ ३ ॥

पिबेच्छिलाजतु क्वाथे गणे वीरतरादिके।
रसं दुरालभाया वा कषायं वासकस्य च ॥ ४ ॥

वीरतादिगण के क्वाथ में शिलाजीत घोलकर पीवें। वा जवासे का रस वा बांसे का क्वाथ पीवे तो भी ये रोग दूर होते हैं ॥ ४ ॥

अथ दशमूलादिक्वाथः—**दशमूलीशृतं पीत्वा सशिलाजतुशर्करम्।**
वातकुण्डलिकाष्ठीलावातबस्तौ प्रमुच्यते ॥ १ ॥

दशमूल का क्वाथ शिलाजीत और खांड मिलाकर पिलाने से वातकुण्डलिका, अष्ठीला तथा वातज बस्ति रोग से रोगी मुक्त होता है ॥ १ ॥

अथ गोक्षुरादिक्वाथः—**पीतो गोकण्टकक्वाथः साशिलाजतुकौशिकः।**
मूत्रकृच्छ्रान्मूत्रशुक्रान्मूत्रोत्सङ्गाद्विमुच्यते ॥ १ ॥

गोखरु के क्वाथ में शिलाजीत तथा शुद्ध गूगल मिलाकर पिलावें । तो मूत्रकृच्छ्र, मूत्रशुक तथा मूत्रोत्सङ्ग से मनुष्य छूट जाता है ॥ १ ॥

अथ शिलाजतुयोगः—सशर्करं च ससितं लीढं सिद्धं शिलाजतु ।
निहन्ति मूत्रजठरं मूत्रातीतं च देहिनः ॥ १ ॥

शुद्ध शिलाजीत में शक्कर और सफेद खांड मिलाकर खिलावें तो मूत्रजठर, तथा मूत्रातीत रोग अच्छा होता है ॥ १ ॥

अथ त्रिकण्टकादियोगः—

त्रिकण्टकैरण्डशतावरीभिः सिद्धं पयो वातभवे च शूले ।
गुडप्रगाढं सघृतं पयो वा रोगेषु कृच्छ्रादिषु शस्तमेतत् ॥१॥

गोखरु, एरण्ड की जड़, शतावर इन सब को समभाग लेकर इनसे क्षीरपाक करें । उस दूध में गुड़ मिलाकर पिलाने से वातिक शूल नष्ट होता है । और घी में दूध मिलाकर पिलाने से भी मूत्रकृच्छ्रादि रोग नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथ निदिग्धिकादियोगः—निदिग्धिकायाः स्वरसं पिबेद्वा तक्रसंयुतम् ।
जले कुङ्कुमकल्कं वा सक्षौद्रमुषितं निशि ॥१॥

छोटी कटेली का स्वरस तक्र से मिलाकर पीवें । जल में कश्मीरी केसर का कल्क घोलकर एक रात भर पड़ा रहने दें । प्रातःकाल शहद से मिलाकर पीवे ॥ १ ॥

शृतशीतपयोन्नाशी चन्दनं तण्डुलाम्बुना ।
पिबेत्सशर्करां श्रेष्ठामुष्णवाते सशोणिते ॥ २ ॥

और रोगी को चाहिये कि पकाकर शीतल किया हुआ दूध और अन्न को खावे । चन्दन को चावलों के जल से खांड मिलाकर पीने को देवे इससे खून सहित उष्णवात रोग अच्छा हो जाता है ॥ २ ॥

अथ शतावर्यादियोगः—वरीगोक्षुरभूधात्रीमूलानां स्वरसं पलम् ।
माषमेकं यवक्षारं सौरं माषद्वयं तथा ॥ १ ॥

शतावर, गोखरु, भुई आंवला इनकी जड़ों का स्वरस मिलित एक पल लेकर उसमें यवक्षार एक माषा, (सौरः=तुम्बुरुफलवृक्षे, सौरं=कुंकुमे, धान्यके, बोल नामक गन्ध द्रव्ये) तुम्बरु अर्थात् तेजबल के फल दो माशे ले ॥ १ ॥

द्विगुणं टङ्कणं क्षारं सर्वमेकत्र मेलयेत् ।
पिबेत्तत्तु विनाशाय मूत्राघाते सुदारुणे ॥ २ ॥

सुहागे की खील दो रत्ति लेवें । सबको मिलाकर पिलाने से सुदारुण मूत्राघात नष्ट होता है ॥ २ ॥ इति सारसंग्रहात् ॥

अथ मूत्रशोणितचिकित्सा—स्त्रीणामतिप्रसङ्गेन शोणितं यस्य सिच्यते ।
मैथुनोपरमश्चास्य बृंहणीयो विधिर्मतः ॥
ताम्रचूडवसातैलं हितं चोत्तरबस्तिषु ॥ १ ॥

स्त्रियों के साथ अत्यन्त मैथुन करने से जिस पुरुष को इन्द्रिय से खून आने लगे। उसे मैथुन से सर्वथा रोक देवे तथा बृंहण क्रियायें करे। और उत्तर बस्ति में मुर्गे की चरबी वा तेल मिलाकर बस्ति देवे ॥ १ ॥

अथ स्वगुप्ताद्यं चूर्णम्—स्वगुप्ताफलमृद्वीकाकृष्णेक्षुरसितारजः।
समानमर्धभागानि क्षीरक्षौद्रघृतानि च ॥ १ ॥

कौंच के बीज, दाख, पीपली, तालमखाना, खांड इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग लेकर एकत्र चूर्ण करे। सब से आधा भाग दूध, शहद और घी प्रत्येक समभाग लेकर मिलावे। (इस प्रकार यदि पूर्वलिखित पांचों द्रव्यों का चूर्ण ५ भाग हों तो दूध आदि तीनों पदार्थ ढाई भाग मिलित हों) ॥ १ ॥

सर्वं सम्यग्विमर्द्याक्षमात्रां लीढ्वा पयः पिबेत्।
हन्ति शुक्रक्षयोत्थांश्च दोषान्वन्ध्यासुतप्रदम् ॥ २ ॥

इन सभी द्रव्यों को एकत्र भली प्रकार मथकर एक अक्ष भर मात्रा लेकर चाटे और ऊपर से दूध पीवे। तो यह योग शुक्रक्षय से होने वाले दोषों को नष्ट करता है। तथा बन्ध्या स्त्री इसे सेवन करे तो उस को भी सन्तान होती है ॥ २ ॥

अथ क्षौद्रार्धभागघृतम्—क्षौद्रार्धभागः कर्तव्यो भागः स्यात्क्षीरसर्पिषोः।
शर्करायाश्च चूर्णं च द्राक्षाचूर्णं च तत्समम् ॥ १ ॥

शहद आधा भाग, दूध एक भाग, घी एक भाग, खांड एक भाग, दाख एक भाग ॥ १ ॥

स्वयंगुप्ताफलं चैव तथैवेक्षुरकस्य च।
पिप्पलीनां तथा चूर्णं समभागं प्रदापयेत् ॥ २ ॥

कौंच के बीज एक भाग, तालमखाना एक भाग, पिप्पली का चूर्ण १ भाग ॥ २ ॥

तदेकस्थं मेलयित्वा खल्वेनोन्मथ्य च क्षणम्।
तस्य पाणितलं चूर्णं लिहेत्क्षीरं ततः पिबेत् ॥ ३ ॥

इन सब को एकत्र मिलाकर क्षणभर सब को मथे। फिर इस में से १ पाणितल अर्थात् एक कर्षभर खावे और ऊपर से दूध पीवे ॥ ३ ॥

एतत्सर्पिः प्रयुञ्जानः शुद्धदेहो नरः सदा।
शुक्रदोषाञ्जयेत्सर्वानेवापि भृशदुर्जयान् ॥
जयेच्छोणितदोषांश्च वन्ध्या स्त्री गर्भमाप्नुयात् ॥ ४ ॥

इस घी को शरीर शुद्ध कर के प्रयोग करने से भयंकर और बढ़े हुए शुक्रस्थ दोष नष्ट होते हैं। तथा स्त्रियों के आर्तव या रक्त सम्बन्धी दोषों को नष्ट करता है। इस से बन्ध्यास्त्री को भी गर्भ ठहरता है ॥ ४ ॥

अथ धान्यगोक्षुराद्यं घृतम्—

धान्यगोक्षुरकक्वाथकल्कसिद्धं घृतं हितम्।

मूत्राघातेषु कृच्छ्रेषु शुक्रदोषे च दारुणे ॥ १ ॥

धनियां, गोखरू दोनों को समभाग लेकर कल्क करे। और इन दोनों को समभाग लेकर क्वाथ करे। इस कल्क से चौगुना घी और घी से चौगुना इन ही का क्वाथ लेकर घी पकावे। इस घी के सेवन से मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र तथा भयंकर शुक्रदोष भी दूर होते हैं ॥ १ ॥

अथ चित्रकाद्यं घृतम्—चित्रकं सारिवा चैव बला काला च सारिवा।
द्राक्षाविशालापिप्पल्यस्तथा च त्रिफला भवेत्॥१॥

चीतामूल, श्वेतशारिवा, खिरेंटी, नागबला तथा कृष्णसारिवा, दाख, इन्द्रायण की जड़, पिप्पली, हरड़, बहेड़ा, आंवला ॥ १ ॥

तथैव मधुकं दद्याद्दद्यादामलकानि च।
घृताढकं पचेदेतैः कल्कैरक्षसमन्वितैः ॥ २ ॥

मुलहटी, आंवला इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ अक्ष लेवें। इन सब का कल्क बनाकर, एक आढक गौ के घी में डाले ॥ २ ॥

क्षीरद्रोणे जलद्रोणे तत्सिद्धमवतारयेत्।
शीतं परिश्रुतं चैव शर्कराप्रस्थसंयुतम् ॥ ३ ॥

और दूध एक द्रोण तथा पानी एक द्रोण डालकर घी पकावें। घी के शीत होने पर इस में खांड एक प्रस्थ डाले ॥ ३ ॥

तुगाक्षीर्या च तत्सर्वं मतिमान्परिमिश्रयेत्।
ततो मितं पिबेत्काले यथादोषं यथाबलम् ॥ ४ ॥

वंशलोचन एक प्रस्थ मिलावें। इन सब को एकत्र मिश्रण कर के दोषानुसार तथा बलानुसार उचित काल में अपने योग्य मात्रा में पियें ॥ ४ ॥

मूत्रग्रन्थिं मूत्रसादमुष्णवातमसृग्दरम्।
विड्विघातं निहन्त्येतद्बस्तिकुण्डलिमप्यलम् ॥ ५ ॥

ये मूत्रग्रन्थि, मूत्रसाद, उष्णवात तथा रक्तप्रदर, विड्विघात तथा बस्तिकुण्डलरोग को नष्ट करता है ॥ ५ ॥

सर्पिरेतत्प्रयुञ्जाना स्त्री गर्भं लभतेऽचिरात्।
असृग्दोषे योनिदोषे मूत्रदोषे तथैव च ॥
प्रयोक्तव्यमिदं सर्पिश्चित्रकाद्यं सदा बुधैः ॥ ६ ॥

इस घी को प्रयोग करने से स्त्री शीघ्र ही गर्भधारण करती है। रक्तदोष, योनिदोष, तथा मूत्रदोषों में यह चित्रकाद्यघृत सदा विद्वानों को प्रयुक्त कराना चाहिये ॥ ६ ॥

अथ सदाभद्राद्यं चूर्णम्—

सदाभद्राश्मभिन्मूलं शतावर्याश्च चित्रकम्।
रोहिणीकोकिलाक्षौ च क्रौञ्चस्थूलं त्रिकण्टकम् ॥

श्लक्ष्णपिष्टाः सुरापीता मूत्राघातप्रणाशनाः ॥ १ ॥

गांभारी की जड़, पाषाण भेद की जड़, शतावर की जड़, चीता, कुटकी, तालमखाना, (क्रौञ्च) कमल का बीज (स्थूलं) गन्ने की जड़ और गोखरू। इन में से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग पीसकर सुरा के साथ पीवें तो मूत्राघात रोग दूर होता है ॥ १ ॥

अथोशीरादिचूर्णम्—उशीरं बालकं पत्रं कुष्ठं धात्री च मौसली।
एला हरेणुकं द्राक्षा कुङ्कुमं नागकेसरम् ॥ १ ॥

खस, सुगन्धबाला, तेजपत्र, कूठ, आंवला, मूसली, छोटी इलायची, रेणुका के बीज, दाख, कश्मीरी केसर, नागकेसर ॥ १ ॥

पद्मकेसरकन्दं च कर्पूरं चन्दनद्वयम्।
व्योषं मधुकलाजाश्च अश्वगन्धा शतावरी ॥ २ ॥

पद्मकेसर, पद्म की जड़ (कन्दः = गुडे, शर्करायां, इन्दीवरे आदि), कपूर, लाल चन्दन, श्वेत चन्दन, सोंठ, मिरच, पीपल, मुलठ्ठी, धान की खीलें, असगन्ध शतावर ॥ २ ॥

गोक्षुरं कर्कटाख्यं च जाती कङ्कोलचोरकम्।
एतानि समभागानि द्विगुणाऽमृतशर्करा ॥ ३ ॥

गोखरू, ककड़ी के बीज, चमेली के फूल वा पत्ते, कङ्कोल, चौरा। इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर चूर्ण करे और सारे चूर्ण से दुगनी (अमृत-शर्करा=गुडूचीसत्वं, शर्करायां च) गिलोय का सत मिलावे ॥ ३ ॥

मत्स्यण्डिकामधुभ्यां च प्रातरेव बुभुक्षितः।
क्षयं च रक्तपित्तं च पाददाहमसृग्दरम् ॥ ४ ॥

इस चूर्ण को खांड तथा शहद से मिलाकर प्रातःकाल खाने से क्षय, रक्तपित्त, पाददाह, रक्तप्रदर ॥ ४ ॥

मूत्राघातं मूत्रकृच्छ्रं रक्तस्रावं च नाशयेत्।
अशीतिं वातजान्रोगान्विशेषान्मेहनुत्परम् ॥ ५ ॥

मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र और रक्तस्राव नष्ट होते हैं। यह अस्सी प्रकार के वातजरोग तथा विशेष कर के प्रमेह को सर्वथा नष्ट करता है ॥ ५ ॥ इत्युशीरादि ॥

अथ सामान्यक्रिया—अश्मरीमूत्रकृच्छ्रेषु भेषजं यत्क्रिया च या।
मूत्रघातेषु सर्वेषु कुर्यात्तत्सर्वमादरात् ॥ १ ॥

अश्मरी तथा मूत्रकृच्छ्ररोग में जो २ औषध तथा क्रियायें करनी हैं। इन सब को मूत्राघातरोग में भी करे ॥ १ ॥

रसश्चन्द्रकलाख्यश्च कृच्छ्रघ्नो यः पुरेरितः।
मूत्राघातेषु सर्वेषु स प्रयोज्यो विजानता ॥ २ ॥

जो चन्द्रकला नामक रस मूत्रकृच्छ्र प्रकरण में पहले लिख आये हैं। वह सभी मूत्राघातों में प्रयोग करना चाहिये ॥ २ ॥

अथ पथ्यापथ्यम् ।

पुरातना लोहितशालयश्च मांसानि धन्वप्रभवाणि मद्यम् ।
तक्रं पयो दध्यपि माषयूषः पुराणकूष्माण्डफलं पटोलम् ॥ १ ॥

पुराने लाल शाली चावल, धन्वज मांस, मद्य, तक्र, दूध, दही, उड़द की दाल का यूष, पुराना पेठा, परवल ॥ १ ॥

उर्वारुखर्जूरकनारिकेलतालद्रुमाणामपि मस्तकानि ।
यथामलं सर्वमिदं च मूत्राघातातुराणां हितमादिशन्ति ॥ २ ॥

खीरा खाना तथा खजूर, नारियल तथा ताड़वृक्ष इन के मस्तक, ये सभी पदार्थ दोषानुसार मूत्राघात रोगियों के लिये हितकारी हैं ॥ २ ॥

विरुद्धाशनसर्वाणि व्यायामं मार्गशीलनम् ।
रूक्षं विदाहि विष्टम्भि व्यवायं वेगधारणम् ।
करीरं वमनं चापि मूत्राघाती विवर्जयेत् ॥ ३ ॥

सब प्रकार का विरुद्ध भोजन, व्यायाम, मार्ग चलना, रूखे, विदाही, विष्टम्भी पदार्थ, मैथुन करना, वेगों को रोकना, करीर या डेला खाना, वमन करना इन सब को मूत्राघातरोगी अपथ्य समझकर छोड़ देवे ॥३॥ इति मूत्राघातचिकित्सा॥

इति हरिद्वारीय गुरुकुलविश्वविद्यालयस्नातकेन श्रीविद्याधरविद्यालंकारेण लवपुरीय श्रीमद्दयानन्दायुर्वेदमहाविद्यालयीय वैद्यकविराजोपाधिधारिणा, राजयक्ष्माचिकित्सकेन जलचिकित्साविशेषज्ञेन रसेन्द्रसारसंग्रहटीकाकर्त्रा कृतायां योगरत्नाकरस्य रत्नगर्भानाम्निटीकायां मूत्राघातचिकित्सा समाप्ता ।

अथाश्मरीनिदानं व्याख्यास्यामः ।

वातपित्तकफैस्तिस्रश्चतुर्थी शुक्रजाऽपरा ।
प्रायः श्लेष्माश्रयाः सर्वा ह्यश्मर्यः स्युर्यमोपमाः ॥ १ ॥

वात, पित्त, कफ तथा शुक्र इन से क्रमशः वातजाश्मरी, पित्तजाश्मरी, कफजाश्मरी तथा शुक्रजाश्मरी ये चार अश्मरियें या पथरी होती हैं । प्रायः सभी श्लेष्मा को आश्रय करके रहती है और ये सभी यमराज के समान मृत्युकारक तथा भयंकर होती हैं ॥ १ ॥

अथ तत्संप्राप्तिमाह—

विशोषयेद्बस्तिगतं सशुक्रं मूत्रं सपित्तं पवनः कफं वा ।
यदा तदाऽश्मर्युपजायते तु क्रमेण पित्तेष्विव रोचना गोः ॥२॥

जब वायु बस्ति में स्थित हुए २ मूत्र को शुक्र सहित, अथवा पित्त सहित, अथवा कफ सहित सुखा डालता है तो अश्मरी या पथरी रोग होता है । जैसे

गौ के अन्दर पित्त के सूखने से गोरोचन बन जाता है ॥ २ ॥

अथ तस्यामनेकदोषाश्रयत्वमाह—

नैकदोषाश्रयाः सर्वास्त्वथाऽऽसां पूर्वलक्षणम्।
बस्त्याध्मानं तथाऽऽसन्नदेशेषु परितोऽतिरुक्॥ ३ ॥

सभी प्रकार की अश्मरी एक दोष के आश्रय नहीं होती है प्रत्युत् कफादि के साथ निश्चित सम्बन्ध रहने के कारण अनेक दोषों से युक्त होती है। इन अश्मरियों के पूर्वरूप आगे लिखते हैं। बस्ति देश में आध्मान होता है, बस्ति के आसपास चारों ओर अति पीड़ा होती है ॥ ३ ॥

मूत्रे च बस्तगन्धत्वं मूत्रकृच्छ्रं ज्वरोऽरुचिः॥ ४ ॥

मूत्र में बकरे के समान गन्ध आती है, मूत्र कठिनता से निकलता है, ज्वर होता है तथा अरुचि होती है ॥ ४ ॥

अथ तासां सामान्यलक्षणमाह—

सामान्यलिङ्गं रुङ्नाभिसीवनीबस्तिमूर्धसु।
विशीर्णधारं मूत्रं स्यात्तया मार्गे निरोधिते॥ १ ॥

अश्मरी होने के साधारण लक्षण आगे लिखते हैं—नाभि, सीवनी, बस्ति तथा सिर में पीड़ा होती है। अश्मरी के मूत्रमार्ग के सामने आ जाने पर मूत्र की धारा टूट २ कर तथा बिखर कर आती है ॥ १ ॥

तद्व्यपायात्सुखं मेहेदच्छं गोमेदकोपमम्।
तत्संक्षोभात्क्षते सास्रमायासाच्चातिरुग्भवेत्॥ २ ॥

जब वह पथरी मूत्रमार्ग के सामने से हट जाती है तो सुख से मूत्र होता है तथा वह मूत्र स्वच्छ गोमेद के समान होता है। उस पथरी के संक्षोभ से अर्थात् अति क्रुद्ध होने से अर्थात् इधर उधर अति फिरने से अन्दर क्षत हो जाते हैं और उस क्षत से फिर मूत्र में रक्त आने लगता है और यदि रोगी कुछ श्रम करे तो पीड़ा होती है ॥ २ ॥

अथ वातजामाह—**तत्र वाताद्भृशं चाऽऽर्तो दन्तान्खादति वेपते।**
मृद्नाति मेहनं नाभिं पीडयत्यनिशं क्वणन्॥ ६॥

वातिक अश्मरी में अतिदीन तथा पीड़ा युक्त होकर रोगी दांतों को काटता है तथा कांपता है। मूत्रेन्द्रिय को मलता है और रात दिन पीड़ा युक्त रहता हुआ नाभि को दबाता है तथा चिल्लाता है ॥ ६ ॥

सानिलं मुञ्चति शकृन्मुहुर्मेहति बिन्दुशः।
श्यावारुणाश्मरी चास्य स्याच्चिता कण्टकैरिव॥ ७॥

मल को वात के सहित निकालता है तथा बूंद २ मूत्र बार २ करता है। इसके अन्दर श्याव तथा लाल रंग की वातिक अश्मरी कांटों से बनी हुई के

समान है ऐसा वैद्य समझे ॥ ७ ॥

अथ पित्तजामाह—पित्तेन दह्यते बस्तिः पच्यमान इवोष्मवान्।

भल्लातकास्थिसंस्थाना रक्तपीता तथाऽश्मरी ॥ ८ ॥

पित्त से हुई २ अश्मरी बस्ति में दाह करती है, गर्म रहती है मानों अग्नि से पकाई जा रही हो। भिलांवें के फल के समान तथा इससे भी छोटी, लाल पीले रंग की यह पथरी होती है ॥ ८ ॥

अथ श्लेष्मजामाह—वस्तिर्निस्तुद्यत इव श्लेष्मणा शीतलो गुरुः।

अश्मरी महती श्लक्ष्णा मधुवर्णाऽथ वा सिता ॥९॥

कफ से हुई २ बस्ति मन्द २ पीड़ा करती है तथा शीतल और भारी होती है। यह आकार में (कुक्कुड़ के अण्डे के समान) बड़ी होती है, चिकनी होती है, शहद के समान रंग की होती है वा श्वेत रंग की होती है ॥ ९ ॥

एता भवन्ति बालानां तेषामेव च भूयसा।

आश्रयोपचयाल्पत्वाद् ग्रहणाहरणे सुखाः ॥ १० ॥

यह तीनों अश्मरियां प्रायः बालकों को होती हैं। (और कभी २ बड़ों को भी हो जाती हैं) बच्चों की (आश्रयोपचयाल्पत्वात्) बस्ति की स्थूलता क्योंकि थोड़ी ही होती है इस लिये उनकी पथरी को आहरण और ग्रहण सुख से कर सकते हैं। अर्थात् बड़िशादि यन्त्र से पकड़ना तथा फाड़कर पथरी को निकालना सुख से हो जाता है ॥ १० ॥

अथ शुक्रश्मरीमाह—शुक्राश्मरी तु महतां जायते शुक्रधारणात्।

स्थानाच्च्युतममुक्तं हि मुष्कयोरन्तरेऽनिलः।

शोषयत्युपसंगृह्य शुक्रं तच्छुक्रजाश्मरी ॥ ११ ॥

बड़े आदमी को अर्थात् युवावस्था और वृद्धावस्था में शुक्राश्मरी होती है। यह वीर्य को रोकने से होती है। जब वीर्य कामोत्तेजना से अपने स्थान से स्खलित हो चुका हो और उसे शरीर से बाहर न निकाल कर अन्दर ही रोक लिया जाये तो अण्डकोषों तथा लिङ्ग मध्यछिद्र अर्थात् बस्ति स्थित कुपित वायु उस वीर्य को सुखा देता है उसे शुक्राश्मरी कहते हैं ॥ ११ ॥

अथ तल्लक्षणमाह—बस्तिरुङ्मूत्रकृच्छ्रत्वमुष्कश्वयथुकारिणी।

तस्यामुत्पन्नमात्रायां शुक्रमेति विलीयते ॥ १२ ॥

बस्ति में पीड़ा होती है, मूत्रकृच्छ्र होता है अर्थात् कठिनता से आता है। अण्डकोषों में सूजन हो जाती है। उस अश्मरी के उत्पन्न होते ही जब वह पथरी किसी प्रकार से विलीन हो जावे तो मूत्र मार्ग से वीर्य निकलता है। (पीडिते त्ववकाशेऽस्मिन्) परन्तु यदि इस का अवकाश या छिद्र दबाया जाये तो॥ १२

अथ शर्करालक्षणमाह—पीडिते त्ववकाशेऽस्मिन्नश्मर्येव च शर्करा।

अणुशो वायुना भिन्ना सा तस्मिन्ननुलोमगे ॥ १३

अश्मरी (च) ही अवस्था भेद से शर्करा हो जाती है । वह अश्मरी वायु से भिन्न हुई २ अणु होकर अर्थात् शर्करा बनकर वायु के अनुलोम होने पर ॥१३

निरेति सह मूत्रेण प्रतिलोमे विबध्यते ।
मूत्रस्रोतःश्रिता सा तु सक्ता कुर्यादुपद्रवान् ॥ १४ ॥

मूत्र के साथ बाहर निकल जाती है । और वायु के प्रतिलोम अर्थात् मूत्र मार्ग से ऊपर को जाने पर रुक जाती है ॥ और मूत्रस्रोत में सक्त हुई २ वह उपद्रवों को करती है ॥ १४ ॥

अथ तानेवोपद्रवानाह—दौर्बल्यं सदनं कार्श्यं कुक्षिशूलमथारुचिः ।
पाण्डुत्वमुष्णवातं च तृष्णा हृत्पीडनं वमिः ॥१५॥

शरीर की दुर्बलता, शरीर का सन्न होना, कृशता, कुक्षिशूल होना, अरुचि होना, पाण्डुरोग अर्थात् शरीर का रंग पाण्डुवर्ण हो जाना, उष्णवात, तृष्णा, हृदय में पीड़ा होना तथा वमन होना ये सब उपद्रव अश्मरीरोग में होजाते हैं ॥१५

अथ तस्या असाध्यत्वमाह—प्रशूननाभिवृषणं बद्धमूत्रं रुजार्दितम् ।
अश्मरी क्षपयत्याशु सिकता शर्करान्विता॥१६॥

जिस रोगी की नाभि और अण्डकोष सूज गये हों, जिस का मूत्र रुक गया हो, जिसे शूल हो रहा हो, ऐसे रोगी को सिकता अर्थात् बालु के समान जो शर्करा है उस से युक्त अश्मरी शीघ्र ही मार देती है, वह रोगी बच नहीं सकता ॥ १६ ॥

अप्सु स्वच्छास्वपि तथा निषिक्तासु घटेऽथ वा ।
कालान्तरेण पङ्कः स्यादश्मरीह भवेत्तथा ॥ १७ ॥

स्वच्छ जल में, अथवा पानी से युक्त घड़े में इस अश्मरी या पथरी को डाल दें तो कुछ काल के पश्चात् वह पथरी कीचड़ के समान हो जायेगी ॥ १७ ॥

इत्यश्मरीनिदानम् ॥

अथ अश्मरीचिकित्सा ।

आदौ शूलः कुक्षिदेशे कटौ स्यात्पश्चाद्रोधो जायते मूत्रमुष्णम् ।
एतैर्लिङ्गैरश्मरीरोगचिह्नं ज्ञात्वा कुर्याद्भिषजाद्यैश्चिकित्साम् ॥ १ ॥

आरंभ में यदि कुक्षिदेश में शूल हो तथा कमर में तीव्र शूल हो फिर रुक जाय, और गरम मूत्र निकले । इन चिन्हों से अश्मरीरोग समझ कर औषधादि से चिकित्सा करे ॥ १ ॥

अथ वाताश्मरी—वाताश्मरीपूर्वरूपे स्नेहपानं प्रशस्यते ॥ १ ॥

वाताश्मरी के पूर्वरूप जब उपस्थित हों तब स्नेहपान कराना चाहियें ॥ १ ॥

अथ शुण्ठ्यादिः क्वाथः—शुण्ठ्यग्निमन्थपाषाणभिच्छिग्रवरुणक्षुरैः ।
अभयारग्वधफलैः क्वाथं कृत्वा विचक्षणः ॥१॥

सोंठ, अरणी, पाषाणभेद, सुहांजना, वरुण की छाल, गोखरू, हरड़, अम्लतास के फल का गूदा, इन सब को समभाग लेकर क्राथ बनावे ॥ १ ॥

रामठक्षारलवणचूर्णं दत्त्वा पिबेन्नरः।
वाताश्मरीं हन्ति कृच्छ्रं मान्द्यमग्नेश्च तद्रुजः।
कट्यूरुगुदमेढ्रस्थं वङ्क्षणस्थं च मारुतम् ॥ २ ॥

इस क्राथ में हींग, यवक्षार, सेंधालवण इन को समभाग ले चूर्ण बनाकर डाले। इस चूर्ण मिले क्वाथ को पिलाने से वाताश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, अग्निमांद्य तथा अग्निमांद्य से होनेवाले अन्य रोग, कमर, उरु, गुदा, लिङ्ग तथा वंक्षण में रहनेवाला वातरोग ये सब नष्ट होजाते हैं ॥ २ ॥

अथ वरुणक्वाथः—वरुणस्य त्वचं श्रेष्ठां शुण्ठीगोक्षुरसंयुताम्।
क्राथयित्वा शृतं तस्य यवक्षारगुडान्वितम्।
पीत्वा वाताश्मरीं हन्ति चिरकालानुबन्धिनीम् ॥ १ ॥

बरने की छाल, सोंठ और गोखरू इन तीनों को समभाग लेकर क्वाथ करे। इस में यवक्षार और गुड मिलावे। इसे पीने से चिरकाल की हुई २ वाताश्मरी भी नष्ट होजाती है ॥ १ ॥

अथ वीरतर्वादिः—वीरतर्वादिकः क्वाथः पूर्वोक्तो वातजाश्मरीम्।
सद्यो हन्ति यवक्षारगुडयुक्तो न संशयः ॥ १ ॥

वीरतरादिगण का पूर्वोक्त क्वाथ (वीरतरादिगणः—शर अर्थात् सरकण्डे की जड़, पियाबांसा, कालाबांसा, दाभ की जड़, बन्दा, नड़ की जड़, गुन्द्रा अर्थात् गिलोय या एरकातृण की जड़, कास की जड़, कुशा की जड़, पाषाणभेद, मोरट अर्थात् ईख की जड़, श्योणाक, कुरुण्टिका हाथीसुंडी या काले सूक्ष्म फलवाली श्वेतझिण्टी, वशिरः सूर्यावर्त्तभेद, (वसुकः वसुहट्टः वाम्नागाछ इति बंगभाषायां) बाम्नागाछ, अग्निमन्थ। (इन्दीवरः स्थलपद्मवृक्ष, कुरण्टिकाभेदः दीर्घपत्री बहुलपुष्पः) श्वेतझांटी, गोखरू, (कपोतवक्त्रवकः—कढ़इ इति ख्यातः, स च शिरीषसदृशः स्वल्पपत्रः स्वल्पविटपः) कड़इ, इन सब को वीरतरादिगण कहते हैं ॥) यवक्षार तथा गुड से मिलाकर पिलाया जाय तो शीघ्र ही पुरानी वाताश्मरी को भी नष्ट करता है इस में कुछ भी संशय नहीं है ॥ १ ॥

क्षारान्यवागूः पेयाश्च कषायाणि पयांसि च।
भोजनार्थं प्रयोज्यानि वाताश्मरीजुषां नृणाम् ॥ २ ॥

यवक्षारादि क्षार, यवागू, पेया तथा क्वाथ तथा दूध अर्थात् क्षीरपाक, ये सभी पदार्थ वाताश्मरीरोग में भोजन के लिये देने चाहिये ॥ २ ॥

अथ पित्ताश्मरी—पीत्वा पाषाणभित्क्वाथं सशिलाजतुशर्करम्।
पित्ताश्मरीं निहन्त्याशु वृत्रमिन्द्राशनिर्यथा ॥ १ ॥

पाषाणभेद के क्वाथ में शिलाजीत और खांड मिलाकर पिलाने से शीघ्र ही पित्ताश्मरी ऐसे नष्ट होती है जैसे बिजली से वृक्ष नष्ट होजाते हैं ॥ १॥

अथ कफाश्मरी—क्वाथो निपीतः सक्षारः शिग्रुत्वग्वरुणत्वचोः।
कफजामश्मरीं हन्ति शक्राशनिरिव द्रुमम् ॥ १ ॥

सुहांजन की छाल, वरुण की छाल इन दोनों की सम भाग लेकर क्वाथ करे। इस क्वाथ में यवक्षार मिलाकर पिलाने से कफज अश्मरी को ऐसे नाश करता है जैसे इन्द्र का वज्र अर्थात् बादलों से गिरी हुई बिजली वृक्षों को नाश करती है ॥ १ ॥

अथ शुक्राश्मरी—शुक्राश्मर्यां तु सामान्यो विधिरश्मरिनाशनः ॥ १ ॥

शुक्राश्मरी के होने पर अश्मरीनाशक सामान्यविधि से चिकित्सा करनी चाहिये ॥ १

अथ कूष्माण्डरसः—यवक्षारगुडोन्मिश्रं पिबेत्पुष्पफलोद्भवम्।
रसं मूत्रविबन्धघ्नं शुक्राश्मरिविनाशनम् ॥ १ ॥

पेठे का स्वरस यवक्षार और गुड मिलाकर पिलाने से मूत्र का रुकना दूर हो जाता है तथा शुक्रजअश्मरी नष्ट होती है ॥ १ ॥

अथ शतावर्यादिः—शतावरीमूलरसो गव्येन पयसा समः।
पीतो निपातयत्याशु ह्यश्मरीं चिरजामपि ॥ १ ॥

शतावर की जड़ का स्वरस गौ के दूध के साथ मिलाकर पिलाने से पुरानी शुक्राश्मरी भी शीघ्र निकल जाती है ॥ १ ॥

अथ कुटजादियोगः—पिबतः कुटजं दध्ना पथ्यमन्नं च खादतः।
निपतत्यचिरादस्य निश्चितं मेढ्रशर्करा ॥ १ ॥

कुड़े की छाल का चूर्ण दही के साथ पीने से और पथ्य अन्न खाने से मेढ्र में हुई २ शर्करा शीघ्र ही निस्सन्देह दूर होती है ॥ १ ॥

अथ कुटजकल्कः—अपि च कुटजमूलं धेनुदध्यम्बुपिष्टं।
पिचुमितमवलीढं पातयत्यश्मरीकाम् ॥ १ ॥

कुड़े की जड़ को गौ के दही के पानी से पीसकर कल्क करके एक अक्षभर चाटने से शीघ्र ही अश्मरी निकल जाती है ॥ १ ॥

अथैरण्डादिकल्कः—गन्धर्वहस्तबृहतीव्याघ्रीगोक्षुरकेक्षुरात्।
मूलकल्कं पिबेद्दध्ना मधुरेणाश्मभेदनः ॥ १ ॥

एरण्ड की जड़, बड़ी कटेली की जड़, छोटी कटेली की जड़, गोखरु की जड़, तालम खाने की जड़, इन सबके कल्क बनाकर मीठे दही से खावें तो पथरी नष्ट हो जाती है ॥ १ ॥

अथ पाषाणभेदादिक्वाथः—पाषाणभिद्वरुणगोक्षुरकोरुबूक-
क्षुद्राद्वयक्षुरकमूलकृतः कषायः।

दध्ना युतो जयति मूत्रविबन्धशुक्र-
मुग्राश्मरीमपि च शर्करया समेताम् ॥ १ ॥

पाषाण भेद की जड़, वरणे की जड़, गोखरु की जड़, एरण्ड की जड़, बड़ी कटेली की जड़, छोटी कटेली की जड़, तालमखाना की जड़ इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर क्वाथ करे। उस क्वाथ में दही मिलाकर पीने से मूत्र विबन्ध, शुक्रज उग्र अश्मरी तथा शर्करा भी नष्ट होती है ॥ १ ॥

अथैलादि—एलोपकुल्यामधुकाश्मभेदकौन्तीश्वदंष्ट्रावृषकोरुबूकैः।
शृतं पिबेदश्मजतु प्रगाढं सशर्करे साश्मरिमूत्रकृच्छ्रे ॥१॥

छोटी इलायची, पीपली, मुलठ्ठी, पाषाणभेद, रेणुका, गोखरु, बांसा, एरण्ड की जड़ इन सबको समभाग लेकर क्वाथ करे। इसमें शोधित शिलाजीत तथा खांड डाल दे, इसे पिलाने से पथरी तथा मूत्रकृच्छ्र नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथ शिग्रुमूलादिः—क्वाथश्च शिग्रुमूलोत्थः कदुष्णोऽश्मरिपातनः।
क्षीरान्नभुग्बर्हिशिखामूलं वा तण्डुलाम्बुना ॥ १ ॥

सुहांजने की जड़ का क्वाथ कुछ २ गरम रहे तभी पिला देने से अश्मरी निकल जाती है। तथा जो दूध और अन्न केवल खावे तो मयूर शिखा की जड़ को चावलों के जल से पीने से अश्मरी नष्ट हो जाती है ॥ १ ॥

अथ शिलाजत्वादि—अश्मर्यां चाश्मरीकृच्छ्रे शिलाजतु समाक्षिकम्।
यवक्षारं गोक्षुरं च खादेद्वा चाश्मरीहरम् ॥ १ ॥

शिलाजीत में शहद मिलाकर खाने से अश्मरी रोग तथा अश्मरी सहित मूत्रकृच्छ्र अच्छा होता है। यवक्षार तथा गोखरु के चूर्ण को खिलावें तो अश्मरी नाश होती है ॥ १ ॥

अथ त्रपुसीबीजादि—त्रपुसीबीजं पयसा पीत्वा वा नारिकेरजं कुसुमम्।
दृढमूत्रशर्करावान्भवति सुखी कतिपयैर्दिवसैः॥ १ ॥

खीरे के बीजों को दूध से वा पानी से घोटकर पीने से, अथवा नारियल के फूल को जल वा दूध से पीने से कुछ ही दिनों में रुके हुए मूत्र तथा शर्करा नष्ट होती है ॥ १ ॥

अथ राजमार्तण्डाद्गोपालकर्कट्यादि—

गोपालकर्कटीमूलं पिष्टं पर्युषिताम्भसा।
पीयमानं त्रिरात्रेण पातयत्यश्मरीं हठात् ॥ १ ॥

गोपालकर्कटी जिसे हिन्दी में गोरुभा या गोपालकांकड़ी कहते हैं उस की जड़ को पीसकर बासी पानी से पिलावें तो तीन रात में अश्मरी अवश्य नष्ट हो जाती है ॥ १ ॥

अथ वृन्दात् शृङ्गबेरादियोगः—

शृङ्गबेरयवक्षारपथ्याकालीयकान्वितम्।

आजं दधि भिनत्त्युग्रामश्मरीमाशु पातयेत् ॥ १ ॥

सोंठ, जौखार, हरड़, (कालीयकं—दारुहरिद्रा वा कालीअगर), कालीअगर इन सबको समभाग लेकर चूर्ण करे। यह चूर्ण बकरी के दही के साथ खाने से उग्र अश्मरी को भी तोड़कर शीघ्र बाहिर निकाल देता है ॥ १ ॥

अथार्कपुष्पीकल्कः—

गव्येन पिष्टा पयसाऽर्कपुष्पी निपीयमानाऽनुदिनं प्रभाते।
विदार्य वीर्येण निजेन तीव्रामप्यश्मरीं या कुरुते सदाहाम् ॥१॥

अर्कपुष्पी अर्थात् श्वेत हुलहुल या अन्धाहुली को गौ के दूध से पीसकर प्रतिदिन प्रातःकाल पिलावें तो यह अपनी शक्ति से तीव्र दाह युक्त पथरी को भी विदीर्ण कर के बाहर निकाल देती है ॥ १०॥

अथ त्रिकण्टकादिचूर्णम्—त्रिकण्टकस्य बीजानां चूर्णं माक्षिकसंयुतम्।
अविक्षीरेण सप्ताहं पिबेदश्मरिभेदनम् ॥ १ ॥

गोखरू के बीजों का चूर्ण शहद मिलाकर बकरी के दूध के साथ सात दिन पिलाने से अश्मरी को तोड़ देता हैं ॥ १ ॥

अथ हरिद्रादियोगः—यः पिबेद्रजनीं सम्यक्सगुडां तुषवारिणा।
तस्याऽऽशु चिररूढाऽपि यात्यस्तं मेढ्रशर्करा ॥१॥

जो मनुष्य हल्दी के चूर्ण को गुड मिलाकर तुषोदक से पीता है उस की मेढ्रशर्करा कितनी ही पुरानी क्यों न हो तो भी इस से शीघ्र दूर होजाती है ॥१॥

अथ तिलादिक्षारयोगः—तिलापामार्गकदलीपलाशयवसंभवः।
क्षारः पेयोऽविमूत्रेण शर्करास्वश्मरीषु च ॥ १ ॥

तिल के पौधे, अपामार्ग के पौधे, केले के पौधे, ढाक के पेड़ तथा जौ के पौधे इन सब को सुखाकर इन का क्षार बनावें। इस क्षार को भेड़ के दूध के साथ पीवें तो शर्करा तथा अश्मरी रोग दूर होता है ॥ १ ॥

अथ तिलक्षारः—

क्षारो निपीतस्तिलनालजातः समाक्षिकः क्षीरयुतस्त्रिरात्रम्।
हन्त्यश्मरीं सिन्धुविमिश्रितं वा निपीयमानं रुचकं प्रयत्नात् ॥१॥

तिल के नाल अर्थात् तने का क्षार बनावें। उस क्षार को शहद तथा दूध मिलाकर तीन रात पिलावें तो अश्मरी नष्ट होती है। अथवा सेंधा नमक मिलाकर रुचकनमक को प्रयत्न से पीने से भी अश्मरी नष्ट होती है ॥ १ ॥

अथ वरुणादिघृतम्—वरुणस्य तुलां क्षुण्णां जलद्रोणे विपाचयेत्।
पादशेषं परिस्राव्य घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥ १ ॥

वरुण की छाल या जड़ एक सौ पल लेकर कूटकर एक द्रोण जल में डाल कर पकावें जब चौथाई जल शेष रह जावे तो उतार कर छान ले। इस क्वाथ

में एक प्रस्थ गौ का घी डालकर पकाले ॥ १ ॥

वारुणी कदली बिल्वं तृणजं पञ्चमूलकम् ।
अमृता त्वश्मजं देयं बीजं च त्रपुसस्य च ॥ २ ॥

फिर इस में इन्द्रायण की जड़ केले की जड़, बिल की जड़ तथा पंचतृण मूल के पांचों द्रव्य, गिलोय, शिलाजीत, खीरे के बीज ॥ २ ॥

शतपर्वा तिलक्षारः पलाशक्षार एव च ।
यूथिकायाश्च मूलानि कार्षिकाणि समावपेत् ॥ ६ ॥

शतपर्वा अर्थात् बांस की जड़, तिल का क्षार, पलाश का क्षार, जुही की जड़ इन सब को एक २ कर्ष लेकर चूर्ण कर के उसी घी में डाल दे ॥ ३ ॥

अस्य मात्रां पिबेज्जन्तुर्देशकालाद्यपेक्षया ।
जीर्णे चानुपिबेत्पूर्वमजीर्णे न तु मस्तुना ।
अश्मरीं शर्करां चैव मूत्रकृच्छ्रं च नाशयेत् ॥ ४ ॥

इस वरुण घृत की मात्रा देशकाल आदि की अपेक्षा से पीवें । भोजन से पूर्व यदि भोजन पच चुका हो तो इसे दही के जल से पीवे।और यदि अजीर्ण हो तो दही के पानी से न पिलावें (चक्रदत्त में "जीर्णे तस्मिन्पिबेत् पूर्वं गुडंजीर्णन्तु मस्तुना",भोजनसे पूर्व पुराना गुड दही के जलसे पिलावें ऐसा पाठ है) इसके सेवन से अश्मरी, शर्करा और मूत्रकृच्छ्र नष्ट हो जाते हैं ॥४॥ इति वरुणघृतम् ।

अथ पाषाणभेदपाकः—अश्मभेदात्प्रस्थमेकं चूर्णितं वस्त्रगालितम् ।
गव्ये दुग्धाढके क्षिप्त्वा पाचयेन्मृदुवह्निना ॥१॥

दर्व्या संमर्दयेत्तावद्यावद्घनतरं भवेत् ।
एला लवङ्गमगधा यष्टीमध्वमृताऽभया ॥ २ ॥

पाषाणभेद को कूट पीसकर वस्त्र में से छानकर चूर्ण करे । इस चूर्ण को एक प्रस्थ ले । इस चूर्ण को एक आढक गौ के दूध में डालकर पकाकर खोया बनावे । फिर छोटी इलायची, लौंग, पिप्पली, मुलट्ठी, गिलोय, हरड़ ॥ २ ॥

कौन्ती श्वदंष्ट्रा वृषकं शरपुङ्खा पुनर्नवा ।
यावशूको निलम्बी च मांसी सप्ताङ्गुलात्पलम् ॥ ३ ॥

रेणुका, गोखरु, बांसा, शरपुंखा, पुनर्नवा, जौखार, (निलम्बी इसका अर्थ नहीं मिलता सम्भवतः शब्द लम्बा हो) लम्बा अर्थात् इन्द्रवारुणी, जटामांसी तथा सप्तांगुल अर्थात् सतौने की छाल एक २ पल लें ॥ ३ ॥

वङ्गं लौहं तथाऽभ्रं च कर्पूरं पर्पटं सटी ।
पत्रेभकेसरं त्वक्च संशुद्धं च शिलाजतु ॥ ४ ॥

वङ्गभस्म आधा पल, लौहभस्म आधापल, अभ्रकभस्म आधा पल, कपूर आधा पल, पित्तपापड़ा आधा पल, कचूर आधापल, तेजपत्र का चूर्ण आधापल,

नागकेशर आधा पल दारचीनी आधापल, शुद्ध शिलाजीत आधापल ॥ ४ ॥

पृथगर्धपलं चूर्णं चूर्णिता सितशर्करा ।
सार्धप्रस्थमिता ग्राह्या दुग्धे वै लेह्यतां नयेत् ॥ ५ ॥
सर्वं तन्निक्षिपेत्तत्र स्वाङ्गशीतलतां नयेत् ।
मधुनः प्रस्थकं दद्यात्स्निग्धभाण्डे विनिक्षिपेत् ॥ ६ ॥

सफेद खांड आधा प्रस्थ इन सबको लेकर दूध में डाल दें इस लेह में शेष चूर्णों को डाल दें । फिर स्वांग शीतल होने पर एक प्रस्थ शहद मिलावे । इन सबको एकत्र करके स्निग्ध भाण्ड में रख देवे ॥ ६ ॥

कर्षार्धं भक्षयेत्प्रातस्तीक्ष्णं तैलादिकं त्यजेत् ।
पञ्चाश्मरीभेदनः स्यान्मूत्रकृच्छ्रं खुडं तथा ॥ ७ ॥

फिर इसे आधा २ कर्ष भर ले प्रातःकाल खावे । इसके ऊपर से तीक्ष्ण पदार्थ और तैलादि का सेवन न करे । इससे पांचों प्रकार की अश्मरी नष्ट होती हैं तथा मूत्रकृच्छ्र और वातरक्त रोग नष्ट होते हैं ॥ ७ ॥

मूत्राघातान्प्रमेहांश्च नाशयेन्मधुमेहताम् ।
अधोगं रक्तपित्तं च बस्तिकुक्षिगदं तथा ॥ ८ ॥

मूत्राघात, प्रमेह, मधुमेह ये सभी रोग नष्ट होते हैं । अधोगामी रक्तपित्त रोग, बस्ति तथा कुक्षि के रोग भी नष्ट होते हैं ॥ ८ ॥

तीव्राश्मरीपरीतानां विशेषेण हितं हि तत् ।
प्रथमात्रिणा विरचितं च्यवनाय निवेदितम् ॥ ९ ॥

तीव्र अश्मरी रोगियों के लिये यह विशेष हितकर है । प्रथम २ अत्रि महर्षि ने यह प्रयोग बनाकर च्यवन महर्षि को सुनाया था ॥ ९ ॥

अथ रसाः ।

तत्रादौ पाषाणवज्रकरसः—शुद्धसूतं त्रिधा गन्धं द्रावैः श्वेतपुनर्नवैः ।
मर्दयित्वा दिनं खल्वे रुद्ध्वा तद्भूधरे पचेत् ॥ १ ॥

शुद्ध पारा एक भाग, शुद्ध गन्धक तीन भाग, दोनों की कज्जली कर के श्वेत पुनर्नवा के स्वरस से एक दिनभर खरल में मर्दन करे । फिर भूधरयंत्र में रख पचावे ॥ १ ॥

पाषाणभेदचूर्णं तु समयुक्तं द्विमाषकम् ।
भक्षयेदश्मरीं हन्ति रसः पाषाणवज्रकः ॥ २ ॥

फिर इसे शीतल होने पर निकाले और इस के साथ समभाग पाषाणभेद का चूर्ण मिलावे । और इसे दो माषाभर खावे तो यह पाषाण वज्रकरस अश्मरी को नष्ट करता है ॥ २ ॥

गोपालकर्कटीमूलक्वाथं तदनु पाययेत् ॥ ३ ॥

इस रस के साथ अनुपान में गोपालककड़ी की जड़ का क्वाथ पीवे ॥ ३ ॥

अथ त्रिविक्रमरसः—ताम्रभस्म त्वजाक्षीरे पाच्यं तुल्ये घृते पचेत् ।
तत्ताम्रं शुद्धसूतं च गन्धकं च समं समम् ॥ १ ॥

तांबे की भस्म को बकरी के दूध और दूध के समभाग घी में मिलाकर अग्नि पर पकावे । उस तांबे की भस्म को निकाल कर रखे । उस के समभाग शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक मिलाकर कज्जली करे ॥ १ ॥

निर्गुण्ड्युत्थद्रवैर्मर्द्य दिनं तद्गोलमाहरेत् ।
यामैकं वालुकायन्त्रे पाच्यं योज्यं द्विगुञ्जकम् ॥ २ ॥

फिर इस को निगुण्डी के स्वरस से एक दिन खरल कर के गोला बनावे । फिर उस गोले को बालुकायंत्र में रख एक याम पकावे । इसे स्वांगशीतल होने पर निकाल लें । इस रस की मात्रा दो रत्तिभर की है ॥ २ ॥

बीजपूरस्य मूलं तु सजलं चानुपाययेत् ।
रसस्त्रिविक्रमो नाम्ना सिकतां चाश्मरीं जयेत् ॥ ३ ॥

इस के साथ बिजौरे नीबू की जड़ पानी में पीसकर पिलावें । इस त्रिविक्रम रस के सेवन करने से अश्मरी तथा सिकता दूर होती है ॥ ३ ॥

अथ पथ्यम् ।

कुलित्था मुद्गगोधूमा जीर्णशालियवा हिताः ।
धन्वामिषं तण्डुलीयं जीर्णकूष्माण्डकं फलम् ।
आर्द्रकं यावशूकश्च पथ्यमश्मरिरोगिणाम् ॥ १ ॥

कुलथ, मूंग, गेहूं, पुराने शाली धान्य, जौ, धन्वजमांस, चौलाई का साग, पुराना पेठे का फल, अदरक, यवक्षार ये सभी पदार्थ अश्मरी रोगियों के लिये पथ्य कहे हैं ॥ १ ॥

इति हरिद्वारीय गुरुकुलविश्वविद्यालयस्नातकेन श्रीविद्याधरविद्यालङ्कारेण श्रीमद्द्यानन्दायुर्वेदमहाविद्यालयीय वैद्यकविराजोपाधिधारिणा राजयक्ष्मचिकित्सकेन जलचिकित्साविशेषज्ञेन रसेन्द्रसारसंग्रहटीकाकर्त्रा कृतायां योगरत्नाकरस्य रत्नगर्भानाम्निटीकायां अश्मरीप्रकरणं समाप्तम् ॥

अथातो मेहनिदानम् ।

आस्यासुखं स्वप्नसुखं दधीनी ग्राम्योदकानूपरसाः पयांसि ।
नवान्नपानं गुडवैकृतं च प्रमेहहेतुः कफकृच्च सर्वम् ॥ १ ॥

अधिक सुखपूर्वक बैठे रहने से, सोये रहने से, दही खाने से, ग्राम्य, जलीय तथा आनूप जीवों के मांस के रस खाने से, दूध पीने से, नये अन्न खाने पीने से गुड के विकार खांड शक्कर आदि खाने पीने से तथा कफकारी सभी पदार्थ खाने से प्रमेहरोग होजाता है ॥ १ ॥

तन्त्रान्तरे—मूत्राघाताः प्रमेहाश्च शुक्रदोषास्तथैव च ।

मूत्रदोषाश्च ये वाऽपि बस्तौ चैव भवन्ति हि ॥ २ ॥

मूत्राघात, प्रमेह, शुक्रदोष, मूत्रदोष अथवा अन्य बस्ति में होने वाले रोग ये सभी रोग भी पूर्व वर्णित कारणों से हो जाते हैं ॥ २ ॥

अथ संप्राप्तिमाह—

मेदश्च मांसं च शरीरजं च क्लेदं कफो बास्तिगतः प्रदूष्य ।
करोति मेहान्समुदीर्णमुष्णैस्तान्येव पित्तं परिदूष्य चापि ॥ ३ ॥
क्षीणेषु दोषेष्ववकृष्य बस्तौ धातून्प्रमेहान्कुरुतेऽनिलश्च ॥४॥

बस्ति में रहने वाला कफ, मेद, मांस तथा शरीर के क्लेद को संदूषित करके कफ प्रमेहों को करता है । तथा उष्णवीर्य और उष्णस्पर्श द्रव्यों के सेवन करने से बस्तिगतपित्त उनही मेद मांसादियों को प्रदूषित करके पैत्तिक प्रमेहों को करता है। तथा वायु बढ़ हुए दोषों के क्षीण होने पर बस्ति में (वसा, मज्जा, ओज, लसीका आदि) धातुओं को खींचकर प्रमेहों अर्थात् वातिक प्रमेहों को करता है ॥ ४ ॥

अथ क्रमेण साध्यासाध्यत्वमाह—

साध्याः कफोत्था दश पित्तजाः षड्याप्या न साध्याः पवनाच्चतुष्काः ।
समक्रियत्वाद्विषमक्रियत्वान्महात्ययत्वाच्च यथाक्रमं ते ॥ ५ ॥

कफज दश प्रमेह साध्य हैं, पित्तज छह प्रमेह याप्य हैं, वातज चार प्रमेह असाध्य हैं । कफज प्रमेह में दोष कफ, तथा दूष्य मेदः आदि धातु समक्रिय हैं । अर्थात् कफनाशक कटुतिक्तादि क्रिया मेदः नाशक भी है अतः कफज प्रमेह सुख साध्य हैं । पित्तज प्रमेह में दोष पित्त तथा दूष्य मेदः आदि धातु विषमक्रिय हैं । अर्थात् पित्त को शान्त करने वाले मधुरादि रसविशिष्ट पदार्थ मेद को शान्त नहीं करते प्रत्युत् बढ़ते हैं इसी कारण विषमक्रिय होने से पित्तज प्रमेह कष्टसाध्य हैं । वातज प्रमेह में वात (महात्ययत्वात् च) क्योंकि मज्जादि गम्भीर धातुओं को खींचकर शरीर से बाहर कर देने के कारण अत्यन्त विनाश कर देता है इस कारण से और वायु आशुकारी होता है इस कारण से वातप्रमेह असाध्य माना है ॥ ५ ॥

तन्त्रान्तरे—ज्वरे तुल्यर्तुदोषत्वं प्रमेहे तुल्यदूष्यता ।
रक्तगुल्मे पुराणत्वं सुखसाध्यस्य लक्षणम् ॥ ६ ॥

ज्वर रोग में तुल्य ऋतु तथा तुल्य दोष हों तो सुखसाध्य होता है, प्रमेह में दोष तथा दूष्य दोनों समान दूषित हों तो प्रमेह सुखसाध्य होता है । रक्तगुल्म-रोग जितना पुराना हो जाय उतना सुखसाध्य होता है ॥ ६ ॥

तन्त्रान्तरे वातचतुष्टयस्य साध्यत्वमुक्तम्—

या वातमेहान्प्रति पूर्वमुक्ता वातोल्बणानां विहिता क्रिया सा ।
वायुर्हि मेहेष्वतिकर्षितेषु करोति मेहान्प्रति नास्ति चिन्ता ॥७॥

जो क्रिया वातमेहों के प्रति कही है वह क्रिया वातोल्वण प्रमेहों के लिये भी

समझनी चाहिये। वायु प्रमेहों के अति कर्षित अर्थात् अधिक क्षीण कर चुकने के बाद प्रमेह करती है उस वातोल्वण प्रमेह की चिन्ता नहीं करनी चाहिये। (जब बढ़ी हुई मेदादि धातुओं की शरीर में कमी होकर वात बढ़ जाता है उस वातोल्वणप्रमेह की चिकित्सा हो जाती है परन्तु जब समावस्था में सब धातु हों तब वायु अत्यधिक कुपित होकर प्रमेह करदे तब वे वातिक प्रमेह असाध्य होते हैं॥७॥

अथ प्रमेहे दोषदूष्यवर्गमाह—

कफः सपित्तः पवनश्च दोषा मेदोऽस्रशुक्राम्बुवसालसीकाः।
मज्जा रसौजः पिशितं च दूष्यं प्रमेहिणां विंशतिरेव मेहाः॥८॥

कफ, पित्त और वात ये दोष कहाते हैं। मेद, रक्त, वीर्य्य, जल, वसा, लसीका, मज्जा, रस, ओज तथा मांस ये दस पदार्थ दूष्य कहाते हैं। सब प्रमेह बीस होते हैं॥ ८॥

अथ तन्त्रान्तरे दूष्यसंग्रह उक्तः—

वसा मांसं शरीरस्य क्लेदः शुक्रं च शोणितम्।
मेदो मज्जालसीकौजः प्रमेहे दूष्यसंग्रहः॥ ९॥

वसा, मांस, शरीर का क्लेद अर्थात् पसीनादि, वीर्य तथा रक्त। मेद, मज्जा, लसीका तथा ओज ये सभी प्रमेह में दूष्य माने हैं॥ ९॥

अथ पूर्वरूपमाह—**दन्तादीनां मलाढ्यत्वं प्राग्रूपं पाणिपादयोः।**
दाहश्चिक्कणता देहे तृट् स्वाद्वास्यं च जायते॥ १०॥

दांत आदि का मैल से युक्त रहना, पैर तथा हाथों में जलन होनी, देह चिकनी होनी, प्यास लगनी, मुंह का स्वाद मीठा रहना ये सभी प्रमेह के पूर्वरूप कहाते हैं॥ १०॥

अथ सामान्यलक्षणमाह—**सामान्यं लक्षणं तेषां प्रभूताविलमूत्रता॥**

सब प्रमेहों का सामान्य लक्षण यह है कि मूत्र अधिक आता है तथा गंदला आता है।

अथ कारणभेदात्कार्यभेदमाह—**दोषदूष्याविशेषेऽपि तत्संयोगविशेषतः॥११**

दोष दूष्य यदि विशेष न भी हों तो भी संयोग की न्यूनता वा अधिकता से ११

मूत्रवर्णादिभेदेन भेदो मेहेषु कल्प्यते॥
सम्यग्भेदं परीक्ष्याऽऽदौ क्रिया कार्या भिषग्वरैः॥ १२॥

तथा मूत्रों के रंग के भेद से भी प्रमेहों में भेद हो जाता है। इस कारण पहले प्रमेहों के भेद को भली प्रकार परीक्षा करके फिर वैद्य क्रिया करे॥१२॥

अथ नामान्याह—**दकमेहस्तथा चेक्षुः सान्द्रमेहः सुराभिधः।**
पिष्टप्रमेहः शुक्राख्यः सिकता शीतकः शनैः॥ १३॥

दकमेह या उदकमेह, इक्षुमेह, सान्द्रमेह, सुरामेह। पिष्टप्रमेह, शुक्रमेह, सिकतामेह, शीतमेह, शनैः मेह॥ १३॥

लालामेहस्तथा क्षारो नीलमेहोऽथ कालकः।
हारिद्रमेहमाञ्जिष्ठौ रक्तमेहस्तथाऽपरः ॥ १४ ॥

लालामेह, क्षारमेह, नीलमेह, कालमेह। हारिद्रमेह, माञ्जिष्ठमेह, रक्तमेह॥१४॥

षोडशोऽथ वसामेहो मज्जामेहश्च कीर्तितः।
क्षौद्रमेहस्तथा हस्ती मेहानां विंशतिः क्रमात् ॥ १५ ॥

ये सोलह हुये। वसामेह, मज्जामेह, क्षौद्रमेह, हस्तीमेह ये चार मिलाकर सब बीस प्रमेह हुए। इनमें क्रमशः पहले दसप्रमेह उदकमेहादि कफज होते हैं। और बाद के क्षारमेहादि छः प्रमेह पित्तज होते हैं और शेष वसामेह आदि चार प्रमेह वातज होते हैं ॥ १५ ॥

उदकमेहादयो दश कफजाः—तत्रोदकमेहमाह—

अच्छं बहु सितं शीतं निर्गन्धमुदकोपमम्।
मेहत्युदकमेहेन किंचिदाविलपिच्छिलम् ॥ १६ ॥

स्वच्छ स्फटिक के समान, बहुत अधिक, श्वेत रंग का, शीतल, गन्धरहित, पानी के समान तरल, और कभी २ कुछ २ गंदला तथा पिच्छिल मूत्र उदकमेह में होता है ॥ १६ ॥

अथेक्षुमेहमाह—**इक्षो रसमिवात्यर्थं मधुरं चेक्षुमेहतः ॥**

इक्षुमेह में ईख के रस के समान अत्यन्त मीठा मूत्र होता है ॥

अथ सान्द्रमेहमाह—**सान्द्री भवेत्पर्युषितं सान्द्रमेहेन मेहति ॥ १७ ॥**

सान्द्रमेह में रोगी का मूत्र यदि रखा जाये तो बासी होकर सान्द्र अर्थात् गाढ़ा हो जाता है ॥ १७ ॥

अथ सुरामेहमाह—**सुरामेही सुरातुल्यमुपर्यच्छमधो घनम् ॥**

सुरामेह में मूत्र सुरा के समान होता है। ऊपर तरल स्वच्छ पतला होता है तथा नीचे तल में घना होता है ॥

अथ पिष्टमेहमाह—**संहृष्टरोमा पिष्टेन पिष्टवद्बहुलं सितम् ॥ १८ ॥**

पिष्टमेह में रोमहर्ष होता है तथा पीठी के समान श्वेत रंग का तथा अधिक मूत्र आता है ॥ १८ ॥

अथ शुक्रमेहमाह—**शुक्राभं शुक्रमिश्रं वा शुक्रमेही प्रमेहति ॥**

शुक्रमेह में वीर्य्य के समान आभावाला तथा वीर्य से मिला हुआ मूत्र निकलता है ॥

अथ सिकतामेहमाह—**मूत्राणून्सिकतामेही सिकतारूपिणो मलान् ॥१९॥**

सिकतामेह में मूत्र में सिकता रूपी अर्थात् रेता के सदृश मूत्र के अणु तथा मल के अणु निकलते हैं ॥ १९ ॥

अथ शीतमेहमाह—**शीतमेही सुबहुशो मधुरं भृशशीतलम् ॥**

शीतमेह में अत्यधिक, मधुर तथा अतिशीतल मूत्र आता है ॥

अथ शनैर्मेहमाह—**शनैः शनैः शनैर्मेही मन्दं मन्दं प्रमेहति ॥ २० ॥**

शनैः मेह में मूत्र अत्यन्त मन्द २ आता है ॥ २० ॥

अथ लालाप्रमेहमाह—

लालातन्तुयुतं मूत्रं लालामेहेन पिच्छिलम् ॥ १ ॥

एवं दशश्लेष्मजाः ॥

लालामेह में लाला तथा तन्तुओं अर्थात् लारों की तरह तथा धागों की तरह मूत्र आता है तथा पिच्छिल होता है ॥ १ ॥ इस प्रकार से ये दस श्लेष्मज प्रमेह हुए ॥ अथ षट् पैत्तिकानाह-तत्र क्षारमेहमाह—

गन्धवर्णरसस्पर्शैः क्षारेण क्षारतोयवत् ॥ २१ ॥

क्षारमेह में मूत्र का गंध, रंग, रस तथा स्पर्श क्षार के जल के समान खारा होता है ॥ २१ ॥ नीलकालमेहावाह—

नीलमेहेन नीलाभं कालमेही मषीनिभम् ॥

नीलमेह में नीले रंग का मूत्र होता है। तथा कालमेह में काले रंग का काली स्याही के समान मूत्र निकलता है ॥

अथ हारिद्रमेहमाह—**हारिद्रमेही कटुकं हरिद्रासंनिभं दहत् ॥ २२ ॥**

हारिद्रमेह में मूत्र का स्वाद कटु होता है, रंग हल्दी के समान पीला होता है तथा मूत्र जलता हुआ आता है ॥ २२ ॥

अथ माञ्जिष्ठमेहमाह—**विस्रं माञ्जिष्ठमेहेन मञ्जिष्ठासलिलोपमम् ॥**

माञ्जिष्ठमेह में मूत्र दुर्गन्धयुक्त आता है और मंजीठ के पानी के समान लाल रंगवाला होता है ॥

अथ रक्तमेहमाह—**विस्रमुष्णं सलवणं रक्ताभं रक्तमेहतः ॥ २३ ॥**

एवं षट् पैत्तिकाः ॥

रक्तमेह में मूत्र बदबूदार, गरम तथा नमकीन रसवाला आता है और उस का रंग खून की तरह होता है। ये छह पैत्तिक प्रमेह हुए ॥ २३ ॥

अथ चतुरो वातजानाह। तत्राऽऽदौ वसामेहमाह—

वसामेही वसामिश्रं वसाभं मूत्रयेन्मुहुः ॥ २४ ॥

वसामेह में रोगी का मूत्र वसा से मिश्रित होता है तथा वसा के समान होता है और बार २ मूत्र आता है ॥

अथ मज्जामेहमाह—**मज्जाभं मज्जमिश्रं वा मज्जमेही मुहुर्मुहुः ॥ २४ ॥**

मज्जा मेह में रोगी का मूत्र मज्जा के समान अथवा मज्जा से युक्त होता है तथा बार २ आता है ॥ २४ ॥

अथ क्षौद्रमेहमाह—**कषायं मधुरं रूक्षं क्षौद्रमेहेन मेहति ॥**

क्षौद्रमेह में कषाय अर्थात् कसैला, मधुर तथा रूखा (शहद के समान रंगवाला) मूत्र आता है ॥

अथ हस्तिमेहमाह—हस्ती मत्त इवाजस्रं मूत्रं वेगविवर्जितम् ।
सलसीकं विबद्धं च हस्तिमेही प्रमेहति ॥ २५ ॥

हस्तिमेह मे मस्त हाथी के समान लगातार बिना वेग के मूत्र आता है, लसीका सहित तथा कभी २ बंधा हुआ भी मूत्र आता है ॥ २५ ॥

उपद्रवानाह—अविपाकोऽरुचिश्छर्दिर्निद्रा कासः सपीनसः ।
उपद्रवाः प्रजायन्ते मेहानां कफजन्मनाम् ॥ २६ ॥

अब कफज प्रमेहों के उपद्रव लिखे जाते हैं—भोजन का परिपाक न होना, अरुचि, वमन, निद्रा आना, खांसी तथा पीनस होना ॥ २६ ॥

पित्तमेहोपद्रवानाह-बस्तिमेहनयोस्तोदो मुष्कावदरणं ज्वरः ।
दाहस्तृष्णा क्लमो मूर्च्छा विड्भेदः पित्तजन्मनाम्॥२७॥

बस्ति तथा लिङ्ग में पीड़ा होती है, अण्डकोष फटते से प्रतीत होते हैं, ज्वर, दाह, तृष्णा, क्लांति, मूर्च्छा, मलभेद ये सभी उपद्रव पित्तज प्रमेह के कहाते हैं ॥ २७ ॥

अथ वातजानामाह—वातजानामुदावर्तः कण्ठहृद्ग्रहलोलताः ।
शूलमुन्निद्रता शोषः कासः श्वासश्च जायते ॥२८॥

वातज प्रमेह के उपद्रव आगे कहते हैं—उदावर्त्त, कण्ठग्रह तथा हृद्ग्रह, लोलता अर्थात् चञ्चलता, शूल, निद्रा न आना, शोष, कास तथा श्वास ॥ २८ ॥

अथासाध्यतामाह—यथोक्तोपद्रवाविष्टमतिप्रस्रुतमेव च ।
पिटिकापीडितं गाढं प्रमेहो हन्ति मानवम् ॥ २९ ॥

पूर्व लिखित उपद्रवों से युक्त, अति अधिक मात्रा में मूत्र करनेवाले, पिडिकाओं से युक्त चिरन्तन प्रमेहरोगी को प्रमेहरोग नष्ट कर देता है ॥ २९ ॥

मूर्च्छाछर्दिज्वरश्वासकासवीसर्पगौरवैः ।
उपद्रवैरुपेतो यः प्रमेही दुष्प्रतिक्रियः ॥ ३० ॥

तथा मूर्च्छा, छर्दि, ज्वर, श्वास, कास, वीसर्प तथा गौरव इन उपद्रवों से युक्त प्रमेहरोगी असाध्य है ॥ ३० ॥

नराणां दृश्यते मेहः स्त्रीणां किंतु न दृश्यते ।
अन्नपानविशेषेण दोषदूष्यक्रमेण च ॥ ३१ ॥

पुरुषों को तो प्रमेह होता है, स्त्रियों को प्रमेह नहीं होता है । अन्नपानों की विशेषता से तथा दोषदूष्यके क्रम से ॥३१॥

रजः प्रवर्तते यस्मान्मासि मासि विशोधयत् ।
सर्वान्धातूंश्च दोषांश्च न प्रमेहन्त्यतः स्त्रियः ॥ ३२ ॥

क्योंकि प्रतिमास स्त्रियों को रजःस्राव होता रहता है और इससे शरीर के सब धातु तथा दोष शुद्ध होते रहते हैं । इस लिये स्त्रियों को प्रमेह नहीं होता है ॥३२॥

जातः प्रमेही मधुमेहिना वा साध्यो न रोगः स हि बीजदोषात्।
ये चापि केचित्कुलजा विकारा भवन्ति तांश्च प्रवदन्त्यसाध्यान् ॥३३

मधुमेही अर्थात् प्रमेह रोग वाले के उत्पन्न हुआ २ सन्तान यदि बीज दोष ही प्रमेह रोगी हो तो वह असाध्य होता है क्योंकि वह बीज दोष से हुआ होता है। जो भी कुल से आये हुए विकार होते हैं वे भी असाध्य होते हैं। (मधुमेह शब्द यहां सामान्य प्रमेह का वाचक है) ॥ ३३ ॥

मधुमेहिनं प्रदर्शयन्नाह—सर्व एव प्रमेहास्तु कालेनाप्रतिकारिणः।
मधुमेहत्वमायान्ति तदाऽसाध्या भवन्तिहि॥३४॥

सभी प्रकार के प्रमेह अधिक काल बीतने पर चिकित्सा न करने से मधुमेह को प्राप्त हो जाते हैं और तब असाध्य हो जाते हैं ॥ ३४ ॥

अथ तन्त्रान्तरे—गुल्मी च मधुमेही च राजयक्ष्मी च यो नरः।
अचिकित्स्या भवन्त्येते बलमांसपरिक्षयात् ॥ ३५ ॥

गुल्मरोगी, मधुमेहरोगी तथा राजयक्ष्मा के रोगी तब तक चिकित्सा करने के योग्य होते हैं जब तक कि उनके शरीर में मांस और बल रहता है मांस और बल के क्षीण हो जाने पर इन रोगियों की चिकित्सा नहीं हो सकती ॥ ३५ ॥

अथ धातुक्षयावरणाभ्यां कुपितवातेन मधुसंभवमाह—

मधुमेहो मधुसमं जायते स किल द्विधा।
क्रुद्धे धातुक्षयाद्वायौ दोषावृतपथेऽथवा ॥ ३६ ॥

मधुमेह में रोगी का मूत्र मधु अर्थात् शहद के समान मीठा आता है। यह मधुमेह दो प्रकार का होता है। धातुओं के क्षय से वायु कुपित हो जाती है तो वात के लिंग मधुमेह में दीखते हैं। अथवा पित्तकफादि दोषों से जब मूत्रमार्ग घिर जाता है ॥ ३६ ॥

आवृतो दोषलिङ्गानि सोऽनिमित्तं प्रदर्शयन्।
क्षीणः क्षणात्क्षणात्पूर्णो भजते कृच्छ्रसाध्यताम् ॥ ३७ ॥

तब घिरा हुआ वह वायु (दोषलिंगानि) पित्त, कफ आदि धातुओं के अपने २चिन्हों को प्रगट करता हुआ (अनिमित्तं) अकस्मात् ही क्षण में क्षीण हो जाता है और क्षण में (पित्तादि का आवरण आते ही) पूर्ण हो जाता है। यह कष्टसाध्य होता है ॥ ३७ ॥

अथ मधुमेहशब्दप्रवृत्तौ निमित्तमाह—

मधुरं यच्च मेहेषु प्रायो मध्विव मेहति।
सर्वेऽपि मधुमेहाख्या माधुर्याच्च तनोरतः ॥ ३८ ॥

प्रमेहों में क्योंकि यह मीठा प्रमेह होता है तथा प्रायः मधु अर्थात् शहद

के समान मूत्र होता है। तथा शरीर मीठा हो जाता है इस कारण इसे मधुमेह कहते हैं ॥ ३८ ॥

प्रमेहिणो यदा मूत्रमनाविलमपिच्छिलम्।
विशदं तिक्तकटुकं तदाऽऽरोग्यं प्रचक्षते ॥ ३९ ॥

जब प्रमेह रोगी का मूत्र गंदला न हो, पिच्छिल न हो, विशद हो, कडुवा तथा चरपरा हो अर्थात् तिक्त कटुक हो तो समझो कि प्रमेह रोगी का रोग अच्छा हो गया है ॥ ३९ ॥ इति प्रमेहनिदानम्।

अथ प्रमेहपिटिकाः—प्रमेहिणां प्रजायन्ते पिटिकाः सर्वसंधिषु।
शराविका कच्छपिका जालिनी विनताऽलजी।
मसूरिका सर्षपिका पुत्रिणी च विदारिका ॥ १ ॥

प्रमेही रोगियों के सारी संन्धियों में पिटिका या फोड़े उत्पन्न हो जाते हैं। शराबिका, कच्छपिका, जालिनी, बिनता, अलजी, मसूरिका, सर्षपिका, पुत्रिणी, विदारिका ॥ १ ॥

विद्रधिश्चेति पिटिकाः प्रमेहोपेक्षया दश।
संधिमर्मसु जायन्ते मांसलेषु च धामसु ॥ २ ॥

विद्रधि ये दस पिड़िकायें प्रमेह की उपेक्षा करने से सन्धियों के मर्मस्थान में तथा मांसल स्थानों में उत्पन्न हो जाती हैं ॥ २ ॥

अथ शराविकामाह—अन्तोन्नता च तद्रूपा निम्नमध्या शराविका ॥

एक सराई या ठूठी के समान किनारों से उठी हुई और मध्य में से नीची या गहरी पिड़िका शराविका कहाती है ॥

अथ सर्षपिकामाह—गौरसर्षपसंस्थाना तत्प्रमाणा च सर्षपी ॥ ३ ॥

श्वेत सरसों के समान आकार वाली तथा उतनी ही लम्बी चौड़ी पिड़िका को सर्षपिका कहते हैं ॥ ३ ॥

अथ कच्छपिकामाह—सदाहा कूर्मसंस्थाना ज्ञेया कच्छपिका बुधैः ॥

दाह से युक्त कछुवे के समान बड़ी तथा बीच में से उभरी हुई स्थूल मांस वाली पिड़िका को कच्छपिका कहते हैं ॥

अथ जालिनीमाह—जालिनी तीव्रदाहा तु मांसजालसमावृता।
अवगाढरुजोत्क्लेदा पृष्ठे वाऽप्युदरेऽपि वा ॥ ४ ॥

जालिनी पिड़िका में तीव्रदाह होता है, तथा मांस के जाल से घिरी हुई होती हैं। अत्यन्त पीड़ा होती है तथा उत्क्लेद अर्थात् आर्द्र होती हैं। यह पीठ में या पेट में प्रायः उत्पन्न होती है ॥ ४ ॥

अथ विनतामाह—महती पिटिका नीला सा बुधैर्विनता स्मृता।

जो पिड़िका महती अर्थात् बहुत बड़ी हो और नीले रंग की हो उसे विनता कहते हैं ॥

अथ पुत्रिणीमाह—महत्यल्पचिता ज्ञेया पिटिका सा ऽपि पुत्रिणी ॥ ५ ॥

महती अर्थात् बड़ी हो तथा (अल्पचिता) छोटी २ पिड़िकायें उसके अन्दर हो उसे पुत्रिणी कहते हैं ॥ ५ ॥

अथ मसूरिकामाह—मसूरदलसंस्थाना विज्ञेया तु मसूरिका ॥

मसूर के दाने के समान आकार प्रकार वाली पिड़िका मसूरिका कहाती है ।

अथालजीमाह—रक्तासिता स्फोटवती विज्ञेया त्वलजी बुधैः ॥ ६ ॥

लाल रंग की तथा श्वेत रंग की बहुत से फोड़े वाली पिड़िका अलजी कहाती है ॥६॥

अथ विदारीमाह—विदारीकन्दवद्वृत्ता कठिना च विदारिका ॥

विदारीकन्द के समान गोल तथा कठिन पिड़िका विदारी कहाती है ।

अथ विद्रधिकामाह—विद्रधेर्लक्षणैर्युक्ता ज्ञेया विद्रधिका तु सा ॥ ७ ॥

विद्रधि के लक्षणों से युक्त पिड़िका को विद्रधि कहते हैं ॥ ७ ॥

अथ पिटिकानामारम्भकारणमाह—

ये यन्मयाः स्मृता मेहास्तेषामेतास्तु तन्मयाः ।
विना प्रमेहमप्येता जायन्ते दुष्टमेदसः ॥ ८ ॥

जो प्रमेह जिस वातादि दोष से हुए हैं उन प्रमेहों की ये पिड़िकायें भी उस २ दोष से होती हैं । कफज प्रमेहों में कफज पिड़िकायें, पित्तज प्रमेहों में पित्तज-पिड़िकायें और वातिक प्रमेहों में वातिक पिड़िकायें होती हैं ॥ ये पिड़िकायें विना प्रमेह के भी दुष्टमेदस पुरुष के हो जाती हैं ॥ ८ ॥

तावच्चैता न लक्ष्यन्ते यावद्वास्तुपरिग्रहः ।

ये पिड़िकायें तब तक नहीं दीखती जब तक कि अपने पूर्णरूप को यह प्रकाशित नहीं करतीं ॥

अथ पिडिकानामसाध्यत्वम्—

गुदे हृदि शिरस्यंसे पृष्ठे मर्मसु चोत्थिताः ।
सोपद्रवा दुर्बलाग्नेः पिटिकाः परिवर्जयेत् ॥ ९ ॥

गुदा में, हृदय में, शिर में, कंधों में, पीठ में तथा अन्य मर्मस्थानों में उत्पन्न हुई २ पिड़िकायें, यदि उपद्रवसहित हों तथा दुर्बलाग्निवाले पुरुष को हों तो ये असाध्य होती हैं ॥ ९ ॥

चरकेण पिटिकानामुपद्रवा उक्ताः—

तृट्कासमांससंकोचमोहहिक्कामदज्वराः ।
विसर्पो मर्मसंरोधः पिटिकानामुपद्रवाः ॥ १ ॥

प्यास लगना, खांसी होना, मांस का सिकुड़ जाना, मोह होना, हिचकी होना, मद तथा ज्वर होना, विसर्प होना और मर्मों का संरोध होना ये पिड़िकाओं के उपद्रव हैं ॥ १ ॥

प्रमेहनिवृत्तिलक्षणं सुश्रुतेऽपि पठितम्—

प्रमेहिणां यदा मूत्रमनाविलमपिच्छिलम् ।

विशदं कटु तिक्तं च तदाऽऽरोग्यं प्रचक्षते ॥ १ ॥

जब प्रमेह रोगियों का मूत्र गंदला न हो, पिच्छिल न हो। विशद अर्थात् स्वच्छ हो, तिक्त तथा कटु स्वादु में हो। तब समझो कि रोगी प्रमेहरोग से मुक्त होकर आरोग्य होगया है ॥ १ ॥

मेहरक्तपित्तयोर्व्यक्तिमाचष्टे वाग्भटः।

हारिद्रवर्णं रुधिरं च मूत्रं विना प्रमेहस्य तु पूर्वरूपैः।
यो मेहयेत्तं न वदेत्प्रमेहं रक्तस्य पित्तस्य स हि प्रकोपः ॥ २ ॥

यदि प्रमेह के पूर्वरूप नहीं और फिर भी हल्दी के रंग का अथवा लाल रंग का मूत्र आता हो तो उसे प्रमेह रोग नहीं समझना चाहिये। यह रक्तपित्त के कोप के कारण ही मूत्र का रंग होता है ॥ २ ॥ इति प्रमेहनिदानम् ॥

अथ प्रमेहचिकित्सा।

दश षट् चापि चत्वारः कफपित्तसमीरजाः।
साध्या याप्या असाध्यास्ते प्रमेहाः क्रमशो नृणाम् ॥ १ ॥

कफ के दस प्रमेह साध्य हैं, पित्त के छह प्रमेह याप्य हैं, वात के चार प्रमेह असाध्य हैं ॥ १ ॥

अथ कफमेहचिकित्सा—

हरीतकीकट्फलमुस्तलोध्राः पाठाविडङ्गार्जुनधन्वयासाः।
उभे हरिद्रे तगरं विडङ्गं कदम्बशालार्जुनदीप्यकाश्च ॥ १ ॥

हरीड़, कायफल, मोथा, लोध। पाठा, विडङ्ग, अर्जुन की छाल, धमासा। हल्दी, दारुहल्दी, तगर, वायविडंग। कदम्ब, साल, अर्जुन की छाल, अजवायन १

दार्वी विडङ्गं खदिरो धवश्च सुराह्वकुष्ठार्जुनचन्दनानि।
दार्व्यग्निमन्थौ त्रिफला सपाठा पाठा च मूर्वा च तथा श्वदंष्ट्रा ॥ २

दारुहल्दी, विडंग, खैर, धाऊ के पेड़ की छाल। देवदारु, कूठ, अर्जुन की छाल, तथा लाल चन्दन। दारुहल्दी, अरणी; हरड़, बहेड़ा, आंवला, पाठा। पाठा, मूर्वामूल, गोखरु ॥ २ ॥

यवान्युशीराण्यभया गुडूची जम्बूशिवाचित्रकसप्तपर्णाः।
पादैः कषायाः कफमेहिनां ते दशोपदिष्टा मधुसंप्रयुक्ताः ॥ ३ ॥

अजवायन, खस, हरड़, गिलोय। जामुन, हरड़, चीता, सतौना। इन में चौथाई श्लोक में एक २ योग जो पठा गया है। ये पृथक् २ दस कषाय शहद मिलाकर कफज प्रमेह वालों को क्रमशः पिलाने चाहियें ॥ ३ ॥

जलप्रमेहेक्षुरसप्रमेहे सान्द्रप्रमेहे च सुराप्रमेहे।
पिष्टप्रमेहेऽपि च शुक्रमेहे क्रमादमी स्युः सिकताप्रमेहे।
शीतप्रमेहे च शनैःप्रमेहे लालाप्रमेहेऽपि सुखाय तेषाम् ॥ ४ ॥

इन में से जल प्रमेह में हरीतक्यादि कषाय पिलावें, इक्षु रस प्रमेह में पाठादि कषाय पिलावें। सान्द्र प्रमेह में हरिद्रादिकषाय पिलावें। सुराप्रमेह में ऊपर लिखा हुआ कदम्बादि कषाय पिलावें। पिष्टप्रमेह में दार्व्यादिकषाय पिलावें। शुक्रप्रमेह में सुराह्वादि अर्थात् देवदार्वादि कषाय पिलावें। सिकता प्रमेह में दार्व्यादिकषाय पिलावें। शीत प्रमेह में पाठादिकषाय पिलावें। शनैः प्रमेह में यवान्यादि कषाय पिलावें। लाला प्रमेह में गुडूच्यादि कषाय देने से लाभ होता है ॥ ४ ॥
इति कदम्बात्।

अथ सुश्रुतात्—तत्रोदकमेहिनां पारिजातकषायं पाययेत्।
इक्षुमेहिनां निम्बकषायम्। सान्द्रमेहिनां सप्तपर्णकषायम्।
सुरामेहिनां शाल्मलीकषायम्। पिष्टमेहिनां द्विहरिद्राकषायम्।
शुक्रमेहिनां दूर्वाशैवलप्लवकरञ्जकसेरु-
कषायम्, ककुभचन्दनकषायं वा।
सिकतामेहिनां निम्बकषायम्।
शीतमेहिनां पाठागोक्षुरकषायम्।
शनैर्मेहिनां त्रिफलागुडूचीकषायम्।
लालामेहिनां त्रिफलारग्वधकषायं पाययेत् ॥ १ ॥

उदकमेह वालों को पारिजात अर्थात् पारिभद्र वृक्ष की छाल, (इसे बंगला में पालते मान्दार कहते हैं) का क्वाथ पिलावे। इक्षु प्रमेह वालों को निम्ब का क्वाथ पिलावें। सान्द्र मेह वालों को सतौने की छाल का क्वाथ पिलावें। सुरामेह वालों को सीमल की छाल वा मूल का क्वाथ पिलावे। पिष्टमेह वालों को हल्दी और दारुहल्दी का क्वाथ पिलावें। शुक्रमेह वालों को दूब, शैवाल अर्थात् काई, केवटी मोथा, करंज और कसेरु इन को समभाग लेकर क्वाथ करके पिलावें। अथवा अर्जुन की छाल और लालचन्दन का क्वाथ पिलावें। सिकता मेह वालों को नीम का क्वाथ पिलावें। शीत मेह वालों को पाठा तथा गोखरु का क्वाथ पिलावें। शनैः मेह वालों को त्रिफला गुडूची का क्वाथ पिलावें। लाला मेह वालों को त्रिफला तथा अम्लतास का क्वाथ पिलावें ॥ १ ॥ इति कफमेहचिकित्सा ॥

अथ पित्तमेहचिकित्सा—

उशीरलोध्रासुरचन्दनानामुशीरमुस्तामलकाभयानाम्।
पटोलनिम्बामलकामृतानां मुस्ताभयामुष्ककवृक्षकाणाम् ॥ १ ॥

माञ्जिष्ट प्रमेह में खस, लोध, देवदारु, चन्दनलाल इनको समभाग लेकर कषाय करके पिलावें। हारिद्र प्रमेह में खस, मोथा, आमला तथा हरड़ इनको समभाग ले क्वाथ कर पिलावे। नीलमेह में पटोलपत्र, नीम, आंवला तथा गिलोय का क्वाथ पिलावे। क्षारमेह में मोथा, हरड़, मोखा तथा (वृक्षकः श्वेतकुटजवृक्षे,

नन्दिवृक्षे तुनगाछ) श्वेत कुड़े की छाल या नन्दी वृक्ष की छाल इनको समभाग लेकर क्वाथ करके पिलावें ॥ १ ॥

लोध्राम्बुकालीयकधातकीनां विश्वार्जुनानां मिशिसोत्पलानाम्।
माञ्जिष्ठहारिद्रकनीलक्षारउष्णाख्यरक्ते क्रमशः कषायाः ॥ २ ॥

उष्णमेह में लोध, सुगन्धबाला, कालाचन्दन, धाय के फूल इन सबको समभाग लेकर विधिपूर्वक क्वाथ करके पिलावे। रक्तमेह में सोंठ, अर्जुन की छाल, सौंफ, नीला कमल इनको समभाग लेकर क्वाथ करके पिलावें। इन से पित्तज प्रमेहों में लाभ होता है ॥ २ ॥

अथ सुश्रुतात्—माञ्जिष्ठमेहिनां मञ्जिष्ठाचन्दनकषायं पाययेत्।
हारिद्रमेहिनां राजवृक्षकषायम्।
नीलमेहिनां सालसारादिकषायमश्वत्थकषायं वा।
क्षारमेहिनां त्रिफलाकषायम्।
कालमेहिनां न्यग्रोधादिकषायम्।
शोणितमेहिनां गुडूचीतिन्दुकास्थि-
काश्मर्यखर्जूरकषायं मधुमिश्रं पाययेत्।

माञ्जिष्ट प्रमेह वालों को मञ्जीठ और चन्दन समभाग लेकर क्वाथ करके पिलावे। हारिद्र मेह वालों को अम्लतास का क्वाथ पिलावे। नील मेह वालों को सालसारादि गण का क्वाथ पिलावे अथवा पीपल वृक्ष की छाल का क्वाथ पिलावे। क्षार मेह वालों को त्रिफला का क्वाथ पिलावे। काल मेह वालों को न्यग्रोधादिगण का क्वाथ पिलावे। रक्त मेह वालों को गिलोय, तिन्दुक के फल की गुठली, गंभारी तथा खजूर को समभाग लेकर क्वाथ करके शहद मिलाकर पिलावे। इति पित्तमेह चिकित्सा।

अथ वातमेहचिकित्सा—अग्निमन्थकषायं तु वसामेहे प्रयोजयेत्।
पाठाशिरीषदुःस्पर्शमूर्वाकिंशुकतिन्दुकैः ॥ १ ॥

अरणी के क्वाथ को वसामेह में पिलावे ॥ हस्तिप्रमेह में पाठा, शिरीष की छाल, दुरालभा या जवासा, मूर्वामूल, केसु के फूल तथा तिन्दुक का फल ॥१॥

कपित्थेन भिषक्कुर्यात्क्काथं हस्तिप्रमेहके।
पूगारिमेदयोः क्काथः सक्षौद्रः क्षौद्रमेहिनाम् ॥ २ ॥

कैथ का फल इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर क्वाथ कर के पिलावे तो हस्तिमेह में लाभ होता है ॥ क्षौद्रमेहवालों को सुपारी और अरिमेद अर्थात् विट्खदिर का क्वाथ कर के शहद मिलाकर पिलाना चाहिये ॥ २ ॥

छिन्नावह्निकषायेण पाठाकुटजरामठम्।
तिक्ता कुष्ठं च संचूर्ण्य सर्पिर्मेहे पिबेन्नरः ॥ ३ ॥

सर्पिर्मेह में गिलोय तथा चीते को समभाग लेकर क्वाथ करे । इस क्वाथ के साथ पाठा, कुड़े की छाल, हींग, कुटकी तथा कूठ इन को समभाग लेकर चूर्ण कर के पीने को देवे ॥ ३ ॥

अथ सुश्रुतात्—अत ऊर्ध्वमसाध्यत्वेपि योगान्यापनार्थं वक्ष्यामः ।

तद्यथा—वसामेहिनामग्निमन्थकषायं शिंशपाकषायं वा ।
सर्पिर्मेहिनां कुष्ठकुटजपाठाहिङ्गुकटुरोहिणी-
कल्कं गुडूचीचित्रकषायेण पाययेत् ।
क्षौद्रमेहिनां खदिरकदरक्रमुककषायम् ।
हस्तिमेहिनां तिन्दुककपित्थशिरीषपलाश-
पाठामूर्वादुःस्पर्शकषायं मधुमिश्रम् ।
हस्त्यश्वशूकरखरोष्ट्रास्थिक्षारं चेति ।

इस के आगे असाध्य वातिक प्रमेहों के लिये भी उपाय लिखे जाते हैं । जैसेः—वसामेह वालों को अरणी का क्वाथ वा शीशम का क्वाथ पिलाना चाहिये । सर्पिर्मेहवालों को गिलोय तथा चीते के क्वाथ में, कूठ, कुड़े की छाल, पाठा, हींग, तथा कुटकी इन सब को समभाग लेकर चूर्ण कर के मिलाकर दोनों को एकत्र पिलावे ॥ क्षौद्रमेहवालों को खैर, (कदरः श्वेताखदिरे बब्बूले) श्वेतखैर या बबूल की छाल तथा सुपारी इन तीनों को समभाग लेकर क्वाथ कर के पिलावें । हस्तिमेहवालों को तेन्दु का फल, कैथ का फल, शिरीष की छाल, पलाश की छाल, पाठा, मूर्वामूल, जवासा इन सब को समभाग लेकर क्वाथ कर के शहद मिलाकर पिलावें । तथा हाथी, घोड़ा, सूअर, गधा, ऊंट इन सब की हड्डियों का क्षार बनाकर पिलावें ॥ इति वातप्रमेहचिकित्सा ॥

अथ द्वंद्वजप्रमेहचिकित्सा ।

कम्पिल्लसप्तच्छदशालजानि विभीतरोहीतककौटजानि ।
पुष्पाणि दध्नश्च विचूर्णितानि क्षौद्रेण लिह्यात्कफपित्तमेहे ॥ १ ॥

कमीला, सतौना, साल, बहेड़ा, रोहेड़ा और कुटज इन सब के फूलों का चूर्ण दही से मिलाकर शहद डालकर खाया जाये तो कफ पित्त के प्रमेह नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

हरीतकीकट्फलमुस्तलोध्रकुचन्दनोशीरकृतः कषायः ।
क्षौद्रेण युक्तः कफवातमेहं निहन्ति पीतारजसा च पीतः ॥ २ ॥

हरड़, कायफल की छाल, मोथा, लोध, पत्तङ्ग की लकड़ी, खस इन को समभाग लेकर क्वाथ करे । इस क्वाथ में शहद मिलाकर हल्दी के चूर्ण के साथ पिलाया जाये तो कफवात के प्रमेह नष्ट होते हैं ॥ २ ॥

विडङ्गरजनीद्वंद्वखदिरोशीरपूगजः ।

काथः पीतः प्रगे हन्ति मेहं पित्तानिलोद्भवम् ॥ ३ ॥

विडंग, हल्दी, दारुहल्दी, खैर, खस तथा सुपारी इन सब को समभाग लेकर क्वाथ करे। इस क्वाथ को प्रातःकाल पीने से वात पैत्तिक प्रमेह नष्ट होते हैं ॥ ३ ॥

काथः खर्जूरकाश्मर्यतिन्दुकास्थ्यमृताकृतः
सुहिमः पीतमात्रस्तु सक्षौद्रो रक्तमेहहा ॥ ४ ॥

खजूर, गंभारी के फूल, तिन्दुक के फल की गुठली, और गिलोय इन सब का क्वाथ कर के खूब ठण्डा कर के शहद मिलाकर प्रातःकाल पिलाने से रक्तमेह नष्ट होता है ॥ ४ ॥

अथ सामान्यप्रमेहचिकित्सा।

अथ फलत्रिकादिः काथः—

फलत्रिकं दारुनिशाविशालामुस्तं च निष्काथ्य निशांशकल्कम्।
पिबेत्कषायं मधुसंप्रयुक्तं सर्वप्रमेहेषु चिरोत्थितेषु ॥ १ ॥

हरड़, बहेड़ा, आंवला, दारुहल्दी, इन्द्रायण की जड़, मोथा इन सब को सममाग लेकर क्वाथ करे। इस क्वाथ में शहद मिलावे। इसे हल्दी के कल्क के साथ पीवे तो पुराने सभी प्रमेह इस से नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथ विडङ्गादिक्वाथः—विडङ्गरजनीयष्टीनागरागोक्षुरैः कृतः।
कषायो मधुना हन्ति प्रमेहान्दुस्तरानपि ॥१॥

वायविडंग, हल्दी, मुलठ्ठी, सोंठ, गोखरू इन सब को समभाग लेकर क्वाथ करे। शीतल होने पर मधु मिलाकर पिलावें तो इस से भयंकर प्रमेह भी नष्ट हो जाते हैं ॥ १ ॥

अथ पलाशपुष्पाणां क्वाथः—पलाशतरुपुष्पाणां काथः शर्करया युतः।
निषेवितः प्रमेहाणि हन्ति नानाविधान्यपि ॥ १ ॥

ढाक के फूलों का क्वाथ खांड मिलाकर पिलाने से नाना प्रकार के प्रमेहों को नष्ट करता है ॥ १ ॥

अथ वृन्दात्रिफलादिक्वाथः—त्रिफलादारुदार्व्यब्दकाथः क्षौद्रेण मेहहा।
कुटजासनदार्व्यब्दफलत्रयभवोऽथवा ॥१॥

हरड़, बहेड़ा, आंवला, देवदार, दारुहल्दी और मोथा इन सब का क्वाथ शीतल कर के शहद मिलाकर पिलाने से प्रमेह नष्ट होते हैं ॥ अथवा कुटज, असन, दारुहल्दी, मोथा, हरड़, बहेड़ा, आंवला इन सब का क्वाथ शीतल करके शहद मिलाकर पिलाने से प्रमेह नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथ वृन्दाद्गुडूच्यादि—गुडूच्याः स्वरसः पेयो मधुना सर्वमेहजित्।
निशाकल्कयुतो धात्रीरसो वा माक्षिकान्वितः ॥१॥

गिलोय का स्वरस शहद से मिलाकर पिलाने से सभी प्रकार के प्रमेह नष्ट होते हैं । हल्दी को आंवले के स्वरस से मिलाकर पिलावें अथवा आंवले के स्वरस में शहद डाल कर पिलावें तो भी सभी प्रमह नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथ भूधात्र्यादिः—भूधात्री च त्रिगद्याणं मरीचानां च विंशतिः ।
असाध्यान्साधयेन्मेहान्सप्तरात्रान्न संशयः ॥ १ ॥

भुंई आंवले (गद्याणः षट्माषिके, कालिंगपरिभाषा) का स्वरस १८ माषा, कालीमिरच २० संख्या दोनों को मिलाकर पिलाने से, असाध्य प्रमेहों को भी सात रात में यह योग आराम कर देता है ॥ १ ॥

अथ कतकबीजयोगः—

कर्षप्रमाणं कतकस्य बीजं तक्रेण पिष्ट्वा सह माक्षिकेण ।
प्रमेहजालं विनिहन्ति सद्यो रामो यथा रावणमाहवे तु ॥ १ ॥

निर्मली के बीजों का चूर्ण एक कर्ष लेकर छाछ में पीसकर शहद मिलाकर खावे । यह प्रमेह जाल को इस प्रकार शीघ्र काटता है जैसे युद्धभूमि में राम ने रावण को मारा था ॥ १ ॥

अथाऽऽकुल्यादियोगः—आकुलीमुकुलं धात्री हरिद्रा मधुना लिहेत् ।
विंशतिं च प्रमेहाणां हन्ति सत्यं न संशयः ॥ १ ॥

आकुली की कलियां आवल नाम की बनस्पति की कली, अथवा (आकुला—तत्तैरपक्व-गोधूमैराकुलापरिकीर्त्तिता । आकुला मुखो वृष्या मधुरा बलकारिणः ॥ कच्चे गेहूओं को भून ले उसे आकुला कहते हैं । मुकुल, पिस्ते को भी कहते हैं), आंवला तथा हल्दी इन को सम भाग लेकर चूर्ण कर के शहद से मिलाकर खावें तो बीसों प्रकार के प्रमेहों को नष्ट करता है इस में कुछ संशय नहीं, यह सत्य समझो ॥ १ ॥

अथ निशात्रिफलायोगः—द्विनिशात्रिफलायुक्तं रात्रौ पर्युषितं जलम् ।
प्रभाते मधुना पीतं मेहमूलं निकृन्तति ॥ १ ॥

हल्दी, दारुहल्दी, हरड़, बहेड़ा, आंवला इन सब को समभाग लेकर रात को जल में भिगो देवे । इस में शहद मिलाकर प्रातःकाल पिलावें तो यह प्रमेह को जड़ मूल से नष्ट करता है ॥ १ ॥

अथ त्रिफलाकल्कः—सजलं त्रिफलाकल्कमातपे धारयेत्त्र्यहम् ।
तद्भाण्डे दोलिकायन्त्रे चणकान्मुष्टिमात्रकान् ॥१॥

त्रिफला के कल्क में पानी घोलकर तीन दिन रात एक पात्र में डालकर धूप में पड़ा रहने देवें । फिर एक मुष्टि भर चने लेकर एक कपड़े में बांधकर उस त्रिफला के पानी में दोलायन्त्र के समान लटका देवे ॥ १ ॥

अहोरात्रोषितान्खादेद्वर्धमानं दिने दिने ।
असाध्यं साधयेन्मेहं सिद्धयोग उदाहृतः ॥ १॥

इस प्रकार एक दिन रात उस रस में चनों को भिगोकर निकाल लेवे। इन चनों को क्रमशः बढ़ाकर नित्य खावे। यह असाध्य प्रमेहों को भी साध्य बनाने वाला सिद्धयोग कहाता है ॥ १ ॥

अथ सालमुस्तयोगः—सालमुस्तककम्पिल्लकल्कमक्षसमं पिबेत्।
धात्रीरसेन सक्षौद्रं सर्वमेहहरं परम् ॥ १ ॥

साल की छाल, नागरमोथा, कमीला इनको समभाग लेकर एक अक्षभर ले, इसे आंवले के स्वरस में शहद मिलाकर पिलावे तो यह सर्व प्रमेहों को नाश करने में श्रेष्ठ है ॥ १ ॥

अथ त्रिफलादिचूर्णम्—मधुना त्रिफलाचूर्णमथ वाऽश्मजतूद्भवम्।
लोहजं वाऽभयोत्थं वा लिह्यान्मेहनिवृत्तये ॥ १ ॥

त्रिफला का चूर्ण शहद से मिलाकर खिलावें, अथवा शिलाजीत का चूर्ण शहद से मिलाकर खिलाने से, अथवा लौहभस्म शहद से मिलाकर खिलाने से अथवा हरड़ का चूर्ण शहद से मिलाकर खिलाने से प्रमेह रोग की निवृत्ति होती है ॥ १ ॥

अथ न्यग्रोधादिचूर्णम्—न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थस्योनाकारग्वधासनम्।
आम्रं कपित्थं जम्बूश्च प्रियालं ककुभं धवम् ॥१॥

बड़ की छाल, गूलर की छाल, पीपल की छाल, श्योणाक की छाल, अम्लतास की छाल, असने की छाल, आम की छाल, कैथ की छाल, जामुन की छाल, पियाल की छाल, अर्जुन की छाल, धाऊ की छाल ॥ १ ॥

मधूकं मधुकं लोध्रं वरुणं पारिभद्रकम्।
पटोलं मेषशृङ्गी च दन्ती चित्रकपाटली ॥ २ ॥

महुए की छाल, मुलहठी, लोध, वरने की छाल, पारिभद्र की छाल, परवल या पटोलपत्र, मेढासिंगी, दन्ती, चीता, पाटली या पाढ़ ॥ २ ॥

करञ्जं त्रिफला शक्रभल्लातकफलानि च।
एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ ३ ॥

करंजवा, हरड़, बहेड़ा, आंवला, इन्द्रजौ तथा भिलांवां इनके फल ले। इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेवें। इन सबको मिलाकर सूक्ष्म चूर्ण करलें ॥ ३ ॥

न्यग्रोधाद्यमिदं चूर्णं मधुना सह लेहयेत्।
फलत्रयरसं चानु पिबेन्मूत्रं विशुध्यति ॥ ४ ॥

इस न्यग्रोधाद्य चूर्ण को शहद से मिलाकर चाटे और त्रिफला का रस अनुपान में पीवे तो मूत्र शुद्ध हो जाता है ॥ ४ ॥

एतेन विंशतिर्मेहा मूत्रकृच्छ्राणि यानि च।
वेगेन प्रशमं यान्ति पिटिका न च जायते ॥ ५ ॥

इससे बीसों प्रकार के प्रमेह तथा मूत्रकृच्छ्र रोग वेग से शान्त हो जाते हैं और फिर पिड़िकायें उत्पन्न नहीं होतीं ॥ ५ ॥

अथ कर्कटीबीजादि—कर्कटीबीजसिन्धूत्थत्रिफलासमभागिकम्।
पीतमुष्णाम्भसा चूर्णं मूत्ररोधं निवारयेत् ॥ १ ॥

ककड़ी के बीज, सेंधानमक, हरड़, बहेड़ा, आंवला इनमें से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर चूर्ण करके गरम जल से पीवें तो मूत्र की रुकावट नष्ट होती है १

अथ गोक्षुरादिगुटी—त्रिकटुत्रिफलातुल्यं गुग्गुलुं च समांशकम्।
गोक्षुरक्वाथसंयुक्तां गुटिकां कारयेद्बुधः ॥ १ ॥

सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला इन में से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ भाग लेवे। शुद्ध गूगल सारे चूर्ण के समभाग लेवे। दोनों को गोखरु के क्वाथ में घाटकर गोली बनावे ॥ १ ॥

देशकालबलापेक्षीभक्षयेच्चानुलोमिकाम्।
न चात्र परिहारोऽस्ति कर्म कुर्याद्यथेप्सितम् ॥ २ ॥

इस की मात्रा देश, काल तथा बल की अपेक्षा से निश्चित करे। इस के सेवन करते समय कोई विशेष पदार्थ वर्जित नहीं, अपनी इच्छानुसार खाना, पीना तथा कर्म करे ॥ २ ॥

प्रमेहान्वातरोगांश्च वातशोणितमेव च।
मूत्राघातं मूत्रदोषं प्रदरं चानु नाशयेत् ॥ ३ ॥

इस के सेवन से सभी प्रकार के प्रमेह, वातरोग तथा वातशोणितरोग, मूत्राघात, मूत्रदोष तथा प्रदर ये सब ही नष्ट हो जाते हैं ॥ ३ ॥ इति गोक्षुर गुग्गुलुवटी ॥

अथ चन्द्रप्रभागुटी योगरत्नावल्याः—

वेल्लव्योषफलात्रिकं त्रिलवणं द्विक्षारचव्यानल-
श्यामापिप्पलिमूलमुस्तकसटीमाक्षीकधातुत्वचः।
षड्ग्रन्थामरदारुवारणकणाभूनिम्बदन्तीनिशा-
पत्रैलातिविषाः पिचुप्रतिमिता लोहस्य कर्षाष्टकम् ॥१॥

वायविडंग, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, सेंधानमक, सौंचल नमक, विड्लवण, यवक्षार, सज्जीक्षार, चव्य, चीता, त्रिबी, पिप्पलीमूल, मोथा, कचूर, स्वर्णमाक्षिकभस्म, दारचीनी, बच, देवदार, गजपीपल, चिरायता, दन्तीमूल हल्दी, तेजपत्र, इलायची, अतीस इन में से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण पिचु अर्थात् दे २ तोले ले। लोहभस्म आठ कर्ष लेवे ॥ १ ॥

त्वक्क्षीरी पलिका पुराद्दश पलान्यष्टौ शिलाजन्मनो
मानात्कर्षसमा कृतेति गुटिका संयोज्य सर्वं भिषक्।

तत्रैव प्रतिवासरं सह घृतक्षौद्रेण लिह्यादिमां
तक्रं मस्तु च गोघृतं मधुरसं पश्चात्पिबेन्मात्रया ॥ २ ॥

वंशलोचन, एक पल ले, शुद्ध गूगल दस पल ले, शुद्ध शिलाजीत आठ पल ले। सब द्रव्यों को एकत्र मिलाकर खरल करे और एक कर्ष की गोली बना लेवे। (इस की मात्रा अन्य ग्रन्थों में बेर की गुठली जितनी बनानी लिखी है। कोई २ वैद्य इस में पारद गन्धक की कज्जली भी एक पल डालते हैं) इसे घी और शहद में मिलाकर प्रतिदिन खावे। और अपने योग्य मात्रानुसार तक्र, दही का पानी, गौ का घी, मधु और मांस के रस का अनुपान पीवे ॥ २ ॥

अर्शांसि प्रदरं ज्वरं च विषमं नाडीव्रणानश्मरी-
कृच्छ्रं विद्रधिमग्निमान्द्यमुदरं पाण्ड्वामयं कामलाम्।
यक्ष्माणं सभगंदरं सपिटिकां गुल्मप्रमेहारुची-
रेतोदोषमुरःक्षतं कफमरुत्पित्तार्तिमुग्रां जयेत् ॥ ३ ॥

इस के सेवन से सब प्रकार के अर्श, प्रदर, विषमज्वर, नाडीव्रण, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, विद्रधि, अग्निमान्द्य, उदररोग, पाण्डुरोग, कामलारोग, राजयक्ष्मा, भगन्दर, प्रमेहपिटिका तथा भगन्दर की पिडिका, गुल्म, प्रमेह, अरुचि, रेतोदोष अर्थात् वीर्य के दोष, उरःक्षत, तथा भयंकर कफरोग, पित्तरोग तथा वातरोग नष्ट होते हैं ॥ ३ ॥

वृद्धं संजनयेद्युवानमसमोजस्कं बलं वर्धये-
देतस्यां न निषिद्धमन्नमसकृन्नाध्वागमो मैथुनम्।
विख्याता गुटिकेयमश्चिततरा चन्द्रप्रभा नामतः
सान्द्रानन्दकरी तनोति च रुचिं चन्द्रेण तुल्यां तनौ ॥ ४ ॥

बूढे को जवान करती है और उस के ओज को युवा के समान करती है, बल बढ़ाती है। इस के सेवन करने के समय न तो अन्नादि का निषेध है, न मार्ग चलने का निषेध है, न मैथुन करने का निषेध है। यह अति आनन्द देनेवाली, चन्द्र के समान शरीर को सुन्दर करनेवाली चन्द्रप्रभा नाम की गोली है ॥ ४ ॥ इति चन्द्रप्रभागुटी ॥

अथ योगरत्नावल्याः पूगपाकः—

हेमाम्भोधरचन्दनं त्रिकटुकं धात्री प्रियालाः कटु-
र्लज्जालुस्त्रिसुगन्धजीरकयुगं शृङ्गाटकं वंशजम्।
जातीकोशलवंगधान्यबहुलाः प्रत्येकमक्षोन्मिताः
पूगस्याष्टपलं विचूर्ण्य च पयःप्रस्थत्रये संपचेत् ॥ १ ॥

(हेम) नागकेसर, मोथा, चन्दन, सोंठ, मिरच, पीपल, आंवला, पियाल की गिरी, कुटज की छाल, लाजवन्ती, दारचीनी, तेजपात, इलायची, जीराश्वेत, कालाजीरा, सिंघाड़ा, वंशलोचन, जायफल, जावित्री, लौंग, धनियां, बड़ी इलायची इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ अक्ष लें। दक्षिणी सुपारी का चूर्ण आठ पल लें। दूध तीन प्रस्थ लें। पहले दूध में सुपारी का चूर्ण डालकर पकावें। जब खोआ बन जावे ॥ १ ॥

गोसर्पिः कुडवं सितार्धकतुलाधात्रीवरी द्व्यञ्जली
मन्दाग्नौ विपचेद्भिषक्शुभदिने सुस्निग्धभाण्डे क्षिपेत्।
तं खादेत्तु यथाग्नि वासरमुखे मेहांश्च जीर्णज्वरं
पित्तं साम्लमसृक्स्रुतिं च गुदजान्वक्त्राक्षिनासासु च ॥ २ ॥

तब गौ का घी एक कुडव डालकर उस खोये को भून लें। फिर खांड ५० पल डालें। और आंवला का चूर्ण दो कुडव तथा शतावर का चूर्ण दो कुडव डाले। तथा पूर्वलिखित नागकेसरादि का चूर्ण भी डाल दे। सब को एकत्र मिलाकर मन्द २ अग्नि पर थोड़ी देर पकाकर उतार लेवे। फिर उसे निकाल कर सुस्निग्ध पात्र में रखे। इस को प्रातःकाल अग्निबल के अनुसार खावे तो सब प्रकार के प्रमेह, जीर्णज्वर, अम्लपित्त, रक्तस्राव, बवासीर, मुंह, आंख तथा नाक के रोगों को ॥ २ ॥

मन्दाग्निं च विजित्य पुष्टिमतुलां कुर्याच्च शुक्रप्रदो
योगो गर्भकरः परं गदहरः स्त्रीणामसृग्दोषजित् ॥ ३ ॥

तथा मन्दाग्नि को यह पूगपाक नष्ट करता है। तथा अतुल पुष्टि को देता है। वीर्यप्रद है। यह योग निश्चित ही गर्भ करनेवाला है, स्त्रियों के रोगों को नष्ट करता है तथा स्त्रियों के रक्तसंबंधी दोषों को दूर करता है ॥ ३ ॥

अथाश्वगन्धापाकः—

पलान्यष्टावश्वगन्धां विपाच्य गोदुग्धे षट्शेरके मन्दवह्नौ।
दर्वीलेपो यावदास्ते सुपक्वश्चातुर्जातं क्षिप्य कर्षप्रमाणम् ॥ १ ॥

गौ का दूध छह सेर (शरक का अर्थ यहां पर एक शराव है) अर्थात् दूध तीन प्रस्थ ले। असगंध का चूर्ण ८ पल ले। दोनों को मिलाकर मन्द २ अग्नि पर पकावे। जब कड़छी को लगने लगे तब उसमें दारचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर इन सबको समभाग लेकर मिलित एक कर्ष चूर्ण डाले ॥ १ ॥

जातीजातं केशरं वंशसत्त्वं मोचं मांसी चन्दनं कृष्णसारम्।
पत्रीकृष्णापिप्पलीमूलदेवपुष्पं कङ्कोलालिकाक्षोटसारम् ॥ २ ॥

जायफल, नागकेसर असली, वंशलोचन, मोचरस, जटामांसी, चन्दन, (कृष्णसारं–शिंशिपावृक्षे, खदिरवृक्षे, वृक्षविशेषे, आबनूस) आबनूस या खैर

का सार अर्थात् कत्था । (पत्री—शाल्वृक्षे, दुरालभा, खदिरे, जातिपत्री, महा-तेजपत्रे) जावित्री, पीपली, पिप्पलामूल, लौंग, कंकोल, (अलिका पाटल्याम्) पाटला या पाढ की छाल, अखरोट के फल का गूदा ॥ २ ॥

भल्लीबीजं शृङ्गटं गोक्षुराख्यं सिन्दूराभ्रं नागवङ्गं च लोहम्।
कर्षार्धार्धं सर्वचूर्णं प्रकल्प्य संशोध्याथो शर्करापकपाके ॥ ३ ॥

भिलावे के बीज शुद्ध किये हुए, सिंघाड़ा, गोखरु, सिन्दूररस, अभ्रकभस्म, नागभस्म, बंगभस्म, लौहभस्म, इन में से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण चौथाई २ कर्ष लेकर (खांड ५० पल की चाशनी बना कर उसमें सभी चूर्ण मिला लेवे) ॥ ३ ॥

पक्त्वा शीतं कारयेदश्वगन्धापाकोऽयं वै हन्ति मेहानशेषान् ।
ज्वरं जीर्णं शोषगुल्मान्विकारान्पैत्तान्वाताञ्शुक्रवृद्धिं करोति॥४॥

इसे पकाकर शीतल करके शीतल करके एक स्निग्ध पात्र में रखें । इस असगन्ध पाक को सेवन करने से सभी प्रमेह नष्ट होते हैं । पुराना ज्वर, शोष, गुल्म वात तथा पित्त के रोग इन सबको यह नष्ट करता है तथा वीर्य्य की वृद्धि करता है ॥ ४ ॥

पुष्टिं दद्यादग्निसंदीपनोऽयं कान्तिं कुर्यात्सौमनस्यं नराणाम् ॥५॥

पुष्टि देता है, अग्नि को सन्दीपन करता है, कान्ति बढ़ाता है तथा रुचि बढ़ाता है ॥ ५ ॥

अथ सालमपाकः—**क्षीरे द्रोणयुते ससालकुडवं मन्दाग्निना पाचितं**
यावत्पाकमुपाव्रजेत्परहितं प्रस्थं गुडं निक्षिपेत् ।
चातुर्जातलवङ्गजातिफलकैर्मुस्तातुगाधान्यकैः
शुण्ठीमागधिकोषणाश्वमभयालौहैश्च मिश्रीकृतम् ॥१॥

एक द्रोण गौ के दूध में सालमामिश्री का चूर्ण एक कुड़व डालकर मन्दाग्नि से पकावें । फिर पकने पर एक प्रस्थ गुड उस में डाल देवे । और दारचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, लौंग, जायफल, मोथा, वंशलोचन, धनियां, सोंठ, पिप्पली, कालीमिरच, असगन्ध, हरड़, लौहभस्म इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर (एक २ कर्ष प्रत्येक लेवे) उसी पाक में डाल देवे । इन सब को ऐकत्र करके स्निग्धपात्र में रखे ॥ १ ॥

हृद्रोगक्षयशोषमारुतगदान् हिक्कास्वसृक्शोषणे
विंशन्मेहशिरोविकारशमनो रोगानशेषाञ्जयेत् ॥ २ ॥

इसे सेवन करने से यह हृद्रोग, क्षय, शोष, वात के रोग, हिचकी, खून का सूख जाना, बीसों प्रकार के प्रमेहों को तथा सिर के विकारों को और सभी रोगों को शान्त करता है ॥ २ ॥

अथ द्राक्षापाकः—द्राक्षादुग्धसितापृथक्परिमिता प्रस्थेन संपाचिता
युक्त्या वैद्यवरेण चूर्णमधुना देयं पलार्धं पृथक्।
चातुर्जातकटुत्रयं मृगमदं लोहाभ्रकं केशरं
पत्री जातिफलं मृगाङ्करजतं कुस्तुम्बुरी चन्दनम् ॥१॥

पहले एक प्रस्थ दाखों में दूध को डालकर पकावे और एक प्रस्थ खांड भी उसी में मिला देवे। फिर गाढ़ा २ पाक हो जाने पर दारचीनी, इलायची, नागकेसर, तेजपात, सोंठ, मिरच, पीपल, कस्तूरी, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, नागकेसर या कश्मीरी केसर, जावित्री, जायफल, कपूर, चांदीभस्म, धनियां तथा चन्दन ॥ १ ॥

सम्यग्जातरसं प्रभातसमये सेव्यं द्विकर्षोन्मितं
स्निग्धं शुक्रकरं प्रमेहशमनं पित्तामयध्वंसनम्।
मूत्राघातविबन्धकृच्छ्रशमनं रक्तार्तिनेत्रार्तिहृ-
त्पादे पाणितले विदाहशमनं सौख्यप्रदं प्राणिनाम् ॥ २ ॥

इन में से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण आधा २ पल लेकर मिलावें। इसको एकत्रित करके चिकने पात्रमें रखें।इसे प्रातःकाल दो कर्ष भर लेकर सेवन करें। यह स्निग्ध है, वीर्यवर्धक है,प्रमेहों को नष्ट करता है पित्तरोगों को नष्ट करता है।मूत्राघात,मूत्रविबन्ध, मूत्रकृच्छ्र इनको शान्त करता है। खून की कमी आदि तथा रक्तस्रावादि रक्तज पीड़ाओं को दूर करता है, नेत्र रोगों को दूर करता है। हाथ पैरों के तलवों की दाह को शान्त करता है तथा प्राणियों को सुख देता है ॥ २ ॥ इति पाकाः।

अथाऽऽसवघृततैलादि

अथ लोध्रासवः—

लोध्रं शटीं पुष्करमूलमेलां मूर्वां विडङ्गं त्रिफलां यवानीम्।
चव्यं प्रियङ्गुं क्रमुकं विशालां किराततिक्तं कटुरोहिणीं च ॥ १ ॥

लोध, कचूर, पोहकरमूल, इलायची, मूर्वा, वायविडंग, हरड़, बहेड़ा, आंवला अजवायन, चव्य, प्रियंगु, सुपारी, इन्द्रायण की जड़, चिरायता कुटकी ॥ १ ॥

भार्ङ्गीं नतं चित्रकपिप्पलीनां मूलं सकुष्ठातिविषां सपाठाम्।
कलिङ्गकान् केसरमिन्द्रसाह्वं नखं सपत्रं मरिचं प्लवं च ॥ २ ॥

भार्गी, तगर, चीता की जड़, पिप्पलीमूल, कूठ, अतीस, पाठा, कुटज की छाल, नागकेसर, इन्द्रजौ, नखीद्रव्य, तेजपत्र, मिरच, कैवटीमोथा ॥ २ ॥

द्रोणेऽम्भसः कर्षसमानि पक्त्वा पूते चतुर्भागजलावशेषे।
रसेऽर्धभागं मधुनः प्रदाय पक्षं विधेयो घृतभाजनस्थः ॥ ३ ॥

इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ कर्ष लेकर सबको एक द्रोण जल में डालकर पकावे। जब चौथाई भाग जल शेष रह जावे तो छान लेवे। तब सारे रस से आधा भाग शहद मिलादो, और एक चिकने मटके में एक पखवाड़े तक अर्थात् १५ दिन तक बन्द करके पड़ा रहने दो ॥ ३ ॥

लोध्रासवोऽयं कफपित्तमेहान्क्षिप्रं निहन्याद्धि पलप्रयोगात्।
पाण्ड्वामयार्शांस्यरुचिं ग्रहण्या दोषं किलासं विविधं च कुष्ठम् ॥४॥

इस लोध्रासव को एक पल पीने से कफ तथा पित्त के प्रमेह शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं। पाण्डुरोग, बवासीरें, अरुचि, ग्रहणी के दोष, किलास कुष्ठ तथा अन्य विविध कुष्ठ अच्छे होते हैं ॥ ४ ॥ इति लोध्रासवः।

अथ सिंहामृतघृतम्— कण्टकार्या गुडूच्याश्च संहरेच्च शतं शतम्।
संकुट्योलूखले विद्वांश्चतुर्द्रोणेऽम्भसः पचेत् ॥ १ ॥

छोटी कटेली एक सौ पल, गिलोय एक सौ पल ले। दोनों को ऊखल में कूटकर चारद्रोण जल में डालकर अग्नि पर पकावे ॥ १ ॥

तेन पादावशेषेण घृतप्रस्थं विपाचयेत्।
त्रिकटुत्रिफलारास्नाविडङ्गान्यथ चित्रकम् ॥ २ ॥

इसको चौथाई अर्थात् एक द्रोण जल शेष बचने पर उतार कर छान ले, और इस क्वाथ में एक प्रस्थ घी डाल तथा आगे लिखा कल्क द्रव्य डालकर घी पका लेवे। इसमें सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, रास्ना, वायविडंग, चीता ॥ २ ॥

काश्मर्याणां च मूलानि पूतिकस्य त्वचस्य च।
कुट्टयेदिति सर्वाणि श्लक्ष्णपिष्टानि कारयेत् ॥ ३ ॥
अस्य मात्रां पिबेत्प्रातः शालिभिः पयसा हितैः।
प्रमेहं मधुमेहं च मूत्रकृच्छ्रं भगंदरम् ॥ ४ ॥

गम्भारी की जड़, पूतिकरञ्ज, दारचीनी इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर घी से चौथाई भाग सबको मिलित चूर्ण कर कल्क बना ले। इस घी के प्रातःकाल पीने से और शालिधान्य और दूध मिलाकर पथ्य खाने से प्रमेह, मधुमेह, मूत्रकृच्छ्र तथा भगन्दर रोग नष्ट होते हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥

आलस्यं चान्त्रवृद्धिं च कुष्ठरोगं विशेषतः।
क्षयं चापि निहन्त्येतन्नाम सिंहामृतं घृतम् ॥ ५ ॥

आलस्य, अन्त्रवृद्धि तथा विशेष करके कुष्ठ रोग भी इससे नष्ट होते हैं। यह सिंहामृतघृत क्षय को भी नष्ट करता है ॥ ५ ॥

अथ हरिद्रादितैलम्—निशारसं चतुःप्रस्थं द्विप्रस्थक्षीर संयुतम्।
कुष्ठाश्वगन्धालशुननिशापिप्पलिकल्कितम्।
विपक्वं तिलजप्रस्थं मेहानां विंशतिं जयेत् ॥ १ ॥

हल्दी का स्वरस चार प्रस्थ, दो प्रस्थ दूध, तिल का तेल एक प्रस्थ ले। कल्कार्थ आगे लिखे द्रव्य लें। कूठ, असगन्ध, लसुन, हल्दी, पिप्पली इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर सबको मिलाकर तेल से चौथाई लेवे। सबको एकत्र

करके विधिपूर्वक तैल पाक करलें । इस हारिद्रादि तैल के सेवन करने से २० प्रकार के प्रमेह नष्ट हो जाते हैं ॥ १ ॥ इति हरिद्रादितैलम् ॥

अथ लेपनम्—क्षीरमौदुम्बरं यत्नाद्वाकुचीं च प्रयोजयेत् ।
पिटिकासु समस्तासु लेपनं संप्रशान्तये ॥ १ ॥

समस्त प्रमेह पिड़िकाओं की शान्ति के लिये गूलर का दूध और बावची के बीज इन दोनों को पीसकर लेप करें । इससे सब प्रकार की पिड़िकाओं में लाभ पहुंचता है ॥ १ ॥

अथ रसाः ।

तत्राऽदौ हरिशंकररसः—सूताभ्रमामलजलैः सप्तवारं विभावयेत् ।
हरिशंकरसंज्ञः स्याद्रसः सर्वप्रमेहनुत् ॥ १ ॥

शुद्ध रससिन्दूर, अभ्रक भस्म दोनों समभाग लेकर आंवले के जल से अर्थात् आंवले के स्वरस से सातवार भावित करे । यह हरिशंकररस सभी प्रमेहों को शान्त करता हैं ॥ १ ॥

अथ मेघनादरस:—सूतं कान्तं गन्धतीक्ष्णं ताप्यं व्योषं फलत्रिकम् ।
शिलाजतुशिलाङ्कोलबीजं रात्रिकपित्थकम् ॥ १ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध कान्तभस्म, शुद्ध गंधक, तीक्ष्ण लौहभस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, सोंठ का चूर्ण, मिरच का चूर्ण, पीपल का चूर्ण, हरड़ का चूर्ण, बहेड़े का चूर्ण, आंवले का चूर्ण, शुद्ध शिलाजीत, शुद्ध मनसिल, अंकोल बीज, हल्दी का चूर्ण, कैथ के फल का चूर्ण ॥ १ ॥

त्रिःसप्तकृत्वो भृङ्गाद्भिर्भावयेन्निष्कमानकः ।
मधुना मेघनादोऽयं सर्वमेहान्विनाशयेत् ॥ २ ॥

इन सब को समभाग लेकर पहले पारागन्धक की कज्जली करे, फिर अन्य सब चूर्ण मिलावे ॥ फिर भांगरे के स्वरस से २१ बार भावना देवे । इसे एक निष्क भर लेकर शहद मिलाकर खिलावे तो यह मेघनाद रस सभी प्रमेहों को शान्त करता है । (इस की मात्रा एक रत्ति की पर्याप्त है) ॥ २ ॥

महानिम्बस्य बीजानि पेषयेत्तण्डुलाम्बुना ।
सघृतान्यचिराद्धन्युः पानान्मेहांश्चिरोत्थितान् ॥ ३ ॥

महानीम या बकायन के बीजों की गिरी चावलों के जल से पीसकर घी मिलाकर पिलावें तो पुराने प्रमेहों को शीघ्र नाश करती है ॥ ३ ॥

अथ मेहकुञ्जरकेसरीरसः—रसगन्धायसाभ्राणि नागवङ्गौ सुवर्णकम् ।
वज्रकं मौक्तिकं सर्वमेकीकृत्य विचूर्णयेत् ॥१॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, नागभस्म, बंगभस्म, सुवर्ण भस्म, वज्र अर्थात् हीराभस्म, मोतीभस्म इन सब को समभाग ले । पहले पारा

गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य एकत्र मिलाकर मर्दन करे ॥ १ ॥

शतावरीरसेनैव गोलकं शुष्कमातपे।
बद्ध्वा शुष्कं तमुद्धृत्य शरावे सुदृढे क्षिपेत् ॥ २ ॥

फिर शतावर के स्वरस से सब को घोटकर गोला बनाकर धूप में सुखावे। फिर उसे शराव में रखकर मिट्टी से सन्धि बन्द कर देवे ॥ २ ॥

संधिलेपं मृदा कुर्याद्गर्तायां गोमयाग्निना।
पुटेद्यामचतुःसंख्यमुद्धृत्य स्वाङ्गशीतलम् ॥ ३ ॥

फिर एक गढ़े में गोबर की अर्थात् उपलों की आग देकर चार याम अर्थात् १२ घण्टे पकावे। स्वांगशीतल होने पर निकाल लें ॥ ३ ॥

श्लक्ष्णखल्वे विनिक्षिप्य गोलं तं मर्दयेद् दृढम्।
देवब्राह्मणपूजां च कृत्वा धृत्वाऽथ कूपिके ॥ ४ ॥

और खरल में डालकर उस गोले का खूब पीस लें। फिर देव और ब्राह्मणों की पूजा कर के उसे एक शीशी में रखे ॥ ४ ॥

खादेद्वल्लद्वयं प्रातः शीतं चानु पिबेज्जलम्।
अष्टादश प्रमेहांश्च जयेन्मासोपयोगतः ॥ ५ ॥

इसे दो वल्ल प्रातःकाल खावे, और शीतल जल साथ में पीवे। इस के एक मास के सेवन से १८ प्रमेह नष्ट हो जाते हैं ॥ ५ ॥

तुष्टिं तेजोबलं वर्णशुक्रवृद्धिं च दारुणम्।
अग्नेर्बलं वितनुते मेहकुञ्जरकेसरी ॥
दिव्यं रसायनं श्रेष्ठं नात्र कार्या विचारणा ॥ ६ ॥

इस से तुष्टि, तेज, बल, वर्ण की अति वृद्धि, वीर्य की अति वृद्धि होती है तथा अग्नि का बल बढ़ता है। यह मेह कुञ्जरकेसरी रस दिव्य; श्रेष्ठ रसायन है इस में विचार करने की आवश्यकता नहीं ॥ ६ ॥

अथ मेहान्तको रसः—मृताभ्रकान्तलोहानि नागवङ्गौ विशोधितौ।
यथोत्तरं भागवृद्ध्या खल्वमध्ये विनिक्षिपेत् ॥१॥

अभ्रकभस्म एक भाग, कान्तभस्म दो भाग, लोहभस्म ३ भाग, नागभस्म ४ भाग, विशुद्ध बंगभस्म ५ भाग सबको खरल में डलाकर पीस ले ॥ १ ॥

तलपोटेन वाराह्या शतावर्या हिमाम्बुना।
भावनाऽत्र प्रकर्तव्या यामं यामं पृथक्पृथक् ॥ २ ॥

(तलपोटेन—तलः तालवृक्षे, पोटा स्त्रीपुंसलक्षणायां नार्य्याम्, चुक्रिकायाम्) तलपोट से अर्थात् तालमूली अर्थात् मूसली के रस से (पोट का अर्थात् काश तथा जड़ भी है)। वराही कन्द से, शतावरी के स्वरस से तथा सुगन्धबाला के जल से क्रमशः एक २ प्रहर भर भावना देवे ॥ २ ॥

चणमात्रां वटीं कृत्वा नवनीतेन सेवयेत्।
प्रातरुत्थाय विधिना सर्वमेहकुलान्तकः ॥ ३ ॥

इसकी चने के समान गोली बनाकर मक्खन के साथ सेवन करे। प्रातःकाल ही खावे तो यह सब मेहों का अन्त कर देता है ॥ ३ ॥

शाल्यन्नं सपटोलं च तण्डुलीयकवास्तुकम्।
मत्स्याक्षीमुद्गयूषं च अपक्वकदलीफलम् ॥ ४ ॥

शालीधान्य, परवल, चौलाई, बथुआ, मत्स्याक्षी या मछेछी, मूंग का रसा, केले का कच्चा फल खाना ये सब पथ्य हैं ॥ ४ ॥

अर्शांसि ग्रहणीदोषमूत्रकृच्छ्राश्मरीप्रणुत्।
कामलापाण्डुशोफांश्च अपस्मारक्षतक्षयान्।
रक्तकासविनाशे स्यात्पञ्चलोहरसायनम् ॥ ५ ॥

बवासीर, ग्रहणी, मूत्रकृच्छ्र तथा अश्मरी। कामला, पाण्डु, शोथ, अपस्मार क्षत, क्षय तथा रक्त संयुक्त खांसी इन सबको नाश करन के लिये यह पंचलोह-रसायन या मेहान्तक रस बहुत लाभ देता है ॥ ५ ॥

अथ मेहारिरसः—वङ्गभस्म मृतं सूतं तुल्यं क्षौद्रे विमर्दयेत्।
द्विगुञ्जो लेहयेन्नित्यं हन्ति मेहांश्चिरंतनान् ॥ ६ ॥

बंगभस्म, रससिन्दूर दोनों को समभाग लेकर शहद में मिलाकर नित्य दो रत्तिभर खावे तो पुराने प्रमेह भी नष्ट हो जाते हैं ॥ ६ ॥

अथ चन्द्रकलावटी—

एला सकर्पूरसिता सधात्री जातीफलं केसरशाल्मली च।
सूतेन्द्रवङ्गायसभस्म सर्वमेतत्समानं परिभावयेच्च ॥ १ ॥

छोटी इलायची के बीजों का चूर्ण, कपूर, खांड, (पाठान्तर में "सिता" की जगह शिला से शिलाजीत लें) आंवले का चूर्ण, जायफल का चूर्ण, नागकेसर, सीमल की मूसली का चूर्ण, रससिन्दूर, वंगभस्म तथा लोहभस्म इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग लेकर खरल करके सबको एकत्र मिलाकर रखे ॥ १ ॥

गुडूचिकाशाल्मलिकाकषायैर्निष्कार्धमानं मधुना ततश्च।
बद्ध्वा वटीं चन्द्रकलेतिसंज्ञां सर्वप्रमेहेषु नियोजयेत्ताम् ॥२॥

फिर गिलोय के स्वरस वा क्वाथ से तथा सीमल के स्वरस वा क्वाथ से भावना देवे। फिर शहद से मिलाकर आधा निष्कभर की गोली बनाकर सभी प्रमेहों में इसे उपयुक्त करे। यह चन्द्रकलानामकी वटी है ॥ २ ॥

अथ वङ्गेश्वरः—रसमेकं त्रयो वङ्गं वङ्गसाम्यं तु गन्धकम्।
मर्दयेद्दिनमेकं तु कुमार्याः स्वरसे बुधः ॥ १ ॥

शुद्धपारा एक भाग, बंगभस्म तीनभाग, गंधक शोधित तीनभाग, ले।

पहले पारागंधक की कज्जली करे फिर बंग मिला लेवे। फिर सबको घीकुवार के रस से मर्दन करे ॥ १ ॥

संस्थाप्य गोलकं भाण्डे रोधयेत्सुदृढं मुखम्।
पाचयेद्वालुकायन्त्रे दिनमेकं दृढाग्निना ॥ २ ॥

फिर इसका गोला बना एक शीशी में भर मुंह बन्द करके बालुकायन्त्र में रख एक दिन भर दृढ़ अग्नि से पकावे ॥ २ ॥

स्वाङ्गशीतलमादाय संपूज्य द्विजदेवताः।
पिप्पलीमधुना युक्तं सर्वमेहेषु योजयेत् ॥ ३ ॥

फिर स्वांग शीतल होने पर ब्राह्मण और देवता की पूजा करके इस रस की उचित मात्रा को शहद तथा पीपल के चूर्ण से मिलाकर खिलावें। इससे सभी प्रमेह अच्छे होते हैं ॥ ३ ॥

क्षीरान्नं योजयेत्पथ्यमम्ललवणवर्जितम्।
रसो वङ्गेश्वरो नाम सर्वमेहनिकृन्तनः ॥ ४ ॥

इसके साथ दूध तथा अन्न का पथ्य देवे। और खटाई और लवण न खावे। यह बंगेश्वररस सब प्रमेहों को नष्ट करने वाला है ॥ ४ ॥

अथ महावङ्गेश्वरः—वङ्गं कान्तं च गगनं हेमपुष्पं समं समम्।
कुमारीरसतो भाव्यं सप्तवारं भिषग्वरैः ॥ १ ॥

बंगभस्म, कान्तभस्म, अभ्रकभस्म, धतूरे के पुष्प (हेमपुष्पम्—जवापुष्पे, अशोकपुष्पे, नागकेसर पुष्पे च) प्रत्येक द्रव्य समभाग लें। इन सबको पीसकर घीकुमार के स्वरस में सातवार भावना देवें ॥ १ ॥

एष वङ्गेश्वरो नाम प्रमेहान्विंशतिं जयेत्।
मूत्रकृच्छ्रं सोमरोगं पाण्डुरोगं महाश्मरीम् ॥
रसायनमिदं श्रेष्ठं नागार्जुनविनिर्मितम् ॥ २ ॥

यह बंगेश्वररस सेवन करने से बीस प्रकार के प्रमेहों को नष्ट करता है। मूत्रकृच्छ्र, सोमरोग, पाण्डुरोग, महा अश्मरी इन सबको नष्ट करता है। यह नागार्जुन मुनि का बताया हुआ रसायन है ॥ २ ॥ इति महाबंगेश्वरोरसः।

अथ वङ्गभस्मप्रयोगो गुणाश्च—

वङ्गं शिलाजतुयुतं तु मतं प्रमेहे धातुक्षये दुर्बलनष्टशुक्रयोः।
अभ्रेण युक्तं तु सुतप्रदं स्याज्जातीफलार्ककरहाटलवङ्गयुक्तम् ॥१॥

बंगभस्म को शिलाजीत से मिलाकर खिलावें तो प्रमेह, धातुक्षय, दुर्बल वीर्य्य तथा नष्टवीर्य्य रोग दूर होते हैं। अभ्रकभस्म, जायफल, ताम्रभस्म, स्वर्णभस्म तथा लौंग के चूर्ण से मिलाकर खाया हुआ बंगभस्म पुत्र को देता है ॥ १ ॥

शाल्मलीत्वग्रसोपेतं सक्षौद्ररजनीरजः।

वङ्गभस्म हरेन्मेहान्पञ्चानन इव द्विपान् ॥ २ ॥

सीमल की त्वचा के स्वरस में शहद तथा हल्दी के चूर्ण को मिलाकर बंग भस्म सेवन करने से सब प्रमेहों को ऐसे नष्ट करता है जैसे शेर हाथियों को ॥ २ ॥

गुडूचीसारमधुना वङ्गभस्म प्रमेहनुत्।
नागभस्म तथैवापि सर्वमेहविनाशनम् ॥ ३ ॥

गिलोय का सत और शहद मिलाकर बंगभस्म के साथ खावें तो प्रमेह नष्ट होते हैं। नागभस्म भी इसी प्रकार सभी प्रमेहों का नाश करती है ॥ ३ ॥

पयो गवां सखण्डकं त्रिकण्टवङ्गवल्लकं
प्रमेहभल्लकं परं बुधा वदन्ति सादरम् ॥ ४ ॥

गोखरु के चूर्ण और बंगभस्म डेढ़ रत्ति अथवा दो रत्ति को गौ के दूध में खांड मिलाकर खिलाया जाये तो प्रमेह का नाश करती है ॥ ४ ॥

अथ वङ्गगुणाः—

तिक्तकं सलवणं च भेदकं पाण्डुजन्तुशमनं सुशीतलम्।
मेहदाहशमनं च कान्तिदं वङ्गमाहुरिति मारुतापहम् ॥ १ ॥

बंगभस्म, तिक्त है, लवण रस युक्त है, मलका भेद करता है, पाण्डुरोग नाशक है, तथा कृमिनाशक है। सुशीतल है, प्रमेह तथा दाह को शमन करता है, कान्तिप्रद है तथा वायु का नाश करता है ॥ १ ॥

अथाभ्रकयोगः—निश्चन्द्रमभ्रकं भस्म सवरारजनीरजः।
मधुना लीढमचिरात्प्रमेहान्विनिवर्तयेत् ॥ १ ॥

निश्चन्द्र अभ्रकभस्म एक रत्ति और हरड़ का चूर्ण, बहेड़े का चूर्ण, आंवले का चूर्ण, हल्दी का चूर्ण, इन सब को एकत्र कर के शहद से मिलाकर चाटें तो सभी प्रमेहों को शीघ्र ही नष्ट करता है ॥ १ ॥

अथ नागभस्मयोगः—शुद्धस्य च मृतस्याहे रजो वल्लमितं लिहेत्।
सनिशामलकक्षौद्रं सर्वमेहप्रशान्तये ॥ १ ॥

शुद्ध नागभस्म एक वल्ल (वल्ल=डेढ रत्ति, दो रत्ति तथा तीन रत्ति) लेकर हल्दी के चूर्ण, और आंवले के चूर्ण और शहद से मिलाकर खिलाने से सभी प्रमेह शान्त होते हैं (मात्रा आधी रत्ति दें) ॥ १ ॥

अथ गन्धकयोगः—गन्धकं गुडसंयुक्तं कर्षं भुक्त्वा पयः पिबेत्।
विंशतिस्तेन नश्यन्ति प्रमेहाः पिटिका अपि ॥ १ ॥

शुद्ध आंवलासार गंधक, गुड से मिलाकर उचित मात्रा में खिलावें और साथ में दूध पिलावे तो बीसों प्रमेह तथा पिटिका भी नष्ट होजाती हैं ॥ १ ॥

अथ शिलाजतुयोगः—शिलाजतुरसं पीत्वा प्रातः क्षीरासितायुतम्।
मुच्यते सर्वमेहेभ्यस्त्रिःसप्तदिवसैर्नरः ॥ १ ॥

दूध और खांड से मिलाकर शोधित शिलाजीत को खिलाने से २१ दिन में सब प्रमेहों की शान्ति हो जाती है ॥ १ ॥

अथ स्वर्णमाक्षिकभस्मयोगः—**माक्षिकं मधुना लीढं मेहं हरति सर्वथा।**
गुडूचीसत्त्वसंयुक्तं पित्तमेहं व्यपोहति ॥ १ ॥

स्वर्णमाक्षिकभस्म को शहद से मिलाकर खिलावें तो प्रमेह को सर्वथा नाश करती है। और स्वर्णमाक्षिकभस्म को गिलोय के सत के साथ खिलावें तो पित्तज प्रमेहों को नष्ट करती है ॥ १ ॥

अथ बसन्तकुसुमाकरः—**पृथग्द्वौ हाटकं चन्द्रं त्रयो वङ्गाहिकान्तजम्।**
चत्वारः सूतमभ्रं च प्रवालं मौक्तिकं तथा ॥ १ ॥

स्वर्णभस्म दो भाग, चांदीभस्म दो भाग, बंगभस्म तीन भाग, नागभस्म ३ भाग, कान्तभस्म ३ भाग। रससिन्दूर ४ भाग, अभ्रकभस्म ४ भाग, प्रवाल-भस्म ४ भाग, मोतीभस्म ४ भाग ॥ १ ॥

भावना गव्यदुग्धेक्षुवासाश्रीद्विजलैर्निशा।
मोचाकन्दरसैः सप्त क्रमाद्भाव्यं पृथक्पृथक् ॥ २ ॥

इन सब को एकत्र खरल करके गौ के दूध से, ईख के रस से, बांसे के स्वरस से, कमल के स्वरस से, सुगंधबाला के स्वरस से, जलबेतस के स्वरस से। केले के कन्द के स्वरस से क्रमशः सात २ रात भावना देनी ॥ २ ॥

शतपत्ररसेनैव मालत्याः कुसुमैस्तथा।
पश्चान्मृगमदैर्भाव्यः सुसिद्धो रसराड् भवेत् ॥ ३ ॥

फिर कमल के फूल या गुलाब के फूलों के स्वरस से, मालती या चमेली के फूलों के स्वरस से भावना देवे। फिर कस्तूरी से भावना देवे। ("वासालाक्षा-रसोदीच्यरंभाकन्द प्रसूनकैः" किसी २ पुस्तक में यह पाठ है। किसी में "कुङ्कुमोदकैः" पाठ है। यहां पर कस्तूरी एक भाग लेकर किंचित् जल से घोटकर उस की भावना देनी।) इस प्रकार से यह रसराज तैयार होता है ॥३॥

कुसुमाकरविख्यातो वसन्तपदपूर्वकः।
वल्लद्वयमितः सेव्यः सिताज्यमधुसंयुतः ॥ ४ ॥

इस का नाम बसन्त कुसुमाकररस है। इसे दो वल्ल लेकर खांड शहद और घी मिलाकर सेवन करना चाहिये ॥ ४ ॥

वलीपलितहृन्मेध्यः कामदः सुखदः सदा।
मेहघ्नः पुष्टिदः श्रेष्ठः परं वृष्यो रसायनम् ॥ ५ ॥

बली तथा पलितरोग इस से दूर होता है, यह मेध्य है, सदा काम को उत्पन्न करता है और सुख देता है। मेहों को नाश करता है, पुष्टि देता है, श्रेष्ठ है, परम वृष्य है और रसायन है ॥ ४ ॥

आयुर्वृद्धिकरं पुंसां प्रजाजननमुत्तमम्।
क्षयकासतृषोन्मादश्वासरक्तविषार्तिजित्॥ ६॥

मनुष्यों की आयु बढ़ाता है, प्रजा अर्थात् सन्तानकारकों में उत्तम है। क्षय, कास, तृषा, उन्माद, श्वास, रक्तदोषों को तथा विष को नष्ट करता है॥ ६॥

सिताचन्दनसंयुक्तमम्लपित्तादिरोगजित्।
शुक्लपाण्ड्वामयान्शूलान्मूत्राघाताश्मरीं हरेत्॥ ७॥

इस रस को खांड तथा घिसे चन्दन से मिलाकर खावें तो अम्लपित्तादिरोग नष्ट होते हैं। शुक्लवर्ण का पाण्डुरोग अर्थात् रक्त की कमी के कारण शरीर का रंग श्वेत होजाना तथा पाण्डुरोग, शूल, मूत्राघात तथा अश्मरी रोगों को नष्ट करने में यह रस श्रेष्ठ है॥ ७॥

योगवाहि त्विदं सेव्यं कान्तिश्रीबलवर्धनम्।
सुसात्म्यमिष्टभोजी च रमयेत्प्रमदाशतम्॥ ८॥

यह योगवाही है! इसे सेवन करने से कान्ति, श्री तथा बल बढ़ाता है। सात्म्य मिष्टभोजन करे (अथवा यह रस सुसात्म्य है, इष्ट भोजन करने से) इसके सेवन से सौ स्त्रियों के साथ रमण कर सकता है॥ ८॥

मदनं मदयन्मदमुज्ज्वलयन्प्रमदानिवहानतिविह्वलयन्।
सुरतैः सुखदैर्गतिविच्यवनैर्भवसारजुषामयमेव सुहृत्॥ ९॥

इसके सेवन से कामदेव बढ़ता है, मद चढ़ता है तथा अनेकों रमणियों का मान खण्डित होता है। सुरतकाल में सुखदायक है भोग शक्तिवर्धक है और संसारी मनुष्यों के लिये यह रस मित्र के समान है॥ ९॥

अथ जलजामृतरसः—तवक्षीरं शिला धातुर्वङ्गं कुण्डलिसत्त्वकम्।
मेहारिबीजसंयुक्तं विदारीजीवनीरसैः॥ १॥
भावयेत्तत्त्रिवारं तु सितोपलसमन्वितम्।
जलजामृतविख्यातो रसोऽयं मेहकृच्छ्रनुत्॥ २॥

तबाशीर, शुद्धमनाशिल, बंगभस्म तथा सीसे का सत्त्व, (मेहारिबीज) श्वेतापराजिता के बीज के चूर्ण से मिलाकर, विदारीकन्द के स्वरस तथा (जीवनी—मेदा, महामेदायां, जीवन्ती) जीवन्ती के स्वरस से तीन २ बार भावना देवे। फिर मिश्री के चूर्ण के साथ खावे। यह जलजामृतरस प्रसिद्ध है इससे प्रमेह तथा मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है॥२॥ अथ प्रमेहपिटिकानां चिकित्सा॥

प्रमेहपिटिकानां तु प्राक्कार्यं रक्तमोक्षणम्।
पाटनं तु विपक्कानां तासां पाने प्रशस्यते॥ ३॥

प्रमेह पिटिकाओं का पहले रक्त निकलवाये। फिर जो पक गई हों उनको फड़वा देवे॥ ३॥

क्काथो व्रणघ्नोऽत्र बस्तिर्मूलैस्तीक्ष्णैर्विरेचनम्।

व्रणप्रतिक्रिया सर्वा कार्याऽत्रापि भिषग्वरैः ॥ ४ ॥

फिर उनके रोगियों को व्रणनाशक क्वाथ पिलावे । बस्ति देवे । तीक्ष्ण मूलों से अर्थात् दन्ती मूलादि तीक्ष्ण मूल द्रव्यों से विरेचन देवे । यहां पर व्रणरोग में जो उपाय किये जाते हैं वे सब पिड़िकाओं में भी करने चाहिये ॥ ४ ॥

अथ पथ्यापथ्यम् ।

श्यामाककोद्रवोद्दालगोधूमचणकाढकी ।
शालिमुद्गकुलित्थाश्च मेहिनां देहिनां हिताः ॥ १ ॥

सांवा, कोदों, उद्दाल जंगली कोदों, गेहूं, चने, अरहर, शालीधान्य, मूंग, कुलथी ये सब प्रमेह रोगियों क लिये हितकारक हैं ॥ १ ॥

मेदोघ्ना बद्धमूत्राश्च समाः सर्वेषु धातुषु ।
यवास्तस्मात्प्रशस्यन्ते मेहेषु च विशेषतः ॥ २ ॥

क्योंकि जौ मेदनाशक है, मूत्र को बांधने वाले हैं और सब धातुओं के लिये सम हैं, इस लिये प्रमेह रोग में तो जौ के सेवन की अति प्रशंसा की है ॥ २ ॥

तिक्तशाकं पटोलानि जाङ्गलामिषजा रसाः ।
सैन्धवं मरिचं चैव मेहिनामाहरेद्भिषक् ॥ ३ ॥

कड़वे शाक, परवल, जांगल जीवों का मांसरस । सेंधानमक, मिरच, ये सब पदार्थ मेहरोग में पथ्य हैं ॥ ३ ॥

सदाऽऽसनं दिवा निद्रा नवान्नानि दधीनि च ।
मूत्रवेगं धूमपानं स्वेदं शोणितमोक्षणम् ॥ ४ ॥

परन्तु सदा बैठे रहना, दिन में सोना, नया अन्न खाना, दही खाना, मूत्र वेग रोकना, धुंआं पीना, स्वेद लेना, खून निकलवाना ॥ ४ ॥

सौवीरकं सुरा सूक्तं तैलं क्षारं घृतं गुडम् ।
अम्लेक्षुरसपिष्टान्नानूपमांसानि वर्जयेत् ॥ ५ ॥

सौवीरक, सुरा, सूक्त, तैल, क्षार, घृत, गुड, अम्लरस, ईख का रस, पीठी के अन्न, आनूप मांस ये सभी पदार्थ प्रमेह रोग वाला न खावे ॥ ५ ॥ इति पथ्यापथ्यम् । इति प्रमेहचिकित्सा ॥

इति हरद्वारीय गुरुकुलविश्वविद्यालयस्नातकेन श्रीविद्याधरविद्यालंकारेण लवपुरीय श्रीमद्दयानन्दायुर्वेदमहाविद्यालयीय वैद्यकविराजोपाधिधारिणा राजयक्ष्मचिकित्सकेन जलचिकित्साविशेषज्ञेन रसेन्द्रसारसंग्रहटीकाकर्त्रा कृतायां योगरत्नाकरस्य रत्नगर्भानाम्नि टीकायां प्रमेहप्रकरणंसमाप्तम् ।

अथ ग्रन्थान्तरे बहुमूत्रमेहनिदानम् ।

कार्श्यं स्वेदोऽङ्गगन्धः करपदरसनानेत्रकर्णोपदेहः
कासः शैथिल्यमङ्गेऽरुचिरपि पिटिकाः कण्ठताल्वोष्ठशोषः ।

दाहः शीतप्रियत्वं धवलिमतनुता श्रान्तता पीतमूत्रं
मूत्रस्था माक्षिकाद्याश्चिरमपि बहुमूत्राख्यरोगे प्रवृद्धे ॥१॥

जब बहुमूत्ररोग बढकर पुराना हो जाता है तब रोगी का शरीर कृश हो जाता है, अंगों में स्वेद आता है, अंगों में से विशेष गन्ध आती है। हाथ, पैर, जीभ, नेत्र और कान लिपे हुए से रहते हैं, खांसी होती है, अंग शिथिल हो जाते हैं, अरुचि होती है, पिड़िकायें निकलती हैं, कण्ठ, तालु और ओष्ठ सूख जाते हैं। भीतर दाह होता है और बाहर से शीत में बैठने की इच्छा होती है तथा शीत वस्तुओं के खाने पीने और छूने की इच्छा होती है, शरीर का रंग श्वेत होजाता है। थकान होती है, मूत्र पीला आता है और मूत्र पर मक्खियें बैठती हैं ॥ १ ॥

अथ वाग्भटः—

स्वेदोऽङ्गगन्धः शिथिलत्वमङ्गे शय्यासनस्वप्नसुखाभिलाषः।
हृन्नेत्रजिह्वाश्रवणोपदेहो घनाङ्गता केशनखातिवृद्धिः ॥ १ ॥

शरीर पर पसीना आना, अंगों का शिथिल होना, शय्या पर लेटने, बैठे रहने, सोने आदि सुख में रहने की इच्छा होना। हृदय, नेत्र, जीभ, कान, इन का मैल से भरा रहना, अंगों की घनता होना, केश तथा नखों की अति वृद्धि होना ॥ १ ॥

शीतप्रियत्वं गलतालुशोषो माधुर्यमास्ये करपाददाहः।
भविष्यतो मेहगणस्य लिङ्गं मूत्रेऽभिधावन्ति पिपीलिकाश्च ॥२॥

शीत प्रिय लगना, गले तथा तालु का सूखना, मुंह का मीठा रहना, हाथ पैरों में दाह होना। मूत्र करने पर कीड़ियों का उस पर आना (मीठा होने के कारण कीड़ियां आती हैं) ये सभी लक्षण जब प्रमेहों ने होना होता है तो उस से पूर्व होते हैं ॥ २ ॥

दृष्ट्वा प्रमेहं मधुरं सपिच्छं मधूपमं स्याद् द्विविधो विचारः।
संतर्पणाद्वा कफसंभवः स्यात्क्षीणेषु दोषेष्वनिलात्मको वा ॥३॥

प्रमेह को मीठा, शहद के समान तथा पिच्छयुक्त देखकर दो प्रकार का विचार करना चाहिये। सन्तर्पण से कफज प्रमेह होता है, और यदि दोष पित्त कफादि अतिक्षीण होगये हों तो वात से वह मधुमेह होता है ॥ ३ ॥

सपूर्वरूपाः कफपित्तमेहाः क्रमेण ये वातकृताश्च मेहाः।
साध्या न ते पित्तकृतास्तु याप्याः साध्यास्तु मेदो यदि नातिदुष्टं ॥४॥

पूर्वलिखित पूर्वरूपों सहित कफ पित्त के प्रमेह तथा वात के प्रमेह क्रमशः साध्य नहीं हैं। पित्तकृत प्रमेह याप्य हैं, और यदि मेद अतिदुष्ट न होगया हो तो साध्य भी होते हैं ॥ ४ ॥

अथ बहूमूत्रचिकित्सा।

त्रिफलावेणुपत्राब्दपाठामधुयुतैः कृतः।
कुम्भयोनिरिवाम्भोधिं बहुमूत्रं तु शोषयेत् ॥ १ ॥

हरड़, बहेड़ा, आंवला, बांस के पत्ते, मोथा, पाठा इनको समभाग लेकर क्वाथ करके शीतल करके शहद मिलाकर पिलावे। इससे (कुम्भयोनि अगस्त विद्युत) अगस्त या विद्युत द्वारा समुद्र या जल जिस प्रकार सुखा दिया जाता है, उसी प्रकार बहुमूत्र रोग का मूत्र सूखकर कम आना आरम्भ हो जाता है और यह रोग शान्त हो जाता है ॥ १ ॥

अथ तारकेश्वररसः—मृतं सूतं मृतं वङ्गं मृतं लोहाभ्रकं समम्।
मर्दयेन्मधुना सार्धं रसोऽयं तारकेश्वरः।
माषैकं लेहयेत्क्षौद्रैर्बहुमूत्रापनुत्तये ॥ १ ॥

रससिन्दूर, बंगभस्म, लोहभस्म, अभ्रकभस्म इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग मर्दन करके रखे। इसे शहद के साथ घोटकर रखे। यह तारकेश्वर रस कहाता है। इसे एक माशा भर लेकर (दो रत्ति मात्रा दें) शहद से मिलाकर चटावें। इससे बहुमूत्ररोग आराम होता है ॥ १ ॥ इति तारकेश्वरः।

अथाऽऽनन्दभैरववटी—विषोषणकणाटङ्कहिङ्गुलैः समचूर्णकैः।
आनन्दभैरवस्यास्य गुञ्जाऽतीसारमेहनुत् ॥ १ ॥

शोधित विष, कालीमिरच, पीपली, सुहागा, शुद्ध हिंगुल इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर। एक रत्ति भर देने से अतिसार और प्रमेह नष्ट होते हैं॥१॥ इति बहूमूत्रमेहचिकित्सा ॥

इति हरिद्वारीय गुरुकुलविश्वविद्यालयस्नातकेन श्रीविद्याधर विद्यालंकारेण लवपुरीय श्रीमद्दयानन्दायुर्वेदमहाविद्यालयीय वैद्यकविराजोपाधिधारिणा राजयक्ष्मचिकित्सकेन जलचिकित्साविशेषज्ञेन रसेन्द्रसारसंग्रहटीकाकर्त्रा कृतायां योगरत्नाकरस्य-रत्नगर्भानामटीकायां बहुमूत्रमेहचिकित्सा समाप्ता।

अथ मेदोरोगनिदानम्।

अव्यायामदिवास्वप्नश्लेष्मलाहारसेविनः।
मधुरोऽन्नरसः प्रायः स्नेहान्मेदो विवर्धते ॥ १ ॥

व्यायाम न करने से, दिन में सोने से, कफकारक आहार सेवन करने से मधुर अन्न का रस स्नेह से मिलकर मेदधातु को बढ़ाता है। (मधुरान्नरस इसका अर्थ मधुर प्राय अन्न का रस जो आम के सदृश होता है। अथवा अन्नवहा प्रणाली में मधुरतर अन्न रस लिपा हुआ होता है इस कारण सारे अन्न का रस भी मधुर ही बनता है। जैसे पित्त से युक्त अन्नवह स्रोत में मधुर रस का विदाह हो जाता है) ॥ १ ॥

मेदसाऽऽवृतमार्गत्वात्पुष्यन्त्यन्ये न धातवः।

मेदस्तु चीयते तस्मादशक्तः सर्वकर्मसु ॥ २ ॥

मेद से सारे स्रोतों के मार्ग रुक जाते हैं इस लिये अन्य धातु पुष्ट नहीं होते, केवल मेद ही बढ़ता जाता है इस लिये सभी कामों के करने में मेद रोगी अशक्त हो जाता है ॥ २ ॥

मेदस्विलक्षणं—क्षुद्रश्वासतृषामोहस्वप्नक्रथनसादनैः।

युक्तः क्षुत्स्वेददौर्गन्ध्यैरल्पप्राणोऽल्पमैथुनः ॥ १ ॥

उसे छोटा २ सांस आता है, तृष्णा होती है, मोह होता है, नींद आती है, (क्रथनं, मारणे, सहसा श्वासावरोधे) एकाएक सांस रुक जाता है, अंगसाद होता है। भूख बहुत लगती है, स्वेद अधिक आता है, दुर्गन्ध अधिक आती है। अल्प प्राण होता है तथा मैथुन भी कम कर सकता है ॥ १ ॥

मेदस्तु सर्वभूतानामुदरेष्वस्थिषुस्थितः।

अत एवोदरे वृद्धिः प्रायो मेदस्विनो भवेत् ॥ २ ॥

मेद तो सभी प्राणियों के पेट में तथा हड्डियों में रहता है। इसी कारण प्रायः मेदस्वी पुरुष की पेट की वृद्धि अधिक होती है ॥ १ ॥

मेदसाऽऽवृतमार्गत्वात्कोष्ठे वायुर्विशेषतः।

चरन्संधुक्षयत्यग्निमाहारं शोषयत्यपि ॥ ३ ॥

मेद से सब स्रोतों के रुक जाने पर कोष्ठ के अन्दर वायु विचरता हुआ अग्नि को तीव्र कर देता है इसलिये वह अग्नि आहार को सुखा देती है ॥ १ ॥

तस्मात्स शीघ्रं जरयत्याहारं काङ्क्षयत्यपि।

विकारांश्चाश्नुते घोरान्कांश्चित्कालव्यतिक्रमात् ॥ ४ ॥

इसलिये वह भोजन को शीघ्र पचा लेता है तथा बार २ भोजन की इच्छा करता है। और भोजन के समय के बीत जाने पर उसे घोर रोग भी उत्पन्न होते हैं ॥ ४ ॥

एतावुपद्रवकरौ विशेषादग्निमारुतौ।

एतौ हि दहतः स्थूलं वनं दावानलो यथा ॥ ५ ॥

ये अग्नि और वायु विशेष कर के दोनों ही उपद्रव करने वाले हैं। ये दोनों स्थूल पुरुष को अन्दर से ऐसे जलाते हैं जैसे बड़े बन को दावाग्नि जला देती है॥५॥

मेदस्यतीव संवृद्धे सहसैवानिलादयः।

विकारान्दारुणान्कृत्वा नाशयन्त्याशु जीवितम् ॥ ६ ॥

मेद के अत्यन्त बढ जाने से वातादि एकदम अचानक ही भयंकर २ रोगों को कर के शीघ्र ही जीवन को नष्ट कर देते हैं ॥ ६॥

स्थूललक्षणं—मेदोमांसातिवृद्धत्वाच्चलस्फिगुदरस्तनः।

अयथोपचयोत्साहो नरोऽतिस्थूल उच्यते ॥ ७ ॥

जिस के मेद तथा मांस के अति बढ़ जाने से चूतड़, उदर तथा स्तन

चलायमान हिलते डुलते रहते हैं। अनुचित मांस का बढ़ना तथा अनुचित उत्साह सम्पन्न रहना जिस में दिखाई दे उसे अतिस्थूल कहते हैं ॥ ७ ॥

स्थूले स्युर्दुस्तरा रोगा विसर्पाः सभगंदराः।
ज्वारितसारमेहार्शःश्लीपदापचिकामलाः ॥ ८ ॥

स्थूल पुरुष में भयंकर २ रोग विसर्प, भगन्दर, ज्वर, अतिसार, प्रमेह, अर्शरोग श्लीपद अपची तथा कामला रोग हो जाते हैं ॥ ८ ॥

कृशलक्षणं—शुष्कस्फिगुदरग्रीवो धमनीजालसंततः।
त्वगस्थिशोषोऽतिकृशः स्थूलपर्वा नरः स्मृतः ॥ ६ ॥

जिसके चूतड़, पेट, ग्रीवा, सूखी हुई हों, जिसके धमनी या नाड़ियों का जाल फैला हुआ हो। जिसकी त्वचा और हड्डियां सूख गई हों और उंगलियों आदि के पर्व या पोरे स्थूल हों। उसे अतिकृश कहते हैं ॥६॥ इति मेदोरोगनिदानम्।

अथ मेदोरोगचिकित्सा।

क्षौद्रेण त्रिफलाक्वाथः पीतो मेदोहरः स्मृतः।
शीतीभूतं तथोष्णाम्बु मेदोहृत्क्षौद्रसंयुतम् ॥ १ ॥

त्रिफला का क्वाथ शहद मिलाकर पिलाने से मेद का नाश करता है। गरम पानी को शीतल करके शहद मिलाकर पिलावें तो भी मेद का नाश होता है ॥१॥

उष्णं भक्तस्य मण्डं वा पिबेत्कृशतनुर्भवेत्।
सचव्यजीरकव्योषहिङ्गुसौवर्चलानलाः ॥ २ ॥

अथवा चावलों का गरम २ मांड पीने से भी शरीर कृश होता है। चव्य, जीरा, सोंठ, मिरच, पीपल, सोंचलनमक, चीता ॥ २ ॥

मधुना सक्तवः पीता मेदोघ्ना वह्निदीपनाः।
क्षारं वा तालपत्रस्य हिङ्गुयुक्तं पिबेन्नरः।
मेदोवृद्धिविनाशाय भक्तमण्डसमन्वितम् ॥ ३ ॥

इनको समभाग लेकर चूर्ण करे। इस चूर्ण से (१६ गुणा) सत्तुओं को लेकर दोनों को मिलाकर शहद से (" मस्तुना सक्तवः पीताः " चक्रदत्त में शहद के स्थान में दही के पानी से पीना लिखा है) पिलावे तो मेद का नाश होता है तथा अग्नि दीप्त होती है।

ताड़पत्र की क्षार बना लें उस क्षार में हींग मिलाकर चावलों की मांड के साथ पीवे तो मेदोवृद्धिरोग का नाश होता है ॥ ३ ॥

हरीतकीलोध्रमरिष्टपत्रचूतत्वचो दाडिमवल्कलं च।
एषोऽङ्गरागः कथितोऽङ्गनानां जङ्घाः कषायश्च नराधिपानाम् ॥४॥

हरड़, लोध, नीम के पत्ते, आम की छाल, अनार के वृक्ष की वा फल की

छाल इनका कल्क पीसकर स्त्रियों के शरीर पर मलने से स्त्रियों का रंग निखरता है। तथा राजाओं की घोड़े आदि की सवारी से विवर्ण हुई २ जांघों के लिये भी यह (कषायः—प्रलेपः, " कषायोरसभेदे च निर्य्यासे च विलेपने " मेदिनी) विलेपन किया जाय तो जांघों का रंग ठीक हो जाता है। (जम्ब्वाकषायश्च योगरत्नाकर का यह पाठ ठीक नहीं। क्योंकि जामुन का क्वाथ राजाओं के लिये क्या करता है यह स्पष्ट नहीं ॥ ४ ॥

अथ फलत्रिकादि—फलत्रिकं त्रिकटुकं सतैललवणान्वितम्।
षण्मासादुपयोगेन कफमेदोनिलापहम् ॥ ५ ॥

यदि हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल इन में से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग लेकर तैल और नमक से मिलाकर छः मास खाया जाये तो कफ, मेद तथा वात को नष्ट करता है ॥ ५ ॥

गुडूचीभद्रमुस्तानां प्रयोगस्त्रैफलस्तथा।
तक्रारिष्टप्रयोगश्च प्रयोगो माक्षिकस्य च ॥ ६ ॥

अथवा गिलोय और भद्रमोथा इनका चूर्ण सेवन करने से। केवल त्रिफला सेवन करने से, तक्रारिष्ट सेवन करने से अथवा केवल शहद सेवन करने से मेद नष्ट होता है ॥ ६ ॥

अथ त्र्यूषणाद्यं लौहम्—त्र्यूषणं त्रिफला चव्यं चित्रकं बिडमौद्भिदम्।
बाकुची सैन्धवं चैव सौवर्चलमयोरजः ॥ १ ॥

सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, चव्य, चीता, विड्लवण, औद्भिद् लवण, सोमराजी के बीज, सेंधानमक, सोंचलनमक, लौहभस्म ॥१॥

माषमात्रमतश्चूर्णं लिहेदाज्यमधुप्लुतम्।
अतिस्थौल्यमिदं चूर्णं निहन्त्यग्निविवर्धनम् ॥ २ ॥

इस चूर्ण को एक माषा भर लेकर घी तथा शहद से मिलाकर चाटे। इस चूर्ण से अति स्थूलता नष्ट होती है तथा अग्नि बढ़ती है ॥ २ ॥

मेदोघ्नं मेहकुष्ठघ्नं श्लेष्मव्याधिनिबर्हणम्।
नाऽऽहारे नियमश्चात्र विहारे वा विधीयते।
त्र्यूषणाद्यमिदं चूर्णं रसायनमनुत्तमम् ॥ ३ ॥

यह मेद को नाश करता है, प्रमेह तथा कुष्ठ को नष्ट करता है। कफ की व्याधियों को नष्ट करता है। आहार विहार में कोई विशेष रुकावट नहीं। यह त्र्यूषणाद्य-लौह परमोत्तम रसायन है ॥ ३ ॥

अथ नवकगुग्गुलुः—व्योषाग्निमुस्तात्रिफलाविडङ्गैर्गुग्गुलुं समम्।
खादन्सर्वाञ्जयेद् व्याधीन्मेदःश्लेष्मामवातजान् ॥१॥

सोंठ, मिरच, पीपल, चीता, मोथा, हरड़, बहेड़ा, आंवला, वायविडंग प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग लेवे, शुद्ध गूगल सब के समान लेवे। सब को एकत्र

मिलाकर रखे। इस के उपयोग से सभी रोग जो मेद तथा कफ के हों नष्ट होते हैं तथा आमवात के रोग भी नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथ लेपोद्वर्तने—हितो मोचरसो युक्तश्चूर्णैरुदधिफेनजैः।
प्रलेपेन निहन्त्याशु देहदौर्गन्ध्यमुत्कटम् ॥ १ ॥

मोचरस के साथ समुद्रफेन का चूर्ण मिलाकर शरीर पर मलने से शरीर की तीव्र दुर्गन्ध नष्ट होती है ॥ १ ॥

वासादलरसालेपाच्छङ्खचूर्णावचूर्णितात्।
बिल्वपत्ररसो वाऽपि गात्रदौर्गन्ध्यनाशनः ॥ २ ॥

बांसा के पत्तों के रस में शङ्खभस्म मिलाकर लेप करने से शरीर की दुर्गन्ध नाश होती हैं। अथवा बिल के पत्तों का रस शरीर पर लगाने से गात्रों की दुर्गन्ध नाश होती है ॥ २ ॥

हरीतकीं तु संपिष्य गात्रमुद्वर्तयेन्नरः।
पश्चात्स्नानं प्रकुर्वीत देहस्वेदप्रशान्तये ॥ ३ ॥

हरड़ों का चूर्ण कर के शरीर पर मलें। फिर स्नान करें तो देह का स्वेद नष्ट होता है ॥ ३ ॥

चन्द्रांशुशीतलं लोध्रं शिरीषोशीरकेसरैः।
उद्वर्तनं भवेद्ग्रीष्मे स्वेदोद्गमनिवारणम् ॥ ४ ॥

कपूर, श्वेत चन्दन वा पद्माख, लोध, शिरीष, खस, नागकेसर इन सब को पीसकर उबटना बनावें। इसे ग्रीष्म ऋतु में मलें तो पसीना आना बन्द हो जाता है ॥ ४ ॥

बब्बूलस्य दलैः सम्यग्वारिणा परिपेषितैः।
गात्रमुद्वर्येत्पश्चाद्धरीतक्या सुपिष्टया ॥ ५ ॥

बब्बूल के पत्तों को जल से पीसकर शरीर पर मलें, फिर हरड़ के चूर्ण से शरीर को उबटना कर के ॥ ५ ॥

भूय उद्वर्तनं कृत्वा पश्चात्स्नानं समाचरेत्।
प्रस्वेदान्मुच्यते क्षिप्रं ततस्त्वेवं समाचरेत् ॥ ६ ॥

स्नान कर लें। इस से शीघ्र ही प्रस्वेद नष्ट हो जाता है ॥ ६ ॥

जम्बूदलार्जुनतरुप्रसवैः सकुष्ठैरुद्वर्तनं प्रकुरुते प्रतिवासरं यः।
प्रस्वेदबिन्दुकणिकानिकरानुषङ्गाद्दुर्गन्धिता वपुषि तस्य पदं न धत्ते ७

जामुन के पत्ते, अर्जुन के फूल या फल, कूठ इन सब को समभाग लेकर चूर्ण करे। इस चूर्ण से प्रतिदिन उबटना करने से पसीने आने के कारण शरीर में जो दुर्गन्ध निकलती है वह नष्ट हो जाती है ॥ ७ ॥

शिरीषलामज्जकहेमलोध्रैस्त्वग्दोषसंस्वेदहरः प्रघर्षः।

प्रियङ्गुलोध्राभयचन्दनानि शरीरदौर्गन्ध्यहरः प्रदिष्टः ॥ ८ ॥

सिरस की छाल, पत्ते वा फूल, लामज्जक तृण, नागकेसर, लोध इन सब को समभाग लेकर चूर्ण कर के उबटना करने से, त्वचा के दोष तथा पसीना आना नष्ट होता है ॥ प्रियंगु, लोध, हरड़ और चन्दन इन सब को समभाग लेकर चूर्ण करे इस से शरीर की दुर्गन्धि नष्ट होजाती है ॥ ८ ॥

अथ वृन्दात्त्रिफलाद्यं तैलम्—

त्रिफलातिविषामूर्वात्रिवृच्चित्रकवासकैः।
निम्बारग्वधषड्ग्रन्थासप्तपर्णनिशाद्वयैः ॥ १ ॥

हरड़, बहेड़ा, आंवला, अतीस, मूर्वामूल, त्रिवी, चीता, बांसा, नीम, अम्लतास, बच, सतौना, हल्दी, दारुहल्दी ॥ १ ॥

गुडूचीन्द्रयवाकृष्णाकुष्ठसर्षपनागरैः।
तैलमेभिः समं पक्वं सुरसादिरसप्लुतम् ॥ २ ॥

गिलोय, इन्द्रजौ, पिप्पली, कूठ, सरसों, सोंठ इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग लेवें। सब का कल्क करें। इस कल्क से चौगुना तिल का तेल लें। तेल से चौगुना सुश्रुतोक्त सुरसादिगण का क्वाथ लेवें। सब को एकत्र करके तैलपाक करें ॥२॥

पानाभ्यञ्जनगण्डूषनस्यबस्तिषु योजितम्।
स्थूलतालस्यकण्ड्वादीन् जयेत्कफकृतान्गदान् ॥ ३ ॥

इस तैल के पीने से, लगाने से, गण्डूष धारण करने से, नस्य देने से, बस्ति देने से, स्थूलता, आलस्य, कण्डू आदि रोग तथा कफ के रोग दूर होते हैं। (सुश्रुतोक्त सुरसादिगण—सुरसा श्वेतसुरसा फणिज्झकार्ज्जक-भूस्तृण सुगन्धक-सुमुख—कालमाल-कासमर्द--क्षवक—खरपुष्पा—विडङ्ग—कट्फल—सुरसी—निर्गुण्डीकुला-हलोन्दुरकर्णिका फञ्जी-प्राचीबल-काकमाच्यो विषमुष्टिश्च" ॥ सु. सू. ३८ अ० ॥ श्वेत तुलसी, काली तुलसी, गंधपलाश, बाबुई तुलसी, गंधतृण, बृहद्गंध तृण, राई, सरसों, बनबाबुई, कासमर्द, छींकनी, विडङ्ग, कायफल, श्वेतसंभालु, नीला फूल का संभालु, कूकशिमा, इन्दूरकानी, भार्गी, कौआठोडी मकोय, घोड़ानीम)॥३॥

अथ महासुगन्धितैलम्—चन्दनं कुङ्कुमोशीरं प्रियङ्गुशटिरोचनम्।
तुरुष्कागुरुकस्तूरी कर्पूरो जातिपत्रिका ॥ १ ॥

लाल चन्दन, कश्मीरी केसर, खस, प्रियंगु, कचूर, (रोचन: वंशलोचनः, गोरोचना, बीजपूरे, जंबीरे, आरग्वधवृक्षे, करञ्जे, श्वेतशिग्रौ, निम्बे इत्यादि) गोरोचन, शिलारस, कस्तूरी, कपूर, जावित्री ॥ १ ॥

जातीकङ्कोलपूगानां लवङ्गस्य फलानि च।
नलिका नलदं कुष्ठं हरेणु तगरं स्रवम् ॥ २ ॥

जायफल, कङ्कोल, सुपारी, लौंग। नालीशाक अथवा नलिका नाम से उत्तरा-

पथ में प्रसिद्ध सुगन्धितछाल, नलदः अर्थात् पीलीखस, कूठ, रेणुका, तगर, मोथा ॥ २ ॥

नखं व्याघ्रनखं स्पृक्का बालो दमनकं तथा ।
प्रपौण्डरीकं कर्चूरं समांशैः शाणमात्रकैः ॥ ३ ॥

नखी, व्याघ्रनखी, स्पृक्का, सुगन्धबाला, दौना, पुण्डरिया काष्ठ, कचूर इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ शाण लेकर सबका कल्क करे ॥ ३ ॥

महासुगन्धि इत्येतत्तैलप्रस्थेन साधयेत् ।
प्रस्वेदमलदौर्गन्ध्यकण्डूकुष्ठहरं परम् ॥ ४ ॥

इस कल्क को एक प्रस्थ तिल तैल में डाल देवे और चार प्रस्थ जल डाल कर मन्द २ अग्नि से पकावे । इस को तैलमात्र शेष रह जाने पर उतार ले । इसे छानकर बोतलों में भर रखे । इस तैल की मालिश करने से पसीना, मैल, दुर्गन्ध, कण्डू, कुष्ठ आदि रोग अवश्य नष्ट होते हैं ॥ ४ ॥

अनेनाभ्यक्तगात्रस्तु वृद्धः सप्ततिकोऽपि वा ।
युवा भवति शुक्राढ्यः स्त्रीणामत्यन्तवल्लभः ॥ ५ ॥

इस तैल की मालिश करने से सत्तर वर्ष का बूढ़ा मनुष्य भी जवान हो जाता है, वीर्य की उस में अधिकता हो जाती है तथा स्त्रियों का अत्यन्त प्रिय हो जाता ह ॥ ५ ॥

सुभगो दर्शनीयश्च गच्छेद्वै प्रमदाशतम् ।
वन्ध्याऽऽपि लभते गर्भं षण्ढोऽपि पुरुषायते ॥
अपुत्रः पुत्रमाप्नोति जीवेच्च शरदां शतम् ॥ ६ ॥

सुन्दर, दर्शनीय रूप हो जाता है तथा सौ स्त्रियों को भोग सकता है । इस तेल से बन्ध्या को गर्भ ठहर जाता है और नपुंसक भी पुरुष हो जाता है । जिस के सन्तान में पुत्र कभी न हुए हों उसे भी पुत्र प्राप्त होता है और वह पुत्र अथवा वह मनुष्य सौ वर्ष की आयुवाला होता है ॥ ६ ॥

अथ रसाः—तत्राऽऽदौ रसभस्मयोगः—

रसभस्म वल्लमात्रं लीढ्वा मधुना पिबेदनु क्षौद्रम् ।
कोष्णाम्बुना समेतं स्थौल्यं मेदःकृतं जयति ॥ १ ॥

रस सिन्दूर एक वल्लभर लेकर शहद से मिलाकर चाटें और ऊपर से कुछ २ गरम जल में शहद मिलाकर पिलावें तो मेद से हुई २ स्थूलता नष्ट होती है ॥ १ ॥

अथ त्रिमूर्तिरसः—सूतगन्धमयोभस्म समं संमेल्य भावयेत् ।
निर्गुण्डीपत्रतोयेन मुसलीकन्दवारिणा ॥ १ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लोहभस्म प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर पहले कज्जली करे । फिर लोहभस्म मिलाकर खरल करे । फिर निर्गुण्डी के पत्तों के स्वरस से

एक दिन भावित करें, फिर मूसलीकंद के स्वरस से भावित करें ॥ १ ॥

ततः सिद्धममुं माषमात्रं रसमनुत्तमम्।
लोध्रक्षौद्रेण चाश्नीयाच्चूर्णमेषां पिचून्मितम् ॥ २ ॥

फिर इस को एक माषाभर लेकर लोध्र के चूर्ण और शहद से मिलाकर खावें ॥ २ ॥

षट्कटुत्रिफला पञ्चलवणावल्गुजस्य तत्।
मेदःशोथाग्निमान्द्यामवातश्लेष्मगदप्रणुत् ॥ ३ ॥

तथा पिप्पली, पिप्पलामूल, चव्य, चीता, सोंठ और मिरच, हरड़, बहेड़ा, आंवला, पांचों लवण, सोमराजी के बीज इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर चूर्ण करे। इस चूर्ण को एक पिचु अर्थात् दो तोलाभर उस रस के ऊपर से खावें। तो मेदरोग, शोथ, अग्निमांद्य, आमवात तथा कफजरोग अच्छे होते हैं। (इस रस की मात्रा दो रत्ति दें तथा चूर्ण की ३ माशा लेनी निरापद है) ॥ ३ ॥

अथ वडवाग्निरसः—शुद्धसूतं मृतं ताम्रं तालं बोलं समं समम्।
अर्कक्षीरैर्दिनं मर्द्यं क्षौद्रैर्लेह्यं द्विगुञ्जकम् ॥ १ ॥

शुद्ध पाराभस्म, ताम्रभस्म, शुद्ध हड़ताल, बोल, प्रत्येक द्रव्य समभाग ले। सबको एकत्र खरल करके आक के दूध में एक दिन मर्दन करें। और शहद से मिलाकर दो रत्ति भर इस रस को चाटें ॥ १ ॥

वडवाग्निरसो नाम स्थौल्यं तुन्दं नियच्छति।
पलं क्षौद्रं पलं तोयमनुपानं पिबेत्सदा ॥ २ ॥

यह वडवाग्निरस नाम से प्रसिद्ध है, यह स्थूलता तथा तुन्द अर्थात् पेट का बढ़ जाना इसको नष्ट करता है। इसके साथ अनुपान में एक पल शहद और एक पल पानी दोनों को घोलकर सदा पीना चाहिये ॥ २ ॥ इति वडवाग्निरसः।

अथ पथ्यापथ्यम्—पुराणशालयो मुद्गकुलत्थोद्दालकोद्रवाः।
लेखना बस्तयश्चैव सेव्या मेदस्विना सदा ॥ १ ॥

पुराने शाली चावल, मूंग, कुलथ, बनकोदों, कोदों तथा लेखन द्रव्य वाली बस्तियें, ये सभी बातें मेदस्वी पुरुष को सदा सेवन करनी चाहियें ॥ १ ॥

श्रमचिन्ताव्यवायाध्वक्षौद्रजागरणप्रियः।
हन्त्यवश्यमतिस्थौल्यं यवश्यामाकभोजनः ॥ २ ॥

श्रम करना, चिन्ता करना, मैथुन करना, मार्ग चलना, शहद खाना, अधिक जागना, जौ तथा सांवा का भोजन करने से अति स्थूलता अवश्य नष्ट होती है २

अस्वप्नं च व्यवायं च व्यायामं चिन्तनानि च।
स्थौल्यमिच्छन्परित्यक्तुं क्रमेणैवं प्रवर्धयेत् ॥ ३ ॥

नींद कम लेना, मैथुन करना, व्यायाम करना, चिन्ता करना इन सब बातों

को क्रमशः बढ़ाना चाहिये इससे स्थूलता नष्ट होती है ॥ ३ ॥ इति पथ्यापथ्यम् । इति मेदोरोगचिकित्सा ॥

इति हरिद्वारीय गुरुकुलविश्वविद्यालयस्नातकेन श्रीविद्याधरविद्यालंकारेण लवपुरीय श्रीमद्दयानन्दायुर्वेदमहाविद्यालयीय वैद्यकविराजोपाधिधारिणा राजयक्ष्मचिकित्सकेन जलचिकित्साविशेषज्ञेन रसेन्द्रसारसंग्रहटीकाकर्त्रा कृतायां योगरत्नाकरस्य रत्नगर्भानाम्निटीकायां मेदोरोगप्रकरणं समाप्तम् ।

अथोदरनिदानप्रारम्भः ।

रोगाः सर्वेऽपि मन्देऽग्नौ सुतरामुदराणि तु ।
अजीर्णान्मलिनैश्चान्नैर्जायन्ते मलसंचयात् ॥ १ ॥

सभी रोग मन्दाग्नि से उत्पन्न होते हैं । विशेष करके पेट के रोग तो मन्दाग्नि से होते है । तथा अजीर्ण से, मलीन अन्नों के खाने से तथा मल के संचय से उदररोग होते हैं ॥ १ ॥

तन्त्रान्तरे—**अतिसंचितदोषाणां पापकर्म च कुर्वताम् ।**
उदराण्युपजायन्ते मन्दाग्नीनां विशेषतः ॥ २ ॥

दोषों के अत्यन्त संचित हो जाने से, पापकर्म करने से, मन्दाग्नि वालों को प्रायः उदररोग हो जाते हैं ॥ २ ॥

संप्राप्तिमाह—**रुद्ध्वा स्वेदाम्बुवाहीनि दोषाः स्रोतांसि संचिताः ।**
प्राणाग्न्यपानान्संदूष्य जनयन्त्युदरं नृणाम् ॥ ३ ॥

कफादि दोष संचित होकर स्वेद तथा अम्बुवाही वा रसवाही स्रोतों को रोककर प्राण, अग्नि तथा अपानवायु को संदूषित करके उदररोग को करते हैं ॥ ३ ॥

सुश्रुते—**तत्पूर्वरूपं बलवर्णकाङ्क्षा वलीविनाशो जठरेऽपि राज्यः ।**
जीर्णापरिज्ञानविदाहवत्यो बस्तौ रुजः पादगतश्च शोफः ॥ ४ ॥

उदररोग के पूर्वरूप लिखते हैं—बल तथा वर्ण की आकांक्षा रहनी, वली अर्थात् पेट की स्वाभाविक त्रिवी का नाश हो जाना अर्थात् स्पष्ट न दीखना, पेट पर लकीरें पड़ जानी । जीर्णापरिज्ञान अर्थात् अन्न के पचने का ज्ञान न होना तथा विदाह होना, ये दोनों बातें जिस वस्ति की पीड़ाओं में होती हैं । ऐसी बस्ति की पीड़ायें भी उदररोग के पूर्व होती हैं तथा पैरों पर शोथ हो जाता है ॥ ४ ॥

अथ उदरस्य सामान्यलक्षणमाह—

आध्मानं गमनेऽशक्तिर्दौर्बल्यं दुर्बलाग्निता ।
शोफः सदनमङ्गानां सङ्गो वातपुरीषयोः ॥ ५ ॥

उदर में आध्मान होना, चलने में अशक्ति, दुर्बलता, अग्नि की मन्दता होनी सूजन होनी, सारे अंगों का सन्न होना, अधोवात तथा मल का रुक जाना ॥ ५ ॥

दाहस्तन्द्रा च सर्वेषु जठरेषु भवन्ति हि ॥

दाह होना, तन्द्रा होना, ये लक्षण सभी उदररोगों में होते हैं ॥ ६ ॥

निर्जलोदरलक्षणं—सर्वं त्वतोयमरुणमशोफं नातिभारिकं।
गवाक्षितं शिराजालैः सदा गुडगुडायते ॥ ६ ॥

पेट में कहीं पानी न हो, गुलाबी लाल सा रंग हो, पेट सूजा न हो, पेट अति भारी न हो, शिराओं के जाल गवाक्षित अर्थात् विरचित हों या दीखते हों तथा सदा पेट गुगुड़ाता रहे। ये लक्षण निर्जल उदर के होते हैं॥ ६ ॥

उदराणां संख्या—पृथग्दोषैः समस्तैश्च प्लीहबद्धक्षतोदकैः।
संभवन्त्युदराण्यष्टौ तेषां लिङ्गं पृथक् शृणु ॥ ७॥

वात, पित्त, कफ से तीन उदर, सन्निपात से एक उदर, तथा प्लीहोदर, बद्धोदर, क्षतोदर, उदकोदर या जलोदर। इस प्रकार से सब मिलाकर आठ प्रकार के उदररोग होते हैं। उनके लक्षण पृथक् २ आगे लिखते हैं॥७॥

अथ वातोदरलक्षणमाह—तत्र वातोदरे शोफः पाणिपन्नाभिकुक्षिषु।
कुक्षिपार्श्वोदरकटीपृष्ठरुक्पर्वभेदनम् ॥ ८ ॥

वातोदर में हाथ, पैर, नाभि तथा कुक्षि में शोथ होता है। कुक्षि, पार्श्वद्वय, उदर, कटि तथा पीठ में पीड़ा होती है तथा पर्वभेद होता हैं॥ ८ ॥

शुष्ककासोऽङ्गमर्दोऽधो गुरुता मलसंग्रहः।
श्यावारुणत्वगादित्वमकस्माद्वृद्धिह्रासवत् ॥ ९ ॥

सूखी खांसी होती है, अंग टूटते हैं नाभी के नीचे का भाग भारी रहता है, मल रुका रहता है। श्याव तथा लाल रंग की त्वचा और नख आदि हो जाते है। और अकस्मात् पेट फूलता है तथा कम हो जाता है॥ ९ ॥

सतोदभेदमुदरं तनुकृष्णशिराततम्।
आध्मातदृतिवच्छब्दमाहतं प्रकरोति च।
वायुश्चात्र सरुक्शब्दो विचरेत्सर्वतोगतिः ॥ १० ॥

पेट तोद तथा भेदयुक्त रहता है। पेट पतला, काली शिराओं से व्याप्त होता है। और टकोरने से बजाए हुए ढोल के समान शब्द करता है। और इस पेट में पीड़ा करता हुआ और शब्द करता हुआ वायु सर्वत्र विचरता रहता है॥१०॥

अथ पैत्तिकमाह—पित्तोदरे ज्वरो मूर्च्छा दाहस्तृट् कटुकास्यता।
भ्रमोऽतिसारः पीतत्वं त्वगादावुदरं हरित् ॥ ११ ॥

पित्तोदर रोग में ज्वर होता है, मूर्च्छा होती है, दाह होता है, प्यास लगती है तथा मुंह का स्वाद कटुक अथवा (पुस्तकान्तरे तिक्तम्) कड़वा होता है। भ्रम होता है, अतिसार होता है, त्वचा, नेत्र नखादि पीले होते हैं, पेट का रंग हरा हो जाता है॥ ११ ॥

पीतताम्रशिरानद्धं सस्वेदं सोष्म दह्यते।
धूमायते मृदुस्पर्शं क्षिप्रपाकं प्रदूयते ॥ १२ ॥

पीले तांबे के समान रंग की लाल शिराओं से पेट तना हुआ रहता है, स्वेद आता है, पेट गरम रहता है तथा जलता है। धूयें के समान ऊपर को मुंह से डकार निकलता हैं, पेट को स्पर्श करें तो मृदु लगता है, यह शीघ्र पक जाता है तथा इसमें व्यथा होती है ॥ १२ ॥

अथ श्लैष्मिकमाह—श्लेष्मोदरेऽङ्गसदनं स्वापः श्वयथुगौरवम्।
निद्रोत्क्लेशोऽरुचिः श्वासः कासः शुक्लत्वगादिता१३॥

कफोदर में अङ्गसाद होता है तथा अंग सो जाते हैं, सूजन हो जाती है, अंग भारी होते हैं। निद्रा होती है, उत्क्लेश होता है, अरुचिं होती है, श्वास तथा कास होता है, त्वचा श्वेतरंग की होजाती है ॥ १३ ॥

उदरं स्तिमितं स्निग्धं शुक्लराजीततं महत्।
चिराभिवृद्धि कठिनं शीतस्पर्शं गुरु स्थिरम् ॥ १४ ॥

पेट भीगे कपड़े से लिपटा हुआ सा अथवा निश्चल होता है, स्निग्ध होता है, श्वेत लकीरों से भरा हुआ होता है तथा बड़ा हो जाता है। पेट देर में बढ़ता है, कठिन होता है, शीतल स्पर्श होता है। गुरु तथा स्थिर होता है ॥ २४ ॥

अथ सांनिपातकमाह—

स्त्रियोऽन्नपानं नखरोममूत्रविडार्तवैर्युक्तमसाधुवृत्ताः।
यस्मै प्रयच्छन्त्यरयो गरांश्च दुष्टाम्बुदूषीविषसेवनाद्वा ॥ १५ ॥

अविवेकिनी स्त्रियें (तथा अविवेकी लोग) अपने सौभाग्य की इच्छा से कार्य अकार्य का विचार न करके अपने नख, रोम, मूत्र, मल तथा आर्तव से युक्त अन्न और पान को पति आदि जिस मनुष्य को खिलाती हैं। तथा शत्रु लोग जिन को गर अर्थात् संयोगज विष खिला देते हैं। अथवा विष युक्त प्राणी से या तृणपत्ते आदि के सड़ने से दूषित हुए २ पानी के सेवन से तथा दूषीविष को जो सेवन करते हैं॥

तेनाऽऽशु रक्तं कुपिताश्च दोषाः कुर्युः सुघोरं जठरं त्रिलिंगम्।
तच्छीतवातातपदुर्दिनेषु विशेषतः कुप्यति दह्यते च।
स चाऽऽतुरो मूर्च्छति संप्रसक्तं पाण्डुः कृशः शुष्यति तृष्णया च १६

उनका इन कारणों से रक्त शीघ्र ही दूषित हो जाता है। और कुपित हुए २ त्रिदोष सुघोर सन्निपात के लक्षणों से युक्त पेट को कर देते हैं। वह पेट शीत, वायु तथा धूप में तथा बादल वाले दिन में विशेष करके कुपित हो जाता है तथा जलता है। वह रोगी निरन्तर मूर्च्छित हो जाता है तथा पाण्डु वर्ण का होजाता है, उसका शरीर कृश हो जाता है, तृष्णा से मुंह सूखता है ॥ १६ ॥

दूष्योदरं कीर्तितमेतदेव प्लीहोदरं कीर्तयतो निबोध ॥

इसी को सन्निपातोदर वा दूष्योदर कहते हैं (क्योंकि रक्तदूष्य है और इस

दूष्य को दूषित करके जो उदररोग हुआ हो उसे दूष्योदर कहते हैं। अथवा " परस्परं दोषयन्तीति दोषा एव दूष्याः " परस्पर दूषित करने से दोष ही दूष्य कहाते हैं उन से किया हुआ उदररोग दूष्योदर कहाता है)। आगे प्लीहोदर लिखेंगे॥

प्लीहोदरयकृदुदरलक्षणं—

विदाह्यभिष्यन्दिरतस्य जन्तोः प्रदुष्टमत्यर्थमसृक्कफश्च ॥१७॥

विदाही तथा अभिष्यन्दी पदार्थों के सेवन में लीन हुए २ पुरुष के रक्त तथा कफ अत्यन्त दुष्ट हो जाते हैं ॥ १७ ॥

प्लीहाभिवृद्धिं कुरुतः प्रवृद्धौ प्लीहोत्थमेतज्जठरं वदन्ति।
तद्वामपार्श्वे परिवृद्धिमेति विशेषतः सीदति चाऽऽतुरोऽत्र १८

उनसे प्लीहा बढ़ जाती है। इस रोग को प्लीहोदर कहते। वह प्लीहा बायें पार्श्व में बढ़ जाती हैं और उससे बायीं ओर का पेट भी बढ़ जाता है इससे रोगी हर समय दुखी होता रहता है ॥ १८ ॥

मन्दज्वराग्निः कफपित्तलिङ्गैरुपद्रुतः क्षीणबलोऽतिपाण्डुः।
सव्यान्यपार्श्वे यकृति प्रदुष्टे ज्ञेयं यकृद्दाल्युदरं तदेव ॥ १९ ॥

इसमें मन्द २ ज्वर हो, मन्द अग्नि हो, कफ तथा पित्त के सब लक्षण दीखते हों, रोगी क्षीण बल तथा अति पाण्डु वर्ण का हो जाये। साथ ही दायीं ओर यकृत् या जिगर प्रदुष्ट हो जाय तो इसे ही यकृद्दाल्युदर कहते हैं ॥ १९ ॥

अथ कफजः प्लीहोदर—**प्लीहा निर्वेदनः श्वेतकठिनः स्थूल एव च।**
महापरिग्रहः शीतश्लेष्मसंभव इष्यते ॥ २० ॥

जिस रोगी की प्लीहा या तिल्ली में पीड़ा न होती हो, श्वेत तथा कठिन हो गई हो, और स्थूल हो, अत्यन्त बढ़ गई हो, तो वह प्लीहा शीत तथा कफ से हुई २ होती है ॥ २० ॥

अथ पित्तजः प्लीहोदरः—**सज्वरः सपिपासश्च स्वेदनस्तीव्रवेदनः।**
पीतगात्रो विशेषेण प्लीहा पैत्तिक उच्यते ॥ २१ ॥

जिसमें ज्वर हो, प्यास हो, स्वेद आता हो, तीव्र वेदनायें हों, शरीर के अंग विशेष करके पीले हो गये हों, उसे पैत्तिक प्लीहा समझो ॥ २१ ॥

अथ वातिकः प्लीहोदरः—**नित्यमानद्धकोष्ठश्च नित्योदावर्तपीडितः।**
वेदनाभिः परीतश्च प्लीहा वातिक उच्यते ॥२२॥

जिसके कोष्ठ में नित्य आनाह रहे, नित्य उदावर्त से पीड़ित हो। तथा पीड़ाओं से युक्त हो उसे वातिक प्लीहा कहते हैं ॥ २२ ॥

अथ रक्तजः प्लीहोदरः—**क्लमोऽतिदाहः संमोहो वैवर्ण्यं गात्रगौरवम्।**
रक्तोदरं भ्रमो मूर्च्छा ज्ञेयं रक्तजलक्षणम्।
त्रयाणामपि रूपाणि प्लीह्न्यसाध्ये भवन्ति हि ॥२३॥

क्लान्ति होना, अतिदाह होना, सम्मोह होना, विवर्णता, गात्रों में गौरव होना उदर लाल रंग का रहना, भ्रम, मूर्च्छा होना ये सभी लक्षण रक्तज प्लीहोदर के हैं। ये तीनों चारों लक्षण प्लीहा के असाध्य होने पर होते हैं ॥ २३ ॥

अथ तत्र दोषसंबन्धमाह—उदावर्तरुजानाहैर्मोहतृड्दहनज्वरैः।
गौरवारुचिकाठिन्यैर्विद्यात्तत्र मलान्क्रमात् ॥२४॥

यदि प्लीहोदर में उदावर्त्त, पीड़ा तथा पेट में आनाह रहे तो वातिकप्लीहा समझो। यदि मोह, प्यास, दाह तथा ज्वर हो तो पैत्तिक प्लीहा समझो। और गौरव, अरुचि, कठिनता हो तो कफजप्लीहा समझो ॥ २४ ॥

अथ बद्धगुदोदरमाह—

यस्यान्त्रमन्नैरुपलेपिभिर्वा बालाश्मभिर्वा पिहितं यथावत्।
संचीयते तस्य मलः सदोषः शनैः शनैः संकरवच्च नाड्याम् ॥२५॥

जिस की आंत अन्न से अथवा पिच्छिल पदार्थों से, बालों से वा पत्थरों से रुक गई हो। उसका मल धीरे २ दोषों से युक्त होकर बड़ी आंत मे इकठ्ठा हो जाता है ॥ २५ ॥

निरुध्यते तस्य गुदे पुरीषं निरेति कृच्छ्रादपि चाल्पमल्पम्।
हृन्नाभिमध्ये परिवृद्धिमेति तस्योदरं बद्धगुदं वदन्ति ॥ २६ ॥

वह मल गुदा में रुक जाता है और बहुत कठिनता से थोड़ा २ निकलता है। तथा मल रुक जाने से हृदय तथा नाभि के मध्य में वह बढ़ता जाता है। उसे बद्धगुदोदर कहते हैं ॥ २६ ॥

एतद्बद्धोदरं तेन स्युर्दाहज्वरतृड्भ्रमाः।
कासश्वासोरुसदनं रुग्हृन्नाभिशिरस्सु च ॥ २७ ॥

इस बद्धगुदोदर में दाह, ज्वर, प्यास तथा भ्रम होता है। कास, श्वास, ऊरु का सन्न होना, तथा हृदय, नाभि और सिर में पीड़ा होती है ॥ २७ ॥

मलसङ्गोऽरुचिश्छर्दिरुदरं मूढमारुतम्।
स्थिरं नीलारुणशिरारोमराजिविराजितम्।
नाभेरुपरि च प्रायो गोपुच्छाकृति जायते ॥ २८ ॥

मल रुक जाता है। अरुचि होती है, छर्दि होती है, उदर में वायु मूढ होकर घूमता है। पेट स्थिर होता है। नीली, लाल शिराओं से तथा रोमों की लकीरों से घिर जाता है। नाभि के ऊपर प्रायः गौ की पूंछ की आकृति के समान आकृति हो जाती है ॥ २८ ॥

अथ क्षतोदरमाह—

शल्यं तथाऽन्नोपहितं यदन्त्रं भुक्तं भिनत्त्यागतमन्यथा वा।
तस्मात्स्रुतोऽन्त्रात्सलिलप्रकाशः स्रावः स्रवेद्वै गुदस्तु भूयः २९॥

शल्य अर्थात् कांटें, हड्डी काष्ठादि से युक्त हुआ २ अन्न खाने पर पाकाशय से विलोम अर्थात् टेढ़ा मेढ़ा होकर जब आंतों में जाता है (सीधा जावे तो आंतों की हानि नहीं होती है) तब आंतों को तोड़ देता है। उस आंत में से पानी के समान स्राव निकल कर गुदा के रास्ते से वार २ बाहिर होता है ॥२६॥

नाभेरधश्चोदरमेति वृद्धिं निस्तुद्यतेऽतीव विदाल्यते च।
एतत्परिस्राव्युदरं प्रदिष्टं दकोदरं कीर्तयतो निबोध ॥ ३० ॥

नाभि से नीचे उदर बढ़ता है, और अत्यन्त पीड़ा होती है तथा फटता सा है। इसे परिस्रावीउदर या क्षतोदर कहते हैं। आगे दकोदर को लिखेंगे ॥ ३० ॥

अथ दकोदरमाह—

यः स्नेहपीतोऽप्यनुवासितो वा वान्तो विरिक्तोऽप्यथवा निरूढः।
पिबेज्जलं शीतलमाशु तस्य स्रोतांसि दुष्यन्ति हि तद्वहानि ॥३१॥

जो स्नेहपान कर के, अनुवासन लेकर, वमन लेकर, विरेचन लेकर, अथवा निरूहबस्ति लेकर, शीघ्र ही शीतल जल पी लेता है उस के जलवह स्रोत दूषित हो जाते हैं।। ३१ ॥

स्नेहोपलिप्तेष्वथ वापि तेषु दकोदरं पूर्ववदभ्युपैति।
स्निग्धं महत्तत्परिवृत्तनाभि समाततं पूर्णमिवाम्बुना च ॥ ३२ ॥

उन जलवह स्रोतों के स्नेह से उपलिप्त होने पर क्षतोदर के समान ही जलोदर हो जाता है अर्थात् नाभि के नीचे के भाग में पेट बढ़ जाता है, गुदा में स्रव होता है। वह पेट स्निग्ध होता है, महान होता है तथा परिवृत्तनाभि अर्थात् नाभि को उठाकर ऊंचा गोलाकार कर देता है। (समाततं) वेदनाओं से विस्तीर्ण हुआ २ सा पेट प्रतीत होता है। तथा पेट जल से भरा हुआ सा मालूम होता है ॥ ३२ ॥

यथा दृतिः क्षुभ्यति कम्पते च शब्दायते चापि दकोदरं तत् ॥३३॥

जैसे ढोल क्षुब्ध होता तथा कांपता है तथा शब्द करता है वैसे ही जलोदर में पेट बजाने से होता है। इन सब लक्षणों से जलोदर का निश्चय करना चाहिये ॥ ३३ ॥

अथ साध्यासाध्यत्वमाह—**जन्मनैवोदरं सर्वं प्रायः कृच्छ्रतमं मतम्।**
बलिनस्तदजाताम्बु यत्नात्साध्यं नवोत्थितम् ॥ ३४ ॥

जन्म दिन से ही प्रायः उदररोग कष्टसाध्य होते हैं। यदि रोगी बलवान हो पेट में पानी उत्पन्न न हुआ हो, नया ही रोग हो तो यत्न करने से साध्य होता है३४

अशोफमरुणाभासं सशब्दं नातिभारिकम्।
सदा गुडगुडायुक्तं शिराजालगवाक्षितम् ॥ ३५ ॥

पेट में सूजन न हो, पेट की आभा लाल रंग की हो, शब्द करता हो, अतिभारी न हो, सदा गुड़गुड़ करता हो, शिराओं के जाल से विराचित हो ॥ ३५ ॥

नाभिं विष्टभ्य वायुस्तु वेगं कृत्वा प्रणश्यति।
हृद्वङ्क्षणकटीनाभिगुदं प्रत्येकशूलिनः॥ ३६॥

नाभि को विस्तब्ध करके वायु वेग करे और नष्ट हो जाये। और हृदय, वंक्षण कटी, नाभि, गुदा इन में से प्रत्येक स्थान पर शूल होवे॥ ३६॥

कर्कशं सृजते वातं नातिमन्दे च पावके।
लोलस्यापि[1] रसे वाऽल्पे मूत्रेऽल्पे संहते विशि॥ ३७॥

(कर्कशं इति वेगवन्तं) पेट वेगवाली वायु को निकाले। और अग्नि अति मन्द न हो, पेट चंचल होने पर भी उसमें रसकाया जल का अंश कम हो, (लाला से मुंह बिरस हो रहा हो सुश्रुत) मूत्र थोड़ा आता हो, मल रुका हो॥३७॥ ऐसे लक्षणोंसे युक्त रोगी को समझो कि अजातोदक है अर्थात् इस के पेट में पानी नहीं है॥

अजातोदकमित्येतैर्युक्तं विज्ञाय लक्षणैः।
कुक्षेर्वृद्धिश्चातिमात्रं शिरान्तर्धानमेव च।
दकपूर्णदृतिक्षोभस्पर्शौ जातोदकं भवेत्॥ ३८॥

और जिसकी कुक्षि अतिमात्र बढ़ गई हो, जिसकी शिरायें अन्तर्धान हो गई या छिप गई हो, पानीसे भरे हुए ढोल के समान पेट हिलता हो तथा स्पर्शमें प्रतीत होता हो उसे जातोदक कहते हैं अर्थात् उसमें जल भर गया है ऐसा समझना चाहिये ३८

अथ विशेषणासाध्यत्वमाह—

पक्षाद्बद्धगुदं तूर्ध्वं सर्वं जातोदकं तथा।
प्रायो भवत्यभावाय छिद्रान्त्रमुदरं नृणाम्॥ ३९॥

एक पक्ष के बाद बद्धगुदोदर, सभी जातोदकउदर अर्थात् सभी जलोदर, तथा छिद्रान्त्रउदर ये प्रायः असाध्य तथा मारक होते हैं॥ ३९॥

अथ पुनरप्यसाध्यत्वमाह—शूनाक्षं कुटिलोपस्थमुपक्लिन्नतनुत्वचम्।
बलशोणितमांसाग्निपरिक्षीणं च वर्जयेत्॥४०॥

जिसकी आंखें सूजी हों, मूत्रेन्द्रिय टेढी हो गई हो, जिसकी पतली त्वचा गीली हो। बल, खून, मांस तथा अग्नि जिसकी क्षीण हो गई हो उसे असाध्य समझे॥ ४०॥

पार्श्वभङ्गान्नविद्वेषशोफातीसारपीडितम्।
विरिक्तं चाप्युदरिणं पूर्यमाणं विवर्जयेत्॥ ४१॥

जिसके दोनों पसवाड़े टूट गये हों, जो अन्न से द्वेष करता हो, जिसे शोथ हो और अतीसार होता हो विरेचन देने पर भी जिसका पेट पूरा भरा हुआ प्रतीत हो उसे असाध्य समझो॥ ४१॥ इत्युदर निदानम्॥

अथ उदराचिकित्सा।

अथ तत्राष्टावुदराणि—पृथग्दोषैः समस्तैश्च प्लीहबद्धक्षतोदकैः॥ १॥

---

१ लालया विरसं चास्यं (चरकं)।

वात, पित्त, कफ, सन्निपात, प्लीहा, बद्ध, क्षत तथा उदक या जल इनसे आठ प्रकार का उदररोग होता है ॥ १ ॥

तत्र पृथग्दोषैर्वातपित्तकफैः, संनिपातेनैकम्।
प्लीहोदरं बद्धोदरं क्षतोदरं जलोदरमिति संज्ञा भवन्ति।
तेष्वसाध्यं बद्धगुदं परिस्रावि च।
षडवशिष्टानि कृच्छ्रसाध्यानि।
सर्वाण्येव च प्रत्याख्यायोपक्रमेत्।
तेष्वाद्यश्चतुर्वर्गो भेषजसाध्यः।
उत्तरः शस्त्रसाध्यः। कालप्रकर्षात्सर्वाण्येव
शस्त्रसाध्यानि भवन्ति वर्जयितव्यानि वा ॥

उनमें से पृथक् २ दोषों के उदर अर्थात् वातोदर, पित्तोदर, कफोदर कहाते हैं और शेष सन्निपातोदर, प्लीहोदर, बद्धोदर, क्षतोदर तथा जलोदर कहाते हैं। ये इनकी संज्ञायें कहाती हैं। इन आठों में से बद्धगुदोदर तथा परिस्रावी असाध्य हैं। शेष छः उदर कष्टसाध्य हैं। सभी उदर रोगों को अचिकित्स्य कहकर चिकित्सा करे। इन में से आदि के चारों वातोदर, पित्तोदर, कफोदर तथा सन्निपातोदर की चिकित्सा औषधों से करे। ये चारों औषधों से अच्छे हो जाते हैं और शेष चारों अर्थात् प्लीहोदर, बद्धोदर, क्षतोदर तथा जलोदर शस्त्र साध्य होते हैं। पुराना रोग होने पर सभी उदररोग शस्त्र साध्य हो जाते हैं। अथवा असाध्य हो जाते हैं ॥ २ ॥
इति सुश्रुतात्।

अथ वातोदरचिकित्सामाह—उपक्रमेद्भिषग्दोषबलकालविशेषवित्।
स्थिरादिसर्पिषः पानं स्नेहं स्वेदं विरेचनम् ॥१॥

विद्वान वैद्य वातादि दोष, रोगी तथा रोग का बल, कालादि का विशेष ध्यान रख के "स्थिरादि सर्पिः" का पान करावे, स्नेह तथा स्वेद देवे और विरेचन देवे ॥ १ ॥

वेष्टनं वाससा ग्लानौ शाल्वणेनोपनाहनम्।
पेया यूषरसान्नं च योज्यं वातोदरे क्रमात् ॥ २ ॥

वातोदर में क्रमशः पेट को कपड़े से बांध रखे, शाल्वणस्वेद के पदार्थों से उपनाह या टकोर करे, पेया, यूष तथा मांसरस तथा अन्न का उपयोग करे ॥२॥

अथैरण्डतैलादियोगः—

एरण्डतैलं दशमूलमिश्रं गोमूत्रसयुक्तं त्रिफलारजो वा।
निहन्ति वातोदरशोथशूलं क्वाथः समूत्रो दशमूलजश्च ॥ १ ॥

दशमूल के क्वाथ में एरण्ड का तेल मिलाकर पिलाने से। अथवा त्रिफला का चूर्ण गोमूत्र से मिलाकर पिलाने से। अथवा दशमूल का क्वाथ गोमूत्र से मिला

कर पिलाने से। इन सब में से कोई एक प्रयोग सेवन करें तो वातोदर, शोथ तथा शूल इन सब का नाश होता है ॥ १ ॥

अथ दशमूलादियोगः—**दशमूलकषायेण क्षीरवृत्तिः शिलाजतु।**
सद्यो वातोदरी क्षीरमौष्ट्रमाजं च केवलम् ॥१॥

दशमूल के कषाय में शिलाजीत मिलावे और केवल दूध पीवे तो शीघ्र हीं वातोदर अच्छा होता है। अथवा ऊंट का या बकरी का दूध पीनें से भी वातोदर अच्छा होता है ॥ १ ॥

अथ कुष्ठादिचूर्णम्—**कुष्ठं दन्ती यवक्षारं व्योषं त्रिलवणं वचाम्।**
अजाजीं दीप्यकं हिङ्गुं स्वर्जिकां चव्यचित्रके।
शुण्ठीं चोष्णाम्भसा पीत्वा वातोदररुजापहाम् ॥१॥

कूठ, दन्तीमूल, यवक्षार, सोंठ, मिरच, पीपल, सेंधालवण, सौंचल लवण विड्लवण, बच, जीरा, अजवायन, हींग, सज्जी, चव्य, चीता, सोंठ इन सब को समभाग लेकर चूर्ण कर के गरम जल से पीने से वातोदर की पीड़ा शान्त हो जाती है ॥ १ ॥

अथ वृन्दात्सामुद्राद्यं चूर्णम्—

सामुद्रसौवर्चलसैन्धवानि क्षारो यवानामजमोदभागः।
सपिप्पलीचित्रकशृङ्गबेरं हिङ्गुं विडङ्गं च समानि कुर्यात् ॥१॥

सामुद्रलवण, सौंचलनमक, सेंधालवण, यवक्षार, अजबायन, पिप्पली, चीता, सोंठ, हींग, वायविडंग इन सब को समभाग लेकर चूर्ण करे ॥ १ ॥

एतानि चूर्णानि घृतप्लुतानि भुञ्जीत पूर्वं कवलान्प्रशस्तान्।
वातोदरं गुल्ममजीर्णभुक्तं वातप्रकोपं ग्रहणीं च दुष्टाम् ॥२॥

इस चूर्ण को घी से मिलाकर इसे भोजन से पूर्व उचित मात्रा में खिलावें। इस के खाने से वातोदर, अजीर्ण, खाया हुआ भोजन, गुल्म, वातप्रकोप, दुष्टग्रहणी २

अर्शांसि दुष्टानि च पाण्डुरोगं भगंदरं चापि निहन्ति सद्यः ॥३॥

बिगड़ी हुई सब प्रकार की बवासीरें, पाण्डुरोग, भगन्दर ये सब शीघ्र ही नष्ट होते हैं ॥ ३ ॥

अथ दशमूलाद्यं घृतम्—**दशमूलीकषायेण रास्नानागरदारुभिः।**
पुनर्नवाभ्यां च घृतं सिद्धं वातोदरापहम् ॥ १ ॥

गौ का घी एक सेर लो, दशमूल का क्राथ ४ सेर, रास्ना, सोंठ, देवदारु, श्वेत पुनर्नवा, लाल पुनर्नवा इन में से प्रत्यक द्रव्य चार २ तोले लेकर जल से कल्क करे। फिर घी, कल्क और क्राथ को एकत्र कर घृतपाक करे। इस दशमूलाद्यघृत को सेवन करने से वातोदर दूर होता है ॥ १ ॥ इति वातोदरम् ॥

अथ पित्तोदरम्—**पित्तोदरे च बलिनं पूर्वमेव विरेचयेत्।**
पयसा त्रिवृता कल्केनोरुबूकशृतेन वा ॥ १ ॥

पित्तोदर में रोगी यदि बलवान् हो तो उसे पहले विरेचन देवे। दूध के साथ त्रिवी का कल्क डालकर घी पकावे। एरण्ड के फलों का कल्क एक भाग, घी चार भाग, दूध १६ भाग डालकर घीमात्र पकाले। अथवा सातला, त्रायमाणा, अम्लतास के फल इन तीनों का कल्क, इस कल्क से चौगुना घी और घी से चौगुना दूध डालकर घी पका लेवे। अथवा मधुर गण की औषधों का कल्क, चौगुना घी और घी से चौगुना दूध डालकर घी पकाले। इन में से कोई घी खाने से पित्तोदर में विरेचनादि होकर लाभ होता है ॥ १ ॥

सातलात्रायमाणाभ्यां शृतेनाऽऽरग्वधेन च।
घृतं पित्तोदरे पेयं मधुरौषधसाधितम् ॥ २ ॥

(कुछ आचार्य इस का अर्थ आगे लिखा करते हैं—त्रिवृत, एरण्ड के फल इन दोनों का कल्क कर दूध डालकर घी पकाले। अथवा त्रिवृत्कल्क, सातला, त्रायमाणा, अम्लतास के फल इन के कल्क से दूध डालकर घी पकाले। इस प्रकार से ये केवल दो योग हुए) ॥ २ ॥

स्यात्त्रिवृत्त्रिफलासिद्धं सर्पिष्पानं विशुद्धये।
पृश्निपर्णीबलाव्याघ्रीलाक्षानागरसाधितम्।
क्षीरं पित्तोदरं हन्ति जठरं कतिभिर्दिनैः ॥ ३ ॥

त्रिवृत् तथा त्रिफला से पकाया हुआ घी पित्तोदर में विरेचन के लिये देने से लाभ होता है। पृष्टपर्णी, बला, छोटी कटेली, लाख तथा सोंठ इन से पकाया हुआ दूध पित्तोदर तथा पेट के अन्य पैत्तिक उपद्रवों को नष्ट करता है ॥ ३ ॥

इति पित्तोदरम् ॥

अथ श्लेष्मोदरम्—श्लेष्मोदरिणं तु पिप्पल्यादिसिद्धेन सर्पिषा
स्नेहं पीत्वा स्नुहीक्षीरानुलोम्यत्रिकटुकमूत्रतैल-
मुष्ककादिक्वाथनाऽऽस्थापयेदनुवासयेच्च यव-
किट्टसर्षपामलकबीजैश्चोपनाहयेदुदरम्।
भोजयेच्चैनं त्रिकटुकप्रगाढेन कुलित्थ-
यूषेण पयसा वा स्वेदयेच्चाभीक्ष्णम्।
व्योषयुक्तं कुलित्थाम्बु पयो वा भोजने हितम्।
गोमूत्रारिष्टपानैश्च चूर्णायस्कृतिभिस्तथा।
सक्षीरतैलपानैश्च शमयेत्तत्कफोदरम् ॥ १ ॥

कफोदर वाले रोगी को पिप्पल्यादिगण के क्वाथ से सिद्ध करके घी पिलावें (अथ पिप्पल्यादिगण—पिप्पली, पिप्पलामूल, मरिच, गजपीपल, सोंठ, चीता, चव्य, रेणुका, रास्ना, अजमोदा, सरसों, हींग, भार्गी, पाठा, इन्द्रजौ, जीरा

१. "सर्षपमूलकबीज" इति सुश्रुते

महानीम, मूर्वा, अतीस, कुटकी, वायविडङ्ग) इस प्रकार स्नेहन कर्म के पीछे थोहर के दूध से पकाये हुए घी से अनुलोमन करके, सोंठ, मिरचपीपल, गोमूत्र तथा आस्थापनवर्ग में कहे हुए मुष्ककादि वर्ग के क्वाथ से सिद्ध किये हुए तैल से मिलाकर सबकी आस्थापन बस्ति तथा अनुवासन वस्ति देवे। फिर जौ, सुराबीज या (Yeast), सरसों तथा मूली के बीज (आमलकबीज पाठ अशुद्ध है क्योंकि सुश्रुत में मूलबीज पाठ है और वहीं से यह प्रयोग लिये गये हैं तथा आमलक बीज से मूलक बीज उपनाह में तथा कफनाश करने में श्रेष्ठ है तथा उपयुक्त है) इनको पीसकर पेट को उपनाह देवे। फिर कुलथी के यूष में सोंठ, मिरच, पीपल का चूर्ण अधिक मात्रा में डालकर भोजन के लिये देवे। अथवा दूध पिलावे। तथा कई वार स्वेद देवे। कुलथी का क्वाथ त्रिकुटा से मिलाकर पिलावे, अथवा दूध पिलावे। गोमूत्र पिलाने से, अरिष्ट पिलाने से, चूर्ण खिलाने से, लौहयुक्त औषध देने से, दूध सहित तेल पिलाने से कफोदर को शान्त करे ॥ १ ॥ इति कफोदरम् ॥

अथ दूष्योदरं त्रिलिङ्गमुदरं च—

संनिपातोदरे कार्य एष एव क्रिया विधिः।
हरीतक्यभयाकल्कभावितं मूत्रमम्बुना ॥ १ ॥

सन्निपातज उदर में यही क्रियायें करनी चाहियें। हरड़ सेवन से, हरड़ों के कल्क से भावित गोमूत्र को जल से सेवन करने से अर्थात् गोमूत्र से भावित हरड़ों के कल्क को पानी से सेवन करने से ॥ १ ॥

पीतं सर्वोदरप्लीहमेहार्शःक्रिमिगुल्मनुत्।
सप्तलाशङ्खिनीसिद्धं घृतं चात्र विशोधनम् ॥ २ ॥

सभी प्रकार के उदररोग, प्लीहा, प्रमेह, अर्श, कृमि तथा गुल्मरोग नष्ट होते हैं। सप्तला नाम की थोहर विशेष, तथा यवतिक्ताभेद (सप्तला—चर्मकष्पा, मनसा भेद। शंखिनी—चोरपुष्पी, यवतिक्ता, श्वेतापराजिता) इन दोनों का घी पकावे इस घी को शोधन के लिये देवे ॥ २ ॥

दन्तीद्रवन्तीफलजं तैलं दूष्योदरी पिबेत्।
नागरत्रिफलाप्रस्थं घृतं तैलं तथाऽऽढकम् ॥ ३ ॥

दन्ती तथा द्रवन्ती के फल का तैल दूष्योदर वाले को पिलावे। सोंठ तथा त्रिफला का क्वाथ एक प्रस्थ, घी एक आढक, तेल एक आढक ॥ ३ ॥

मस्तुना साधयित्वा तु पिबेत्सर्वोदरापहम्।
कफमारुतसंभूतं गुल्मं चैव प्रशाम्यति ॥ ४ ॥

दही का पानी घी तथा तेल से चौगुना देवें। सबको मिलाकर पाक करे। इस घी तथा तेल मिले हुए स्नेह को पीने से सभी प्रकार के उदररोग शान्त

होते हैं। कफ तथा वात से उत्पन्न हुए २ गुल्म रोगों को भी यह शान्त करता है ॥ ४ ॥ इति दूष्योदरं त्रिलिङ्गमुदरञ्च।

अथ प्लीहोदरयकृदुदरयोश्चिकित्सा।

स्नेहस्वेदप्रकारादि विधेयं प्लीहरोगिणाम्।
वामबाहौ च मोक्तव्या कूर्पराभ्यन्तरे शिरा ॥ १ ॥

प्लीहा रोगियों को स्नेह तथा स्वेद देवे। बांई भुजा की कोहनी के अन्दर की शिरा खोलकर रक्त निकलवा देना चाहिये ॥ १ ॥

विध्येत्प्लीहविनाशाय यकृन्नाशाय दक्षिणे।
मणिबन्धे समुत्पन्नवामाङ्गुष्ठसमीरिताम्।
दहेच्छिरां शरेणाऽऽशु वैद्यः प्लीहप्रशान्तये ॥ २ ॥

यकृत् बढ़ गया हो तो दाईं भुजा की कोहनी के बीच की शिरा खोलकर रक्त निकलवा देवे। मणि बन्ध अर्थात् पहुंचे पर बांये अंगूठे से आई हुई जो शिरा हो उसको शर नामक लोहे के यंत्र से जला देवे इससे प्लीहा शीघ्र ही शान्त होती है ॥ २ ॥

अथ शाल्मलिपुष्पक्वाथः—सुस्विन्नं शाल्मलीपुष्पं निशापर्युषितं नरः।
राजिकाचूर्णसंयुक्तं दद्यात्प्लीहोपशान्तये ॥१॥

खूब स्विन्न किये हुए सीमल के फूल को जल में डालकर रात भर पड़ा रहने दे। प्रातःकाल उस पानी में राई का चूर्ण डालकर पिलावे तो प्लीहा शान्त होती है१

अथ शरपुङ्खामूलकल्कः—

शरपुङ्खामूलकल्कः पीतस्तक्रेण नाशयत्यचिरात्।
बहुतरकालसमुत्थं प्लीहानं रूढमवगाढम् ॥ १ ॥

शरफोंका की जड़ का कल्क। तक्र से मिलाकर पिलाया जाये तो बहुत देर से हुई २ प्लीहा को तथा बहुत गहरी जड़ पकड़ी हुई प्लीहा को भी शीघ्र नष्ट करता है ॥ १ ॥

अथ लवणादितक्रम्—लवणं रजनी राजी प्रत्येकं पलपञ्चकम्।
चूर्णितं निक्षिपेद्भाण्डे शततक्रफलान्विते ॥ १ ॥

सेंधानमक, हल्दी, राई प्रत्येक पांच पल लेकर चूर्ण करे। इसमें सौपल तक्र डालकर एक भाण्ड में रखे॥ १ ॥

त्रिदिनं मुद्रितं रक्षेत्पश्चात्पञ्चपलं तदा।
प्लीहानं नाशयेत्पीत्वा त्रिःसप्ताहं न संशयः ॥ २ ॥

फिर तीन दिन घड़ा बन्द करके रखें। फिर पांच पल पीने को दें। तो २१ दिन पीने से प्लीहा शान्त होती है इसमें संशय नहीं ॥ २ ॥

अथ शङ्खनाभिचूर्णम्—

सुपक्वजम्बीररसेन शङ्खनाभीरजः पीतमवश्यमेव।

कर्षप्रमाणं शमयेदवश्यं प्लीहामयं कूर्मसमानमाशु ॥ १॥

पके हुए जम्बीरी नीबू के स्वरस में शंखनाभि का चूर्ण अर्थात् भस्म मिलाकर एक कर्ष पीने से कछुवे के समान बढ़ी हुई प्लीहा भी शीघ्र शान्त होती है १

अथ यवान्यादिचूर्णम्—

यवानिकाचित्रकयावशूकषड्ग्रन्थदन्तीमगधोद्भवानाम्।
प्लीहानमेतद्विनिहन्ति चूर्णमुष्णाम्बुना मस्तुसुरासवैर्वा ॥१॥

अजवायन, चीता, यवक्षार, पिप्पलामूल, दन्तीमूल, पिप्पली इन सबको समभाग लेकर चूर्ण बनावे इस चूर्ण को गरम पानी, दही का पानी, सुरा तथा आसव इन में से किसी एक से देने पर प्लीहा शान्त होती है ॥ १॥

अथ कुष्ठादिचूर्णम्—कुष्ठं वचां शृङ्गबेरं चित्रकं कौटजं फलम्।
पाठा चैवाजमोदा च पिप्पल्यः समचूर्णिताः ॥ १॥

कूठ, वच, सोंठ, चीता, इन्द्रजौ, पाठा, अजवायन, पिप्पली इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर चूर्ण करे ॥ १॥

ततो विडालपदकं पिबेदुष्णेन वारिणा।
प्लीहोदरमुदावर्तं सर्वमेतेन शाम्यति ॥ २॥

इस चूर्ण को एक कर्ष लेकर गरम जल से पीवें तो प्लीहोदर उदावर्त आदि इस से शान्त होते हैं ॥ २॥

अथ लघुहिङ्ग्वादिचूर्णम्—हिङ्गु त्रिकटुकं कुष्ठं यवक्षारोऽथ सैन्धवम्।
मातुलुङ्गरसेनैव प्लीहशूलहरं परम् ॥ १॥

हींग, सोंठ, मिरच, पीपल, कूठ, यवक्षार, सेंधालवण इन सब को समभाग लेकर चूर्ण करे और बिजौरे नीबू के स्वरस से मिलाकर खिलाये तो प्लीहा की शूल नाश करने में यह परम श्रेष्ठ है ॥ १॥

वायुः प्लीहानमुद्धृत्य कुपितो यस्य तिष्ठति।
शूलैः परितुदन्पार्श्वे प्लीहा तस्य प्रवर्धते ॥ २॥

कुपित हुआ २ वायु प्लीहा को हिलाता हुआ शूल कर के पसलियों को अत्यन्त पीड़ित करने लगता है तब प्लीहा अत्यन्त बढ जाती है ॥ २॥

अथ सिन्ध्वादिचूर्णम्—

सिन्धुमगधाग्निचूर्णं शिग्रुशिफाजाजिकासमं पीतम्।
प्रबलमपि योगराजः प्लीहानं नाशयत्याशु ॥ १॥

सेंधा नमक, पिप्पली, चीता, सुहांजने की जड़, जीरा सब को समभाग लेकर चूर्ण कर के जल से पिलाया जाये तो यह योगराज प्रबल प्लीहा को भी शीघ्र ही नष्ट करता है ॥ १॥

अथ विडङ्गादिचूर्णम्—विडङ्गानि यवानी च चित्रकं चेति तत्समम्।

द्विगुणं देवदारुं च नागरं सपुनर्नवम् ॥ १ ॥

वायविडंग, अजवायन, चीता इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग ले, देवदारु दो भाग, सोंठ दो भाग, पुनर्नवा दो भाग ॥ १ ॥

त्रिवृद्भागाश्च चत्वारस्तत्सर्वं कल्कपेषितम् ।
क्षीरेणोष्णेन पातव्यं श्रेष्ठं प्लीहविनाशनम् ॥ २ ॥

त्रिवी ४ भाग इन सब को पीसकर कल्क बनावे । इस कल्क को गरम दूध से मिलाकर पिलावे तो प्लीहा नाश करने में यह परम श्रेष्ठ है ॥ २ ॥

अथ वैतानि चूर्णानि गवां मूत्रेण पाययेत् ।
उदरीभूतमप्येवं प्लीहानं संप्रणाशयेत् ॥ ३ ॥

अथवा इसी चूर्ण को गौ के मूत्र से मिलाकर पिलावे तो प्लीहा यदि बढ़कर सारे पेट में भी फैल गई हो तो भी इस चूर्ण से नष्ट होजाती हैं ॥ ३ ॥

अथ वज्रक्षारः—सौवर्चलं यवक्षारं सामुद्रं काचसैन्धवम् ।
टङ्कणं स्वर्जिकाक्षारं तुल्यमेकत्र चूर्णयेत् ॥ १ ॥

सौंचललवण, यवक्षार, सामुद्रलवण, काचलवण, सेंधालवण, सुहागा, सज्जी इन सब को एक २ भाग लेकर चूर्ण कर लेवें ॥ १ ॥

अर्कदुग्धैः स्नुहीदुग्धैर्भावयेदातपे त्र्यहम् ।
ऊर्ध्वाधस्थैः क्रमात्तस्य तत्तुल्यैरर्कपल्लवैः ॥ २ ॥
भाण्डे संस्थाप्य मृल्लिप्ते रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ।
स्वाङ्गशीतं तु संचूर्ण्य चूर्णमेषां तु मेलयेत् ॥ ३ ॥

फिर आक के दूध से ३ दिन भावित करे फिर थोहर के दूध से ३ दिन धूप में रख भावित करे । फिर इस सारे चूर्ण के बराबर आक के पत्तों को लेवें। और आधे नीचे और आधे ऊपर पत्ते रखकर बीच में दवा को रखे और सम्पुट में सब को रखकर मिट्टी से बन्द कर के गजपुट में फूंक देवें । जब स्वांगशीतल हो जावे तो तब निकाल कर आगे लिखी हुई औषधियों का चूर्ण इस में मिला देवे ॥ ३ ॥

त्र्यूषणं च विडङ्गं च राजिकां त्रिफलामपि ।
चव्यं च हिङ्गुसंभृष्टं तक्रेणाद्याद्यथाबलम् ॥ ४ ॥

सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, राई, हरड़, बहेड़ा, आंवला, चव्य, घी में भुनी हुई हींग, इन सब को पृथक् २ एक २ भाग लेकर पूर्व लिखित द्रव्यों में मिला देवे । इस चूर्ण को बलानुसार तक्र से पीवे ॥ ४ ॥

वज्रक्षाराभिधं चूर्णमुदराणि विनाशयेत् ।
शोथं गुल्मं तथाऽष्ठीलां मन्दाग्निमरुचिं तथा ।
प्लीहानं यकृदाल्याख्यमुदरं च विशेषतः ॥ ५ ॥

इस वज्रक्षारचूर्ण के सेवन करने से उदररोग नष्ट होते हैं। शोथ, गुल्म, अष्ठीला, मन्दाग्नि, अरुचि, प्लीहा तथा विशेष कर के यकृद्दाल्युदर नष्ट होते हैं ॥५॥

अथ वृन्दाच्छुक्तिकाक्षारादियोगः—

पातव्यो युक्तितः क्षारः क्षीरेणोदधिशुक्तिजः।
पयसा वा प्रयोक्तव्याः पिप्पल्यः प्लीहशान्तये ॥ १ ॥

समुद्र की सीप का क्षार अर्थात् भस्म दूध से पिलावें। अथवा दूध से पिप्पली का चूर्ण खाया जाये तो प्लीहा शान्त होती है ॥ १ ॥

अथ क्षारादियोगः—**क्षारं वा बिडकृष्णाभ्यां पूतिकस्याम्बुनि श्रृतम्।**
यकृत्प्लीहप्रशान्त्यर्थं पिबेत्प्रातर्यथाबलम् ॥ १ ॥

बिड्लवण, पिप्पली, यवक्षार इन तीनों को समभाग लेकर चूर्ण करे। इस चूर्ण को करंज के स्वरस में मिलाकर गरम करके प्रातःकाल बलानुसार पिलावें। तो यकृत् और प्लीहा की शान्ति होती है ॥ १ ॥

अथ सौभाञ्जनादियोग—**सौभाञ्जनकनिर्यूहं सैन्धवाग्निकणान्वितम्।**
पलाशक्षारयुक्तं वा यवक्षारं प्रयोजयेत् ॥ १ ॥

सुहांजने का क्वाथ करके उसमें सेंधानमक, चीता तथा पिप्पली का चूर्ण मिलाकर पिलावें तो प्लीहा की शान्ति होती है। अथवा पलाश के क्षार में यव-क्षार मिलाकर पिलावें तो भी प्लीहा की शान्ति होती है ॥ १ ॥

अथ लशुनादियोगः—**लशुनं पिप्पलीमूलमभयां चैव भक्षयेत्।**
पिबेद्गोमूत्रगण्डूषं प्लीहरोगविमुक्तये ॥ १ ॥

लहसन, पिप्पलीमूल, और हरड़ इनका चूर्ण खाकर ऊपर से गोमूत्र पीवे तो तो प्लीहा रोग शान्त होता है ॥ १ ॥

अथ रोहीतकादिकल्कम्—**रोहीतकाभयाकल्कं भावितं मूत्रमम्बुना।**
पीतं सर्वोदरप्लीहमेहार्शःकृमिगुल्मनुत् ॥१॥

रोहेड़ा और हरड़ को सममाग लेकर गोमूत्र से कल्क करे उसे जल से पीवे तो सभी प्रकार के उदररोग, प्लीहा, प्रमेह, अर्श, कृमि तथा गुल्म नष्ट होते हैं॥१॥

अथ द्रवन्तीनागवटी—**तिलैरण्डद्रवन्तीनां क्षारो भल्लातकं कणा।**
एषां भागं समं कृत्वा तत्तुल्यं तु गुडं मतम् ॥ १ ॥

तिल का क्षार, एरण्ड का क्षार और द्रवन्ती का क्षार इन तीनों के क्षार को समभाग लेवे। सबको मिला लेवे। अब इस मिले हुए क्षार में से एक भाग लेवे, शुद्ध भिलांवा एक भाग, पिप्पली का चूर्ण एक भाग लेवे, इन सबको लेकर एकत्र करें, इन सबके तुल्य गुड डाले ॥ १ ॥

खादेदग्निबलं ज्ञात्वा पावकस्य विवृद्धये।
जयेत्प्लीहानमत्युग्रं यकृद्गुल्मं तथैव च ॥ २ ॥

इसे अपना अग्निबल देखकर खावे इससे जठराग्नि की वृद्धि होती हैं। इससे अत्युग्र प्लीहा भी शान्त होती है, यकृत् तथा गुल्म भी शान्त होता है ॥२॥

अथ शिग्रुक्काथः—**शोफं प्लीहोदरं हन्ति पिप्पलीमरिचान्वितः।**
अम्लवेतससंयुक्तः शिग्रुक्काथः ससैन्धवः ॥ १ ॥

सुहांजने के क्काथ में, पीपल, मिरच, अम्लबेत तथा सेंधानमक प्रत्येक समभाग लेकर चूर्ण करके मिलादें। इससे सूजन और प्लीहोदर शान्त होता है १

अथ क्षारभावितपिप्पली—**पलाशक्षारतोयेन पिप्पली परिभाविता।**
गुल्मप्लीहार्तिशमनी वह्निदीप्तिकरी मता ॥१॥

ढाक के क्षार के जल में पिप्पली भावित करें। यह गुल्म तथा प्लीहा रोग को शान्त करती है तथा अग्नि दीपन करती है॥ १ ॥

अथाग्निमुखं लवणम्—**चित्रकत्रिवृतादन्ती त्रिफलारुचकैः समैः।**
यावन्त्येतानि चूर्णानि तावन्मात्रं तु सैन्धवम् ॥१॥

चीता, त्रिवी, दन्तीमूल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, रुचकलवण इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर चूर्ण करे। इन सब चूर्णों के समान सेंधानमक मिलावे ॥१॥

भावयित्वा स्नुहीक्षीरैः स्नुक्काण्डे प्रक्षिपेत्ततः।
मृत्पङ्केनानुलिप्याथ प्रक्षिपेज्जातवेदसि ॥ २ ॥

सबको थोहर के दूध में भावित करके फिर सुखाकर थोहर के डण्डे में भर लेवे। फिर कपड़ मिट्टी करके उस थोहर के काण्ड को आग में जला देवे ॥२॥

सुदग्धं च ततो ज्ञात्वा शनैर्वैद्यः समुद्धरेत्।
तक्रेण पीतं तच्चूर्णं यकृत्प्लीहोदरापहम्।
एतदाग्निमुखं नाम्ना लवणं वह्निवर्धनम् ॥ ३ ॥

अच्छी प्रकार से दग्ध हो जाने पर वैद्य धीरे से उसे अग्नि से निकाल लेवे। उसे थोहर सहित चूर्ण करके तक्र से पीवे तो यकृद्दाल्युदर तथा प्लीहोदर शान्त होता है। यह अग्निमुख लवण अग्निवर्धक है ॥ ३ ॥

अथ चित्रकाद्यं घृतम्—**चित्रकस्य तुलाक्काथे घृतप्रस्थं विपाचयेत्।**
आरनालं तु द्विगुणं दधिमण्डं चतुर्गुणम् ॥ १ ॥

चीता का क्काथ एक तुला ले, घी एक प्रस्थभर लेवे। कांजी दो प्रस्थ ले, दही का मण्ड या दही का पानी ४ प्रस्थ लेवे ॥ १ ॥

पञ्चकोलकतालीसं क्षारौ च पटुपञ्चकम्।
यवान्यौ द्वे च जरणे मरीचं चाक्षसंमितम् ॥ २ ॥

पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चीता, सोंठ, तालीस पत्र, यवक्षार, सज्जी क्षार, पांचोंनमक, अजवायन, अजमोद, श्वेत जीरा, काला जीरा, काली मिरच इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ अक्षभर लेकर जल से पीसकर कल्क करे ॥ २ ॥

एतैर्युक्त्या घृतं सिद्धं मात्रया च पिबेत्प्रगे ।
प्लीहशोफोदरार्शोघ्नं विशेषादग्निदीपनम् ॥ ३ ॥

इन से घी को युक्ति पूर्वक पक्का लेवे) और उस घी को मात्रानुसार प्रात: काल पीवे । इस से प्लीहा, सूजन, उदररोग, अर्शरोग ये सभी नष्ट होते हैं तथा इस घी से विशेष कर के अग्निदीप्त होती है ॥ ३ ॥

अथ महारोहीतकं घृतम्—रोहीतकात्पलशतं संक्षुद्य बदराढकम् ।
साधयित्वा जलद्रोणे चतुर्भागावशेषिते ॥ १ ॥

रोहेड़े की छाल एक सौ पल लेवे, बेर एक आढक लेवे । इन दोनों को कूटकर एक द्रोण जल में डालकर पकावे । जब चौथाई भाग शेष रहे तो उतार कर छान लेवे ॥ १ ॥

घृतप्रस्थं समावाप्य च्छागक्षीरं चतुर्गुणम् ।
तस्मिन्द्रव्याणि सर्वाणि प्रदद्यात्कार्षिकाणि च ॥ २ ॥

फिर एक प्रस्थ गौ का घी लेवे, बकरी का दूध चार प्रस्थ लेवे ॥ २ ॥

व्योषं फलत्रिकं हिङ्गु यवानी तुम्बरुं बिडम् ।
विडङ्गं चित्रकं चैव हपुषा चविकं वचा ॥ ३ ॥

और सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, हींग, अजवायन, तुम्बरु अर्थात् तेजबल के फल, बिडलवण, विडङ्ग, चीता, हाँवेर, चव्य, बच ॥३॥

अजाजी कृष्णलवणं दाडिमं देवदारु च ।
पुनर्नवा विशाला च यवक्षारं सपौष्करम् ॥ ४ ॥

जीरा, काला नमक, अनारदाना, देवदार, पुनर्नवा, इन्द्रायण, यवक्षार, पोहकर मूल ॥ ४ ॥

एतैर्घृतं विपक्वं तु निदध्याद्दृढभाजने ।
पाययेच्च पलं मात्रां रसयूषपयोम्बुभिः ॥ ५ ॥

इन सब में से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक १ कर्ष लेवे और कल्क बनावे इन सब का मिलाकर यथाविधि घृत पकावे इस घी को एक पात्र में रखे । इस की एक पल मात्रा मांसरस, यूष, दूध और जल इन में से किसी भी यथोचित अनुपान से देवें तो ॥ ५ ॥

यकृत्प्लीहोदरं शूलमग्निमांद्यं च नाशयेत् ।
कुक्षिशूलं पार्श्वशूलं कटिशूलमरोचकम् ॥ ६ ॥

यकृत, प्लीहोदर, शूल और अग्निमांद्यरोग नष्ट होते हैं । कुक्षिशूल, पार्श्वशूल, कटिशूल, अरुचि ॥ ६ ॥

विबन्धशूलं शमयेत्पाण्डुरोगं सकामलम् ।
छर्द्यतीसारशमनं तन्द्राज्वरनिवारणम् ॥
महारोहीतकं नाम्ना प्लीहघ्नं तु विशेषतः ॥ ७ ॥

विबन्ध, शूल अथवा कब्जी से होनेवाला शूल इस से नष्ट होता है। पाण्डुरोग, कामला, छर्दि, अतीसार का नाश होता है। तन्द्रा, ज्वर का नाश होता है। महारोहीतक नामक यह घृत विशेष कर के प्लीहा को शान्त करता है॥ ७॥ इति महारोहीतकं घृतम्॥

अथ यकृदुदरचिकित्सा—

प्लीहोद्दिष्टाः क्रियाः सर्वा यकृतः संप्रकल्पयेत्।
कार्यं च दक्षिणे बाहौ तत्र शोणितमोक्षणम्॥ १॥

जो २ क्रियायें प्लीहारोग में कही हैं वे ही सब क्रियायें यकृद्रोग में भी करे। और दक्षिणभुजा में से रक्तमोक्षण करावे अर्थात् खून निकलवाये॥१॥

पिप्पलीकल्कसंयुक्तं घृतं क्षीरं चतुर्गुणम्।
पक्त्वा पिबेद्यथावह्नि यकृद्दाल्युदरापहम्॥ २॥

पिप्पली का कल्क कर के एक पावभर ले, गौ का घी एक सेर लेवे। दूध चार सेर लेवे। सब को एकत्र कर के यथाविधि घृतपाक कर लेवे। अथवा अग्निबल देखकर इस घी को पीवे तो यकृद्दाल्युदर का नाश होता है॥ २॥ इति यकृदुदरचिकित्सा॥

अथ बद्धगुदोदरप्रतीकारः।

स्विन्ने बद्धोदरे योज्यो बस्तिस्तीक्ष्णैस्तु भेषजैः।
सतैललवणैश्चापि निरूहश्चानुवासनम्॥ १॥

पहले बद्धगुदोदर में स्वेद देवे फिर तीक्ष्ण औषधियों से बस्ति देवे। तैल और लवण मिलाई हुई औषधियों से निरूह तथा अनुवासन बस्ति देवें॥ १॥

उदावर्तहरं सर्वं प्रकर्तव्यं चिकित्सितम्।
वर्तयो विविधाश्चात्र पायौ शस्ताः प्रकीर्तिताः॥ २॥

उदावर्त रोग नाशक सब क्रियायें करनी चाहियें। विविध प्रकार की बत्तियें गुदा में देनी चाहियें॥ २॥

तीक्ष्णैर्विरेचनं चात्र शस्यते तु विशेषतः।
वातहन्ता विधिः सर्वो विधातव्यो विजानता॥ ३॥

तीक्ष्ण द्रव्यों से इसमें विरेचन भी देवे। तथा वातनाशक सब विधि इसमें करनी चाहियें॥ ३॥ इति बद्धगुदोदरम्।

अथ क्षतोदरमुदकोदरं च—छिद्रान्त्रबद्धसंज्ञेषु जठरेषु प्रयोगवित्।
लब्धानुज्ञो भिषक्कुर्यात्पाटनं व्यधनक्रियाम् १

छिद्रान्त्र उदर में तथा बद्धोदर में राजा से आज्ञा लेकर वैद्य पाटन अर्थात् operation और व्यधन क्रिया को चतुरता से करे॥ १॥

तथा जातोदकं सर्वमुदरं व्यधयेद्भिषक्।
ज्ञातींश्च सुहृदो दारान्ब्राह्मणान्नृपतिं गुरुम्॥ २॥

और सब प्रकार के जलोदर में भी वैद्य पेट को बेध करके जल को बाहर निकाल देवे। सब सम्बन्धियों की, मित्रों की, रोगी की स्त्री को, ब्राह्मण, राजा तथा गुरु की॥२॥

अनुज्ञाप्य भिषग्वर्यो विदध्यात्संशयं ध्रुवम्।
सुवेष्टितं त्वधो नाभेर्वामतश्चतुरङ्गुलात्॥ ३ ॥

वैद्य आज्ञा ले लेवे तथा यह स्पष्ट कह दे कि प्राण का संशय अवश्य है। फिर नाभि के नीचे खूब कसकर गरम कपड़ा लपेट दें। फिर नाभि के चार उंगल बाईं ओर ॥ ३ ॥

अङ्गुल्युदरमात्रं तु व्रीहिवक्त्रेण भेदयेत्।
नाडीमुभयतोद्वारां संयोज्यापहरेज्जलम्॥ ४ ॥

उंगली के मध्य भाग के बराबर गहरा छिद्र व्रीहिमुख शस्त्र से भेदन करके करे। और जिसका मुंह दोनों ओर खुला हुआ हो ऐसी नलकी उस छिद्र में डाल दे और इस प्रकार से पेट का पानी नलकी में से निकलने देवे ॥ ४ ॥

न चैकस्मिन्दिने सर्वं दोषं त्वपहरेत्तथा।
कासश्वासौ ज्वरस्तृष्णा गात्रभङ्गश्च वेपथुः॥ ५ ॥

सारा पानी एक दिन में ही न निकाल देवे। यदि एक दिन में ही सारा पानी निकाला जायेगा तो खांसी, श्वास, ज्वर तथा तृष्णा, गात्रों का टूटना, कंपन॥५॥

अतिसारश्च सुतरां पूर्यते जठरं ततः।
तृतीयपञ्चमाद्येषु दिवसेष्वल्पशः पुनः॥ ६ ॥

तथा अतीसार हो जाते हैं और जल से फिर पेट भर जाता है। इस लिये तीसरे, पांचवें, सातवें, नवें, आदि दिनों में थोड़ा २ पानी निकालता रहे ॥ ६ ॥

स्रावयेदुदकं तैललवणाभ्यां दहेद्व्रणम्।
बध्नीयाद्विषतो दोषे रक्तं प्राक्प्रतिपूर्य च॥ ७ ॥

और व्रण को तेल और लवण मिलाकर लीप देवे, तथा जला देवे। यदि जलोदर विष से हुआ हो तो पहले खून का प्रतिपूरण करे ॥ ७ ॥

संवेष्टयेद्गाढतरं कौशेयादिकचर्मणा।
जलोदरेऽम्बु विस्राव्यं जातं जातं विरेचनैः॥ ८ ॥

कौशेय अर्थात् रेशमी वस्त्र या (भेड़ आदि के) चमड़े से पेट को कसकर बांध देवे। जलोदर में पानी जब २ पेट में भरता जाये तब २ विरेचन देकर निकलवाना चाहिये ॥ ८ ॥

विरिक्तजठराध्मानं स्नेहाद्यैर्बस्तिभिर्जयेत्।
निःसृतो लङ्घितो पेयामस्नेहलवणां पिबेत्॥ ९ ॥

विरेचन लेने के बाद पेट में आध्मान हो तो स्नेहादि युक्त बस्तियों से जीते।

पानी निकाल देने के बाद लंघन कराके स्नेह रहित तथा लवण रहित पेया पिलावे॥

अतः परं तु षण्मासान्क्षीरवर्ती भवेन्नरः ।
त्रीन्मासान्पयसा पेयां पिबेत्त्रींश्चापि योजयेत् ॥ १० ॥

इसके बाद छह महीने तक दूध मात्र ही पिलावे । फिर तीन मास तक दूध से मिलाकर पेया पिलावे ॥ १० ॥

सकोरदूषश्यामाकं पयसा लवणं लघु ।
नरः संवत्सरेणैवं जयेदाशु जलोदरम् ॥ ११ ॥

फिर तीन मास कोदों, सांवां इनको दूध के साथ, अथवा थोड़े सेंधानमक के साथ खिलावे । इस प्रकार एक वर्ष पथ्य सेवन करने से जलोदर शीघ्र ही दूर होता है ॥ ११ ॥ इति घृतोदरोदकोदरप्रतीकारः ॥

अथ सर्वोदरेषु सामान्यविधिः ।

उदराणां मलाढ्यत्वाद्बहुशः शोधनं हितम् ।
क्षीरेणैरण्डजं तैलं पिबेन्मूत्रेण वा सकृत् ।
ज्योतिष्मत्याः पिबेत्तैलं पयसा वा दिने दिने ॥ १ ॥

उदर रोगों में मल की अधिकता ही रोग वृद्धि का कारण होती है इस लिये पेट का अनेक बार शोधन करना चाहिये । दूध के साथ एरण्ड का तेल पिलावें । वा गोमूत्र के साथ एरण्ड का तेल मिलाकर कई वार पिलावे । अथवा माल कंगनी का तेल दूध से प्रतिदिन पिलावें ॥ १ ॥ इति शोधनं वृन्दात् ।

मूत्राण्यष्टावुदरिणां सेके पाने च योजयेत् ॥ २ ॥

गौ बकरी आदि प्राणियों के आठों प्रकार के मूत्र उदररोगियों के सिंचन तथा पीने में प्रयोग करे ॥ १ ॥

अथ देवदार्वादिलेपः—देवदारुपलाशार्कहस्तिपिप्पलिशिग्रुकैः ।
साश्वगन्धैः सगोमूत्रैः प्रदिह्यादुदरं शनैः ॥ १ ॥

देवदारु, ढाक, आक, गजपीपल, सुहांजना, असगन्ध, इन सब को समभाग लेकर पीसकर गोमूत्र से मिलाकर उदर पर धीरे से लेप कर देवे ॥ १ ॥

अथ रोहीतकादियोगः—रोहीतकाभयाशुण्ठीः पिबेन्मूत्रेण शक्तितः ।
सर्वोदरहरं प्लीहमेहार्शःकृमिगुल्मनुत् ॥ १ ॥

रोहेड़ा, हरड़, सोंठ इन सब को समभाग लेकर चूर्ण करे । इस चूर्ण को गोमूत्र से मिलाकर पिलावें तो इस से सब प्रकार के उदररोग नष्ट होते हैं, प्लीहा, प्रमेह, अर्श, कृमि तथा गुल्मरोग भी नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथ विशालादिः—विशालाशङ्खिनीदन्तीत्रिवृत्त्रिफलकात्रयम् ।
निशाविडङ्गकम्पिल्लं मूत्रेणोदरवान्पिबेत् ॥ १ ॥

इन्द्रायण, शंखिनी अर्थात् चोरहुली, दन्तीमूल, त्रिवी, हरड़, बहेड़ा, आंवला

हल्दी, विडंग, कमीला इन सब का समभाग चूर्ण कर के गोमूत्र से पिलावें तो उदररोग नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथ पयआदि—पयो वा चव्यदन्त्यग्निविडङ्गव्योषकल्कितम्।
पेयं वा शृङ्गबेराम्बु कषायो दारुवह्निजः।
चव्यविश्वसमुत्थो वा पेयो जठरशान्तये ॥ १ ॥

चव्य, दन्ती, चीता, वायविडंग, सोंठ, मिरच, पीपल, इन सब का चूर्ण कर के दूध से पीवें तो उदररोग दूर होते हैं। अथवा अदरक का स्वरस पीवे। अथवा देवदारु तथा चीते का क्वाथ पीवें। अथवा चव्य और सोंठ इन दोनों का क्वाथ पीवें तो उदररोग शान्त होता है ॥ १ ॥

अथ सुश्रुतात्—हरीतकीसहस्रं वा गोमूत्रेण पयोऽनुपः।
सहस्रं पिप्पलीनां वा स्नुक्क्षीरेण सुभावितम् ॥ १ ॥

केवल दूध का आहार करता हुआ एक हजार बड़ी हरड़ क्रमशः बढ़ाकर गोमूत्र से सेवन करे तो उदररोग नष्ट होते हैं। अथवा पिप्पली एक हजार लेवे उन को थोहर के दूध में भावित करें। इसे क्रमशः सेवन करने से उदररोग अच्छे होते हैं ॥ १ ॥

पिप्पलीवर्धमानं वा क्षीराशी वा शिलाजतु।
तद्वद्वा गुग्गुलुं क्षीरं तुल्यार्द्रकरसं तथा।
चित्रकामरदारुभ्यां कल्कं क्षीरेण वा पिबेत् ॥ २ ॥

अथवा पिप्पली वर्धमान रसायन को केवलमात्र दूध पीते हुए सेवन करे। अथवा दूध मात्र पीते हुए केवल शिलाजीत का ही प्रयोग करे। अथवा गूगल को दूध से सेवन करे। अथवा दूध में समभाग अदरक का रस डालकर पिलावे। अथवा चीता, देवदारु को समभाग लेकर कल्क करे और दूध से मिलाकर पिलावें। इन सब में से कोई एक प्रयोग करने से उदररोग नष्ट होता है ॥ २ ॥

अथ पिप्पलीवर्धमानम्—त्रिभिरथ परिवृद्धं पञ्चभिः सप्तभिर्वा
दशभिरथ विवृद्धं पिप्पलीवर्धमानम्।
इति पिबति युवा यस्तस्य न श्वासकास-
ज्वरजठरगुदार्शोवातरक्तक्षयाः स्युः ॥ १ ॥

तीन २, पांच २, सात २, अथवा दस २ पीपल क्रमशः प्रतिदिन बढ़ाकर जो मनुष्य सेवन करता है और केवलमात्र दूध का भोजन करता है। उस युवा पुरुष को न तो श्वास होता है, न खांसी, न ज्वर, न उदररोग, न गुदा के रोग, न बवासीररोग, न वातरक्त और न क्षयरोग ही होते हैं ॥ १ ॥

अथ देवद्रुमादि—देवद्रुमं शिग्रुमसूरकं च गोमूत्रपिष्टामथवाऽश्वगन्धाम्।
पीत्वाऽऽशु हन्यादुदरं प्रवृद्धं क्रमीन्सशोफानुदरं च दूष्यम् १॥

देवदारु, सुहांजना, मसूर इनको गोमूत्र से पीसकर पीने से अथवा गोमूत्र से पीसकर असगन्ध पीनेसे शीघ्र ही बढ़ा हुआ उदररोग दूर होता है, कृमि, सूजन तथा दूष्योदर दूर होता है ॥ १ ॥

अथ पटोलाद्यं चूर्णम्—पटोलामिन्द्ररजनींविडङ्गत्रिफलात्वचः ।
कम्पिल्लकं नीलिनीं च त्रिवृतां चेति चूर्णयेत् ॥१॥
षडाद्यान्कार्षिकानन्त्यांस्त्रींश्च द्वित्रिचतुर्गुणान् ।
कृत्वा चूर्णं ततो मुष्टिं गवां मूत्रेण वा पिबेत् ॥२॥

पटोलपत्र, इन्द्रजौ, हल्दी, वायविडंग, हरड़, बहेड़ा, आंवला इनकी छाल, कमीला, नील का फल, त्रिवी । इन में से पटोलपत्र से लेकर दारचीनी तक प्रत्येक पदार्थ एक २ कर्ष लें । कमीला दो कर्ष लें, नील तीन कर्ष, त्रिवी चार कर्ष लें । इन सबको मिलाकर चूर्ण कर लें । इस चूर्ण को मुष्टि प्रमाण अर्थात् एक पल (३ मासा से मात्रा आरम्भ करे) लेकर गोमूत्र के साथ पीवे ॥ २ ॥

विरिक्तो मृदु भुञ्जीत भोजनं जाङ्गलै रसैः ।
मण्डपेयां च पीत्वा वा सव्योषं षडहं पयः ॥ ३ ॥

विरेचन हो जाने के बाद उसी दिन मृदु भोजन जांगल जीवों के मांसरस के साथ थोड़ा २ करे । मण्डपेया को ही अथवा पीवे । फिर छह दिन तक सोंठ, मिरच पीपल मिलाकर पकाया हुआ दूध पीवे ॥ ३ ॥

शृतं पिबेत्ततश्चूर्णं पिबेदेवं पुनः पुनः ।
हन्ति सर्वोदराण्येतच्चूर्णं जातोदकान्यपि ।
कामलां पाण्डुरोगं च श्वयथुं चापकर्षति ॥ ४ ॥

फिर आठवें दिन इसी चूर्ण को खिलावे, विरेचनादि के बाद फिर पूर्ववत् पथ्य देवे । इस प्रकार बार २ करने से सब प्रकार के उदररोग तथा जलोदर भी इसके सेवन से अच्छे होते हैं । कामला, पाण्डुरोग तथा सूजन को भी यह चूर्ण दूर करता है ॥ ४ ॥ (नोट—पटोल, मूलरजनी भी पाठ है चक्रदत्त)

अथ नारायणचूर्णम्—यवानी हपुषा धान्यं त्रिफला सोपकुञ्चिका ।
कारवी पिप्पलीमूलमजगन्धा शटी वचा ॥ १ ॥

अजवायन, हाऊबेर, धनियां, हरड़, बहेड़ा, आंवला, कलौंजी, (कारवी-स्वल्पप्रमाणं जीरकमीषत्कृष्णम्) छोटा कालाजीरा, पिप्पलीमूल, अजमोदा, कचूर, बच ॥ १ ॥

शताह्वा जीरकं व्योषं स्वर्णक्षीरीसचित्रकम् ।
द्वौ क्षारौ पुष्करं मूलं कुष्ठं लवणपञ्चकम् ॥ २ ॥

सौंफ, श्वेतजीरा, सोंठ, मिरच, पीपल, स्वर्णक्षीरी, चीता, यवक्षार, सज्जीक्षार, पोहकरमूल, कूठ, पांचों लवण ॥ २ ॥

विडङ्गं च समांशानि दन्तीभागत्रयं तथा ।

त्रिवृद्विशाले द्विगुणे सातला स्याच्चतुर्गुणा ॥ ३ ॥

वायविडंग इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग ले, दन्तीमूल तीन भाग लेवे। त्रिवी दो भाग, इन्द्रायण दो भाग ले, सातला अर्थात् चर्मकषा ४ भाग लें। सब का चूर्ण करें ॥ ३ ॥

एष नारायणो नाम चूर्णो रोगगणापहः।
तक्रेणोदरिभिः पेयो गुल्मिभिर्बदराम्बुना ॥ ४ ॥

यह नारायण चूर्ण रोगों को नष्ट करने वाला है। तक्र के साथ उदररोगियों को पीना चाहिये, बेर के स्वरस से गुल्म रोगियों को पीना चाहिये ॥ ४ ॥

आनद्धवाते सुरया वातरोगे प्रसन्नया।
दधिमण्डेन विट्सङ्गे दाडिमाम्बुभिरर्शसि ॥ ५ ॥

आनद्धवात में सुरा के साथ इसे पीवें, वातरोग में प्रसन्ना के साथ इसे पीवें। कब्ज या मल रुक जाये तो दही के मांड से अर्थात् दही के पानी से पीवे, बवासीर में अनार के स्वरस से पीवें ॥ ५ ॥

परिकर्ते च वृक्षाम्लैरुष्णाम्बुभिरजीर्णके।
भगंदरे पाण्डुरोगे कासे श्वासे गलग्रहे ॥ ६ ॥

परिकर्तिका में वृक्षाम्ल या अम्लकुटा से और अजीर्ण में गरम जल से पिलावें। भगन्दर, पाण्डुरोग, कास, श्वास, गलग्रह ॥ ६ ॥

हृद्रोगे ग्रहणीरोगे कुष्ठे मन्दानले ज्वरे।
दंष्ट्राविषे मूलविषे गरले कृत्रिमे विषे।
यथार्हं स्निग्धकोष्ठेन पेयमेतद्विरेचनम् ॥ ७ ॥

हृद्रोग, ग्रहणीरोग, कुष्ठरोग, मन्दाग्नि, ज्वर, दंष्ट्रा विष अर्थात् दांतों से उत्पन्न हुआ २ विष, मूलविष, गरलविष अर्थात् बिना विष के द्रव्यों के संयोग से उत्पन्न हुआ २ विष जो कालान्तर में फल देता है, तथा कृत्रिम विष अर्थात् जो स्थाविर तथा जांगम विषों के संयोग से उत्पन्न हुआ २ उत्कृष्ट शक्ति वाला विष इन सब में बलानुसार यह विरेचन कोष्ठ को स्निग्ध करके पीना चाहिये ॥ ७ ॥

इति नारायणचूर्णम्।

अथ क्षारद्वयादिचूर्णम्—**क्षारद्वयानलव्योषनीलीलवणपञ्चकम्।**
चूर्णितं सर्पिषा पेयं सर्वगुल्मोदरापहम् ॥ १ ॥

यवक्षार, सज्जी, चीता, सोंठ, मिरच, पीपल, नील, पांचों लवण इन में से प्रत्येक द्रव्य को समभाग लेकर चूर्ण करे। इसे घी के साथ पीवे इस से सब प्रकार के गुल्म और उदररोग नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथ वृन्दाच्छुक्तिकाक्षारादियोगः—

सामुद्रशुक्तिकाक्षारो यवक्षारः ससैन्धवः।
गोदध्ना संप्रयुज्येत सर्वोदरविनाशनः ॥ १ ॥

समुद्र की सीप का क्षार या भस्म, यवक्षार, सेंधा लवण इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर गौ के दही से मिलाकर सेवन करने से सब प्रकार के उदर रोग नष्ट होते हैं ॥ २ ॥

अथोष्ट्रीक्षीरपानम्—उष्ट्रीक्षीरं पिबेज्जीर्णे निरन्नो जठरामयी।
पक्षं मासमृतुं वाऽपि न च पानीयमाचरेत् ॥ १ ॥

यदि रोगी ऊंटनी का दूध ही पीवे, और दूध के पच जाने के बाद अन्न न खावे। इस प्रकार एक पक्ष, एक मास अथवा एक ऋतुभर रहे और न अन्न खावे न पानी पीवे तो उदररोग नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथ घृतानि।

तत्राऽऽदौ बिन्दुघृतम्—अर्कक्षीरं पले द्वे तु स्नुहीक्षीरं पलानि षट्।
पथ्या कम्पिल्लकं श्यामा शम्याकं गिरिकर्णिका ॥१॥
नीलिनी त्रिवृता दन्ती शङ्खिनी चित्रकं तथा।
एतेषां पालिकैर्भागैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥ २ ॥

आक का दूध दो पल, थोहर का दूध छह पल ले, हरड़, कमीला, काली जड़वाली त्रिवी, बड़े अम्लतास की फली, श्वेता पराजिता, नील, त्रिवी, दन्ती, शङ्खिनी अर्थात् श्वेतवुन्हा या चामरकषा, चीता इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ पल लेकर कल्क करे। गौ का घी एक प्रस्थ लें ॥ २ ॥

अथास्य मलिने कोष्ठे बिन्दुमात्रं प्रदापयेत्।
यावदस्य पिबेद्बिन्दून् तावद्वेगान्विरिच्यते।

इस घी को पाक कर के रखें। इस में से एक बूंद घी पिलावें। जितनी बूंद पिलावें उतनी बार ही विरेचन होता है ॥ ३ ॥

कुष्ठं गुल्ममुदावर्त्तं श्वयथुं सभगंदरम्।
शमयत्युदराण्यष्टौ वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा।
एतद्बिन्दुघृतं नाम येनाभ्यक्तो विरिच्यते ॥ ४ ॥

कुष्ठ, गुल्म, उदावर्त्त, सोजा, भगन्दर, आठों प्रकार के उदररोग इस प्रकार से नष्ट होते हैं जैसे बिजली से वृक्ष। यह बिन्दुघृत ऐसा है जिस के पेट पर मगने से विरेचन होता है ॥ ४ ॥ इति वृन्दाद्बिन्दुघृतम् ॥

अथ योगतरङ्गिण्यां नाराचघृतम्—

त्रिफला चित्रको दन्ती बृहती कण्टकारिका।
स्नुही चार्कविडंगानि घृतस्य कुडवं पचेत् ॥ १ ॥

हरड़, बहेड़ा, आंवला, चीतामूल, दन्ती, बड़ी कटेली, छोटी कटेली, थोहर, आक, विडंग इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग लें। सब मिलाकर एक पल हों। इन का कल्क कर के गौ का घी एक कुडव डाले और जल चार कुडव डालकर

विधिपूर्वक मन्द २ अग्नि पर घी पका लेवे ॥ १ ॥

तस्य मृद्वग्निसिद्धस्य कर्षार्धं पाययेन्नरम् ।
शोथगुल्मोदरानाहप्लीहोदरजलोदरान् ।
नाशयत्युल्बणानेतान्सर्पिर्नाराचसंज्ञितम् ॥ २ ॥

उस घी को आधा कर्ष पिलावे । तो शोथ, गुल्म, उदर, आनाह, प्लीहोदर जलोदर ये सभी अत्यन्त बढ़ गये हों तो भी इस से नष्ट होते हैं । इस घी का नाम नाराचघृत है ॥ २ ॥

अथ त्रिवृताद्यं घृतम्—पयस्यष्टगुणे सर्पिःप्रस्थं स्नुक्पयसः पलम् ।
त्रिवृतापलकल्केन सिद्धं जठरगुल्मनुत् ॥ १ ॥

दूध आठ प्रस्थ, घी एक प्रस्थ, थोहर का दूध एक पल और त्रिवी एक पल लेकर दोनों का कल्क करे । इन को मिलाकर विधिपूर्वक पकावे । इस से पेट के रोग तथा गुल्मरोग नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथ पञ्चमूलाद्यं घृतम्—

द्वे पञ्चमूल्यौ त्रिवृतां निकुम्भं ससप्तलं चित्रकशिग्रुमूलम् ।
करञ्जबीजं त्रिफलां गुडूचीमेरण्डमूलं मदयन्तिकां च ॥ १ ॥

दशमूल के दस पदार्थ, त्रिवी, दन्तीमूल, सप्तला, चीता, सुहांजने की जड़, करंजवे के बीज, हरड़, बहेड़ा, आंवला, गिलोय, एरण्ड की जड़, नवमल्लिका ॥ १ ॥

पाठां सभार्ङ्गीं सुषवीं सतिक्तां सरोहिषां यासकुचेलिकां च ।
पृथक्समाहृत्य पलं जलस्य द्रोणे पचेत्तच्चतुरंशशेषे ।
घृतं विपक्वं सकषाययुक्तं निहन्ति पीतं सकलोदराणि ॥ २ ॥

पाठा, भार्गी, कालाजीरा, कुटकी, रोहिषतृण, जवासा, पाठा इन में से प्रत्येक द्रव्य १०२ पल लेकर एक द्रोण जल में डालकर पाक करे । जब चतुर्थांश शेष रह जावे तो इसे छान लेवे । इस क्वाथ में चौथाई घी डालकर पाक करे । इस घी के पीने से सभी उदररोग नष्ट होजाते हैं ॥ २ ॥ इति पञ्चमूलाद्यं घृतम् ॥

अथ हिङ्ग्वादिघृतम्—

हिङ्ग्वा रसोनार्द्रकशिग्रुपथ्याषड्ग्रन्थिदन्तीदशमूलतोयैः ।
द्विक्षारपञ्चोषणकल्कपादैः सिद्धं घृतं तज्जठरे प्रशस्तम् ॥ १ ॥

हींग, लहसन, अदरक, सुहांजना, हरड़, बच, दन्ती, दशमूल के दश द्रव्य, इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर इन को एकत्र कर सोलह गुणा जल डाल कर क्वाथ करे । इस क्वाथ का चौथाई भाग शेष रखे । इस से चौथाई भाग गौ का घी लेवे । और घी से चौथाई भाग कल्क की औषध लेवे । सब को एकत्र पकाकर घीमात्र शेष रखे । कल्कार्थ द्रव्य, यवक्षार, सज्जी, सोंठ, पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चीता इन को समभाग लेकर घी से चौथाई कल्क कर घी

पका लेवे। यह घी उदररोगों में लाभ देता है ॥ १ ॥ इति घृतानि ॥

अथ तक्रपानम्—वातोदरी पिबेत्तक्रं पिप्पलीलवणान्वितम्।
शर्करामरिचोपेतं स्वादु पित्तोदरी पिबेत् ॥ १ ॥

पिप्पली का चूर्ण, सेंधालवण मिलाकर तक्र को वातोदरवाला पीवे। पित्तोदरवाला रोगी खांड और मिरचों का चूर्ण मिलाकर पीवे ॥ १ ॥

यवानीसैन्धवाजाजीव्योषयुक्तं कफोदरी।
संनिपातोदरी तक्रं त्रिकटुक्षारसैन्धवैः ॥ २ ॥

कफोदरवाला रोगी अजवायन, सेंधानमक, जीरा श्वेत, सोंठ, मिरच, पीपल इन को समभाग लेकर चूर्ण कर के तक्र में मिलाकर पीवे। और सोंठ, मिरच, पीपल, यवक्षार और सेंधालवण का चूर्ण तक्र में मिलाकर सन्निपातोदरी पीवे ॥२॥

बद्धोदरी तु हपुषादीप्यकाजाजिसैन्धवैः।
पिबेच्छिद्रोदरी तक्रं पिप्पलीक्षौद्रसंयुतम्।
त्र्यूषणक्षारलवणैर्युक्तं तु सलिलोदरी ॥ ३ ॥

हाऊबेर, अजवायन, जीरा तथा सेंधानमक मिलाकर बद्धोदरी पीवे। पिप्पली का चूर्ण और शहद मिलाकर तक्र को छिद्रोदरवाला पीवे। जलोदरवाला रोगी सोंठ, मिरच, पीपल, यवक्षार, सेंधालवण इन सब से मिलाकर पीवे ॥३॥ इति तक्रम् ॥

अथ शोफोदरचिकित्सा—

हरीतकीनागरदेवदारुपुनर्नवाछिन्नरुहाकषायः।
सगुग्गुलुर्मूत्रयुतश्च पेयः शोफोदराणां प्रवरः प्रयोगः ॥ १ ॥

हरड़, सोंठ, देवदार, पुनर्नवा और गिलोय इन को समभाग लेकर विधिपूर्वक क्राथ कर के गूगल और गोमूत्र मिलाकर पिलाया जाये तो शोफोदर के लिये उत्कृष्ट लाभदायक है ॥ १ ॥

पुनर्नवानिम्बपटोलशुण्ठीतिक्ताभयादार्व्यमृताकषायः।
सर्वाङ्गशोफोदरकासशूलश्वासान्वितं पाण्डुगदं निहन्ति ॥२॥

पुनर्नवा या इटसिट, नीम की छाल, पटोलपत्र, सोंठ, कुटकी, हरड़, दारुहल्दी, गिलोय इन सब को समभाग लेकर क्राथ करे। इस से सर्वांगों की सूजन, पेट की सूजन तथा पेट के रोग, कास, शूल तथा श्वास से युक्त पाण्डुरोग हो तो इन सब को दूर करता है ॥ २ ॥

पुनर्नवादार्व्यभयागुडूचीः पिबेत्समूत्रा महिषाक्षयुक्ताः।
त्वग्दोषशोफोदरपाण्डुरोगस्थौल्यप्रसेकोर्ध्वकफामयेषु ॥३॥

पुनर्नवा, दारुहल्दी, हरड़, गिलोय इनका क्राथ गोमूत्र तथा गूगल मिलाकर पीने से त्वचा के दोष, शोथोदर, पाण्डुरोग, स्थूलता, प्रसेक अथवा मुंह से अधिक थूक आना तथा ऊर्ध्व भाग में स्थित कफ के रोग ये सभी नष्ट होते हैं ॥ ३ ॥

गोमूत्रयुक्तं महिषीपयो वा क्षीरं गवां वा त्रिफलाविमिश्रम् ।
क्षीरान्नभुक्केवलमेव गव्यं मूत्रं पिबेद्वा श्वयथूदरेषु ॥ ४ ॥

गौ के मूत्र से मिलाकर भैंस का दूध पिलावें । अथवा त्रिफला के साथ गौ का दूध पिलावें । अथवा दूध और अन्न मात्र सेवन करता हुआ रोगी केवल गौ का मूत्र पीवे तो शोथोदर नष्ट होता है ॥ ४ ॥

सप्ताहं माहिषं मूत्रं पयसा चाम्बुवर्जितम् ।
पिबेदौष्ट्रं पयो मासं श्वयथूदरनाशनम् ॥ ५ ॥

एक सप्ताह भर भैंस का मूत्र बिना पानी मिलाये दूध से मिलाकर पीवे । अथवा ऊंटनी का दूध एक मास तक पीवे तो भी शोथोदर नष्ट होता है ॥ ५ ॥

बिल्वाग्निचव्यार्द्रकशृङ्गबेरक्वाथेन कल्केन च सिद्धमाज्यम् ।
सच्छागदुग्धं ग्रहणीगुदोत्थशोफाग्निसादारुचिहृद्वरिष्ठम् ॥६॥

बिल्व, चीता, चव्य, अदरक ताजा इन सबको समभाग लकर क्वाथ करें । तथा इनका ही कल्क करें । इस कल्क से चौगुना गौ का घी, घी से चौगुना क्वाथ तथा बकरी का दूध घी के समभाग वा चतुर्गुण डालकर घृतपाक करें । इस घी के सेवन से ग्रहणी, गुदा के रोग अर्श आदि, शोथ, अग्निमन्दता, अरुचि ये सभी रोग नष्ट होते हैं ॥ ६ ॥ इति श्वयथूदरचिकित्सा ॥

अथ रसाः ।

तत्राऽऽदौ नाराचो रसः—भृष्टटङ्कणतुल्यं तु मरिचं च रसं समम् ।
गन्धकं पिप्पली शुण्ठी द्वौ द्वौ भागौ विचूर्णयेत् ॥१॥

सुहागे की खील एक भाग, मिरच का चूर्ण एक भाग, शुद्ध पारा एक भाग, शुद्ध गन्धक दोभाग, पिप्पली का चूर्ण दो भाग, सोंठ का चूर्ण दो भाग लें । पहले पारागन्धक की कज्जली करें । फिर सबको एकत्र कर मर्दन करें ॥ १ ॥

सर्वतुल्यं क्षिपेद्दन्तीबीजं सर्वमकल्मषम् ।
द्विगुञ्जं रेचनं चैतदुदराणि व्यपोहति ॥ २ ॥

फिर सारे चूर्ण के समभाग शोधित दन्ती के बीज डालें । सबको घोटकर दो रत्ति प्रमाण की गोली बना लेवें । इसकी एक मात्रा खाने से विरेचन होता है, उदररोग में इस विरेचन से लाभ होता है ॥ १ ॥

अथेच्छाभेदी रसः—शुण्ठीमरिचसंयुक्ता रसगन्धकटङ्कणाः ।
जेपालस्त्रिगुणाः प्रोक्तः सर्वमेकत्र मर्दितम् ॥ १ ॥

सोंठ का चूर्ण; मिरच का चूर्ण, शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध सुहागा प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग लें । जमालगोटे के शोधित बीज तीन भाग लेवें । इन में से पहले पारे गन्धक की कज्जली करे, फिर सब द्रव्यों को एकत्र करके चूर्ण करे ॥१॥

इच्छाभेदी रसो ह्यस्य द्विगुञ्जं ससितां पिबेत्।
यावच्च चूलकाः पीतास्तावद्वेगैर्विरिच्यते।
तक्रौदनं च दातव्यं पथ्यमत्र विजानता॥ २॥

इसकी दो रत्ति की गोली बना लेवे। इसको खांड से मिलाकर खावे तो जितने चुल्लू पानी के पीवेगा उतनी बार ही दस्त आकर विरेचन होगा। इसके सेवन के बाद जब दस्त हो जावें तो छाछ और चावल का पथ्य देवे (यदि विरेचन बन्द करने हों तो गरम जल पीलें)॥ २॥

अथ जलोदरारिः—पिप्पलीमरिचं ताम्रं काञ्चनीचूर्णसंयुतम्।
स्नुहीक्षीरैर्दिनं मर्द्यं तुल्यं जेपालबीजकम्।
निष्कं भुक्तं विरेकेण सत्यं हन्ति जलोदरम्॥ १॥
अत्र क्रव्यादरसो हितः।

पीपल, मिरच, ताम्रभस्म, हल्दी का चूर्ण सबको मिलाकर एक दिन भर थोहर के दूध से मर्दन करे। और सबके बराबर शुद्ध जमालगोटे के बीज डालकर सबको एकत्र घोट लेवे। फिर एक निष्क भर (मात्रा एक दो रत्ति पर्याप्त है) इसे खावें तो इससे बिरेचन हो २ कर जलोदर रोग सचमुच ही नष्ट हो जाता है॥ १॥ इस जलोदर रोग में क्रव्यादरस भी हितकर है॥

अथ पथ्यापथ्यम्।

दोषैः कुक्षौ हि संपूर्णे वह्निर्मन्दत्वमृच्छति।
तस्माद्भोज्यानि योज्यानि दीपनानि लघूनि च॥ १॥

पेट में दोषों के भर जाने से अग्निमन्द होजाती है। इस कारण ऐसे भोजन उदररोगी को देने चाहियें जो अग्निदीपन करने वाले हों और लघु हों॥ १॥

शालिषष्टिकगोधूमयवनीवारभोजनम्।
विरेकास्थापनं श्रेष्ठं सर्वेषु जठरेषु च॥ १॥

शाली चावल, साठी के चावल, गेहूं, जौ, नीवार इन को सेवन करना, बिरेचन तथा आस्थापन करना ये कर्म उदररोगों में श्रेष्ठ हैं॥२॥ इति वृन्दात्॥

अथ पथ्यापथ्यं संहितायाम्—

विरेचनं लङ्घनमब्दसंभवाः कुलत्थमुद्गारुणशालयो यवाः।
मृगा द्विजा जाङ्गलसंज्ञयाऽन्विताः पेया सुरा माक्षिकसीधुसैन्धवाः१

विरेचन लेना, लंघन करना, एक वर्ष के पुराने कुलथ, मूंग, लाल चावल, जौ का भोजन करना, जांगल मृग और पक्षी, पेया, सुरा, शहद, सीधु, सेंधा लवण॥१॥

तक्रं रसोनोरुबुतैलमार्द्रकं शालिंच शाकं कुलकं कठिल्लकम्।
पुनर्नवा शिग्रुफल हरीतकी ताम्बूलमेला यवशूकमायसम्॥ २॥

तक्र, लहसन, एरण्ड का तेल, अदरक, शालिञ्चशाक, परवल, करेला,

पुनर्नवा, सुहांजने का फल, हरड़, पान, छोटी इलायची, जौखार, लोहभस्म ॥२॥

अजागवोष्ट्रीमहिषीपयो जलं लघूनि तीव्राणि च दीपनान्यपि ।
यथामलं पथ्यगणोऽयमाश्रितः सखा नृणां स्यादुदरामये सति ॥ ३ ॥

बकरी, गौ, ऊंटनी, भैंस इन का दूध तथा इन का मूत्र, लघु तथा तीव्र दीपन पदार्थ सेवन करें । दोषों के अनुसार रोग का बलाबल देखकर उपरिलिखित पथ्य करें । उदररोग में ये सभी पथ्य अवस्थानुसार लाभ करते हैं ॥३॥

अम्बुपानं दिवास्वापं गुर्वभिष्यन्दि भोजनम् ।
व्यायामं चाध्वयानं च जठरी परिवर्जयेत् ॥ ४ ॥

जल पीना, दिन में सोना, गुरु तथा अभिष्यन्दी पदार्थों का भोजन करना, व्यायाम करना, मार्ग चलना ये सभी बातें उदररोग में अपथ्य हैं इस कारण इन को त्याग देवे ॥ ४ ॥ इति पथ्यापथ्यम् । इति उदरचिकित्सा ॥

इति हरिद्वारीयगुरुकुल विश्वविद्यालयस्नातकेन श्रीविद्याधर विद्यालंकारेण लवपुरीय श्रीमद्दयानन्दायुर्वेदमहाविद्यालयीय वैद्यकविराजोपाधिधारिणा राजयक्ष्मचिकित्सकेन जलचिकित्साविशेषज्ञेन रसेन्द्रसारसंग्रहटीकाकर्त्रा कृतायां योगरत्नाकरस्य रत्नगर्भानाम्नटीकायां उदररोगप्रकरणं समाप्तम् ॥

अथातः शोथनिदानं व्याख्यास्यामः ।

अथ शोथस्य संप्राप्तिपूर्वकं रूपमाह—

रक्तपित्तकफान्वायुर्दुष्टो दुष्टान्बहिः शिराः ।
नीत्वा रुद्धगतिस्तैर्हि कुर्यान्मांसत्वगाश्रयम् ।
उत्सेधं संहतं शोफं तमाहुर्निचयादतः ॥ १ ॥

दूषित हुआ २ वायु दूषित रक्त, पित्त तथा कफ को बाहिर की शिराओं में ले जाकर, फिर उन दूषित हुए २ रक्त कफ पित से रुद्धगति हुआ २ वहां पर ही सूजन कर देता है । वह सूजन या शोथ त्वचा, या मांस को आश्रय कर के रहता है ॥ १ ॥

सर्वं हेतुविशेषैस्तु रूपभेदान्नवात्मकम् ।
दोषैः पृथग्द्वयैः सर्वैरभिघाताद्विषादपि ॥ २ ॥

उस उन्नत, एक स्थान में स्थित हुए २ ऊंचे स्थान को शोथ कहते हैं । वह शोथ सर्वत्र मांस तथा त्वचा को आश्रित कर के रहती है । परन्तु हेतु विशेषों से तथा रूपभेद से वह नौ प्रकार का होता है । वात, पित्त, कफ, वातपित्त, पित्तकफ, वातकफ, सन्निपात, अभिघात तथा विष इन से पृथक् २ नौ प्रकार का शोथ होता है ॥ २ ॥

अथ तस्य पूर्वरूपमाह—

तत्पूर्वरूपं दवथुः शिरायामोऽङ्गगौरवम् ॥ ३ ॥

शोथ के होने से पहले दाह होता है। सिराओं के फैलने के समान पीड़ा होती है। अंग भारी होते हैं ॥ ३ ॥

अथ कारणमाह—

शुद्ध्यामयाभुक्तकृशाबलानां क्षाराम्लतीक्ष्णोष्णगुरूपसेवा।
दध्याममृच्छाकविरोधिदुष्टगरोपसृष्टान्ननिषेवणं च ॥ ४ ॥

वमन विरेचनादि से देह को शुद्ध करने से, ज्वरादि हो जाने से, भोजन न करने से अथवा विगुण भोजन से, कृश तथा निर्बल हुए २ मनुष्य यदि क्षार, खट्ट, तीक्ष्ण, गरम तथा गुरु पदार्थ अधिक सेवन करें तो सूजन होजाती है।दही के सेवन से भी शोथ हो जाता है। अपक्व भोजन से, मिट्टी खाने से तथा शाक खाने से भी शोथ होता है। विरोधी तथा दुष्ट भोजन के सेवन से भी शोथ होता है। गर अर्थात् संयोगज विष से युक्त अन्न सेवन करने से भी शोथ होता है ॥ ४ ॥

अर्शांस्यचेष्टा न च देहशुद्धिर्मर्माभिघातो विषमा प्रसूतिः।
मिथ्योपचारः प्रतिकर्मणां च निजस्य हेतुः श्वयथोः प्रदिष्टः ॥ ५ ॥

अर्शरोग से, चेष्टा न करने से, शरीर के शोधन योग्य दोष की शुद्धि न करने से, मर्मघात हो जाने से अथवा विषम प्रसव होने से अर्थात् कच्चा गर्भपातादि हो जाने से। तथा वमनादि के अयोग्य उपचार से शोथरोग हो जाता है॥५॥

अथ तस्य सामान्यलक्षणमाह—

सगौरवं स्यादनवस्थितत्वं सोत्सेधमूष्माऽथ शिरोतनुत्वम्।
सलोमहर्षं च विवर्णता च सामान्यलिङ्गं श्वयथोः प्रदिष्टम् ॥ ६ ॥

सब शोथों के सामान्य लक्षण आगे लिखे जाते हैं—चित्त का स्थिर न रहना और शरीर में गौरव रहना। शरीर का सूख जाना और सूजी हुई जगह का गरम रहना, तथा शिराओं का पतला दीखना, (क्योंकि मांसशोथ के कारण शरीर की नसें पतली पड़ जाती हैं), रोम हर्ष का होना तथा शरीर का रंग विवर्ण हो जाना, ये सब लक्षण होते हैं ॥ ६ ॥

अथ वातशोथमाह—

चलस्तनुत्वक्परुषोऽरुणोऽसितः प्रसुप्तिहर्षार्तियुतोऽनिमित्तः।
प्रशाम्यति प्रोन्नमति प्रपीडितो दिवाबली च श्वयथुः समीरणात् ७॥

जो शोथ वायु से होता है वह चल होता है अर्थात् एक स्थान से दूसरे स्थान को चलायमान होता है। शोथ स्थान की त्वचा अधिक मोटी नहीं होती अथवा पतली होती है, त्वचा कठिन, लाल तथा काली होती है वहां पर स्पर्श का ज्ञान नहीं होता। रोम हर्ष होता है। बिना ही कारण के शोथ प्रशान्त होता है। प्रपीडन करने से अर्थात् दबाने से अन्दर की ओर उठता है। दिन में यह शोथ बलवान रहता है ॥ ७ ॥

अथ पैत्तिकमाह—

मृदुः सगन्धोऽसितपीतरागवाञ्ज्वरभ्रमस्वेदतृषामदान्वितः।
य उष्यते स्पर्शरुगक्षिरागकृत्सपित्तशोफो भृशदाहपाकवान्॥ ८॥

जो शोथ पित्त से होता है वह कोमल होता है, गन्धवाला होता है काले पीले रंग का होता है। ज्वर, भ्रम, स्वेद, तृष्णा तथा मद से युक्त होता है। इसमें दाह होता है, छूने से पीड़ा होती है। आंखों का रंग (पीला लाल आदि) देता है। अत्यन्त दाह तथा पाक होता है॥ ८॥

अथ कफजमाह—

गुरुः स्थिरः पाण्डुररोचकान्वितः प्रसेकनिद्रावमिवह्निमान्द्यकृत्।
सकृच्छ्रजन्मप्रशमो निपीडितो न चोन्नमेद्रात्रिबली कफात्मकः॥९॥

जो शोथ भारी,स्थिर, पाण्डुर अर्थात् श्वेत भूरे रंग का होता है, जिसके साथ ही रोगी को अरुचि रोग भी हो जाये। अधिक थूक आवे, नींद आवे, वमन तथा अग्निमांद्य हो, जिसकी उत्पत्ति में देर लगे और नष्ट होने में भी देर लगे। दबाने से अन्दर को उठे नहीं। और रात को बलवान हो तो ऐसे शोथ को कफज शोथ कहते हैं॥ ९॥ पुनश्च वातशोफलक्षणम्।

शूयन्ते यस्य गात्राणि स्पन्दन्निव रुजन्निव।
पीडितोत्युन्नमति च वातशोफं तमादिशेत्॥ १०॥

जिस रोगी के गात्र कांपते हुए तथा पीड़ा करते हुए सूज जावें अर्थात् सूजन के साथ झनझनाहट भी हो। तथा सूजन को दबायें तो उठती हो उसे वातजशोथ कहते हैं॥ १०॥

यश्चाप्यरुणवर्णाभः शोफो नक्तं प्रणश्यति।
स्नेहोष्णमर्दनाभ्यां च प्रणश्येत्स च वातिकः॥ ११॥

तथा जिस सूजन का रंग लाल हो गया हो, तथा जो सूजन रात को नष्ट हो जाये। तथा जो सूजन स्निग्ध पदार्थ तैल तथा घी आदि के मर्दन से तथा गरम पदार्थ के सेक आदि से नष्ट होजाये उसे वातिकशोथ कहते हैं॥ ११॥

पित्तशोथलक्षणम्—**यः पीतः सज्वरार्तिः स्याद्दूयते च विदह्यते।**
स्विद्यते क्लिद्यते गन्धिः स पैत्तः श्वयथुः स्मृतः॥ १२॥

जिस शोथ का रंग पीला हो, ज्वरयुक्त हो, पीड़ा तथा दाह हो। स्वेद हो तथा क्लेद हो, जिस में गंध आती हो उसे पित्तजशोथ कहते हैं॥ १२॥

य पीतमुखवर्णत्वक्पूर्वमध्यात्प्रसूयते।
तनुत्वचातिसारी च स पैत्तः श्वयथुः स्मृतः॥ १३॥

जिस में मुंह का तथा त्वचा का रंग पीला पड़ जाये। तथा जो शोथ पहले शरीर के मध्य से आरंभ होता है। त्वचा पतली होती है, अतिसार भी होते हैं इसे पैत्तिकशोथ कहते हैं॥ १३॥

अथ द्विदोषजन्यमाह—निदानाकृतिसंसर्गाच्छ्वयथुः स्याद्द्विदोषजः ॥

वैद्य निदान तथा आकृति देखकर द्वन्द्वजशोथ को जान लेवे कि यह वातपैत्तिक शोथ है, वातकफजशोथ है या पित्तकफजशोथ है ॥

अथ संनिपातजमाह—सर्वाकृतिः संनिपाताच्छोफो व्यामिश्रहेतुजः ॥१४॥

सब हेतुओं के मिल जाने से सर्वाकृति अर्थात् सब बातों का एकत्र मिला जुला शोथ होता है उसे सन्निपातज शोथ कहते हैं ॥ १४ ॥

अथाभिघातजमाह—अभिघातेन शस्त्रादिच्छेदभेदक्षतादिभिः ।
हिमानिलोदध्यनिलैर्भल्लातकपिकच्छुजैः ॥ १५ ॥

अभिघात से जो शोथ होता है वह शस्त्र आदि द्वारा छेदन, भेदन तथा क्षत आदि होने से होता है । बर्फ की वायु तथा समुद्र की वायु लगने से भी शोथ हो जाता है । भिलांवे के रस, धुंवें और कौंच के कांटों के लगने से भी सूजन हो जाती है ॥ १५ ॥

रसैः शूकैश्च संस्पर्शाच्छ्वयथुः स्याद्विसर्पवान् ।
भृशोष्मा लोहिताभासः प्रायशः पित्तलक्षणः ॥ १६ ॥

इन दोनों के लगने से हुई २ सूजन फैलती रहती है तथा अत्यन्त सन्ताप युक्त होती है । तथा लालरंग की होती है तथा प्रायः उस में पित्त के लक्षण होते हैं ॥ १६ ॥

अथ विषजलक्षणमाह—विषजः सविषप्राणिपरिसर्पणमूत्रणात् ।
दंष्ट्रादन्तनखाघातादविषप्राणिनामपि ॥ १७ ॥

विषवाले सर्पादि प्राणियों तथा मकड़ी आदि के शरीर पर से चले जाने से, या मूत्र कर देने से, और विषरहित प्राणी के दांत, दाढ़, नखादि लगने से भी शोथ होता है । तथा दाढ़, दांत, नख इनके प्रहार करने से भी सूजन होता है॥ १७॥

विण्मूत्रशुक्रोपहतमलवद्वस्त्रसंकरात् ।
विषवृक्षानिलस्पर्शाद्गरयोगावचूर्णनात् ॥
मृदुश्चलोऽवलम्बी च शीघ्रो दाहरुजाकरः ॥ १८ ॥

तथा विषयुक्त प्राणियों के मल, मूत्र और वीर्य से युक्त मलीन वस्त्रों के संपर्क से भी शोथ हो जाता है । विषवाले वृक्षों की वायु के स्पर्श से, गर अर्थात् कृत्रिमविषों के शरीर आदि पर मल देने से भी सूजन हो जाती है ॥ यह सूजन मृदु अर्थात् कोमल स्पर्श होती है, चल अर्थात् फैलनेवाली होती है, अवलम्बी अर्थात् ऊपर से नीचे की ओर जाती है । शीघ्र उत्पन्न हो जाती है, दाह तथा पीड़ा को करती है । इस शोथ को विषजशोथ कहते हैं ॥ १८ ॥

अथ यस्मिन्देशे दोषाः शोथं कुर्वन्ति तमाह ।
दोषाः श्वयथुमूर्ध्वं हि कुर्वन्त्यामाशयस्थिताः ॥ १९ ॥

आमाशयस्थ दोष छाती मुंह आदि पर ऊपर की ओर ही शोथ को करते हैं ॥ १५ ॥

पक्वाशयस्था मध्ये तु वर्चःस्थानगतास्त्वधः ।
कृत्स्नदेहमनुप्राप्ताः कुर्युः सर्वसरं तथा ॥ २० ॥

पक्वाशयगत दोष मध्य में पेट आदि स्थानों पर शोथ करते हैं । नीचे मलद्वार में रहने वाले दोष सारे शरीर में फैलकर सारे शरीर में ही शोथ करते हैं ॥ २० ॥

यो मध्यदेशे श्वयथुः सकष्टः सर्वगश्च यः ।
अधोऽङ्गेऽरिष्टभूतः स्याद्यश्चोर्ध्वं परिसर्पति ॥ २१ ॥

जो सूजन मध्य देश में होती है वह तथा सब देह में विरचने वाली सूजन कष्ट साध्य होती है । जो शोथ नीचे के अंगों में पैर आदि में हो तथा ऊपर को जाता हो वह अरिष्टभूत होता है अर्थात् असाध्य होता है । (सुश्रुत तथा माधव में " अधोऽङ्गे की जगह " अर्धाङ्गे पाठ है, अर्थात् अर्द्धनारीश्वर के समान आधे अंग में जो सूजन होती है वह अरिष्टभूत अर्थात असाध्य होती है और जो शोथ नीचे पैर आदि से ऊपर को जाती है वह भी असाध्य होती है) ॥ २१ ॥

अथोपद्रवारिष्टस्यासाध्यत्वमाह—

श्वास पिपासा छर्दिश्च दौर्बल्यं ज्वर एव च ।
यस्य चान्ने रुचिर्नास्ति शोथिनं परिवर्जयेत् ॥ २२ ॥

श्वास होना, प्यास लगना, वमन होना, दुर्बलता तथा ज्वर होना, तथा अन्न में अरुचि होना ये सभी लक्षण जिस शोथ रोगी मे हों उसकी चिकित्सा न करे । वह असाध्य होता है ॥ २२ ॥

ऊर्ध्वगामी नरं पद्भ्यामधोगामी स्त्रियं मुखात् ।
उभयोर्बस्तिसंजातः शोफो हन्ति न संशयः ॥ २३ ॥

जो शोथ नीचे पैरों से उठकर ऊपर को चढ वह पुरुष को मार देता है । जो शोथ मुंह से चलकर नीचे की ओर उतरे वह स्त्री को मार देता है । और जो सूजन बस्ति से चलकर सारे शरीर में फैल जावे वह स्त्री पुरुष दोनों को मार देती है ॥ २३ ॥

अथ स्थानभेदेनासाध्यत्वमाह—**अनन्योपद्रवकृतः शोथः पादसमुद्भवः ।**
पुरुषं हन्ति नारीं तु मुखजो गुह्यजो द्वयम् ॥ २४ ॥

जिस शोथ में अन्य श्वासादि शोथ के उपद्रव भी न हों तथा पैरों से ऊपर को चढ़ तो वह शोथ पुरुष को मार देता है । जो शोथ मुख से नीचे की ओर को उतरता है वह स्त्री को मार देता है । तथा जो शोथ गुदा योनि आदि देशों से उत्पन्न होकर सारे शरीर में फैलता है वह स्त्री पुरुष दोनों को मार देता है ॥२४॥

उपद्रवानाह—**श्वासः पिपासा दौर्बल्यं ज्वरश्छर्दिररु — ।**

हिक्कातीसारकासाश्च शोथिनं ज्ञपयन्ति हि ॥ २५ ॥

श्वास, पिपासा, दुर्बलता, ज्वर, वमन, अरुचि, हिचकी, अतीसार तथा खांसी ये सभी उपद्रव शोथ में हो जायें तो रोगी नष्ट हो जाता है ॥ २५ ॥

अथ तन्त्रान्तरे—पादप्रवृत्तः श्वयथुर्नृणां यः प्राप्नुयान्मुखम् ।
वक्त्रादधस्ताद्यो याति बस्तिं तस्य न सिध्यति ॥१॥

पैरों से उठकर जो शोथ मुख की ओर बढ़े वह (पुरुषों के लिये) तथा जो शोथ मुख से चलकर नीचे की ओर बस्ति को जाता हो वह (स्त्री के लिये) असाध्य होता है

अथ क्षीरपाणिनाऽप्युक्तम्—ऊर्ध्वगामी नरं पद्भ्यामधोगामी मुखात्स्त्रियं।
उभयोर्बस्तिसंजातः शोथो हन्ति न संशयः २॥

पैरों से ऊपर को जाने वाली सूजन पुरुष को नष्ट कर देती है, मुख से नीचे जाने वाली सूजन स्त्री को नष्ट कर देती है । बस्ति से उठकर सब शरीर में जाने वाली सूजन पुरुष तथा स्त्री दोनों को नष्ट कर देती है ॥२॥ इति शोथनिदानम् ।

अथ शोथचिकित्सा ।

निदानदोषार्तिविपर्ययक्रमैरुपाचरेत्तं बलकालदोषवित् ।
अथाऽऽमजं लङ्घनपाचनक्रमैर्विशोधनैरुल्बणदोषमादितः ॥१॥

निदान तथा दोषों का विपरीत उपाय कर के बलकाल तथा दोषों को जाननेवाला वैद्य शोथ की चिकित्सा करे । आमजशोथ को लंघन तथा पाचन से जीते । और दोष अति बढ़े हुए हों तो विशोधनक्रम से जीते अर्थात् वमन विरेचनादि देवे ॥ १ ॥

शिरोगतं शीर्षविरेचनैरधोविरेचनैरूर्ध्वमतस्तथोर्ध्वम् ।
उपाचरेत्स्नेहभवं विरूक्षणैः स्नेहस्तु रूक्षेण विरूक्ष्यते ध्रुवम् २

शिरोगत दोष को सिर को विरेचन करनेवाली नस्य देकर जीते । ऊर्ध्वगत दोष को अधोविरेचन देकर निकालें । तथा स्नेह से हुए २ ऊर्ध्वग् शोथ को विरूक्षण अर्थात् रूखे पदार्थों से रुखाकर दे । क्योंकि रूखे पदार्थों से स्नेह रूखा हो जाता है ॥ २ ॥

विबद्धविट्कानिलजे निरूहणं घृतं तु पित्तानिलजे सतिक्तकम्।
शोथेन मूर्च्छावति दाहकर्षिते विशोधनीयं तु समुन्नमिष्यते॥३

जिस शोथ में मल बंध जाये तथा वात रुक जाये अथवा वातिक हो उस में निरूहण बस्ति देवे । पित्त वातजशोथ में तिक्त द्रव्यों से बना घी देवे । शोथ सें जिस को मूर्छा होजाये तथा दाह से रोगी कृश हो जाये तो विशोधन पदार्थ देवे ॥३॥

कफोत्थितं क्षारकटूष्णसंयुतैः समूत्रतक्रैस्तु च युक्तिभिर्हरेत् ॥४॥

कफज शोथ को, क्षार, कटु तथा उष्ण पदार्थों को गोमूत्र तथा तक्र में मिलाकर पिलाने से दूर करे ॥ ४ ॥

मुखतो जायते शोथः स्त्रीणां पुंसां च पादतः ।
असाध्यौ द्वावपि प्रोक्तौ तयोः पुण्यान्निवर्तनम् ॥ ५ ॥

यदि पुरुष का शोथ पहले पैर से आरम्भ होकर ऊपर को चढ़े तो असाध्य होता है, और स्त्री का शोथ पहले मुंह से आरम्भ होकर नीचे को चले तो भी असाध्य होता है । ये दोनों शोथ यदि प्राणी ने पुण्य किये हुए हों तभी निवृत्त हो सकते हैं अन्यथा नहीं ॥ ५ ॥

अथ श्वयथोर्वातादिभेदविशेषचिकित्सा—

शोथे वातोत्थिते पूर्वं मासार्धं त्रिवृतं पिबेत् ॥ १ ॥

वातज शोथ में आधा मास त्रिवी पीवे ॥ १ ॥

तैलमेरण्डजं वाऽपि मलबन्धेऽपि तन्मतम् ।
शाल्यन्नं पयसा युक्तं रसैर्वाऽपि प्रयोजयेत् ।
स्वेदाभ्यङ्गांश्च वातघ्नान्सेकलेपांश्च कल्पितान् ॥ १ ॥

यदि मल बंधा हुआ हो तो एरण्ड का तेल पीवे । शाली चावल दूध से वा मांसरस से खावें । तथा वातनाशक द्रव्यों से स्वेद देवे, वातघ्न तेलों की मालिश करें, वातघ्न द्रव्यों से सिंचन तथा लेप करे ॥ १ ॥

अथ शुण्ठ्यादिक्वाथः—**शुण्ठीपुनर्नवैरण्डपञ्चमूलशृतं जलम् ।**
वातिके श्वयथौ पेयं भुक्तपाकेऽपि तन्मतम् ॥ १ ॥

सोंठ, पुनर्नवा, एरण्ड की जड़, पञ्चमूल अर्थात् गोखरु, शालपर्णी, पृष्टपर्णी, छोटी कटेली, बड़ी कटेली (परन्तु वृद्ध लोग बृहत्पञ्चमूल लेते हैं अर्थात् बिल्व, श्योणाक, अरणी, पाटला, गणयारी-इन पांचों की छाल वा मूल लेवें) । इनमें से प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर जलमें डालकर पकावें। इस पके हुए जल को शोथरोगी को पिलावें तथा भोजन पकाने में भी उसके लिये इसी जल को काम में लावे ॥१॥

अथ बीजपूरादिलेपः—**बीजपूरजटाहिंस्रादेवदारुमहौषधम् ।**
रास्नाग्निमन्थलेपोऽयं वातशोथविनाशनः ॥ १ ॥

बिजौरे नींबू की जड़, कटेली, देवदारु, सोंठ, रास्ना, अरणी, इन सबको समभाग पीसकर जल से मिला लेप करें तो वातशोथ नष्ट होता है॥१॥ इति वातशोथचिकित्सा ।

अथ पित्तशोथे—

क्षीराशिनः पित्तकृतेऽतिशोफे त्रिवृद्गुडूचीत्रिफलाकषायम् ।
पिबेद्गवां मूत्रविमिश्रितं वा फलत्रिकाचूर्णमथाक्षमात्रम् ॥ १ ॥

पित्तज महान् शोथ में केवल दूध पीवे । तथा त्रिवी, गुडूची, हरड़, बहेड़ा, आंवला इन सबको समभाग लेकर कषाय करके पीवे । अथवा एक अक्षभर त्रिफला चूर्ण को गोमूत्र से मिलाकर पीवे तो शोथ दूर होता है ॥ १ ॥

अथ पटोलादिक्वाथः—पटोलत्रिफलारिष्टदार्वीक्वाथः सगुग्गुलुः।
हन्ति पित्तभवं शोथं तृष्णाज्वरसमन्वितम् ॥१॥

पटोलपत्र, हरड़, बहेड़ा, आंवला, नीम, दारुहल्दी इनको पृथक् २ समभाग लेकर क्वाथ करके गूगल मिलाकर छानकर पीवे तो तृष्णा तथा ज्वर से युक्त पित्तज शोथ को यह क्वाथ नष्ट करता है ॥ १ ॥ इति पित्तशोथचिकित्सा।

अथ कफशोथे—पुनर्नवाविश्वत्रिवृद्गुडूचीशम्याकपथ्यासुरदारुकल्कम्।
शोफे कफोत्थेऽक्षसमं समूत्रं क्वाथं पिबेद्वाऽप्यथ चैव तेषाम्॥१

पुनर्नवा, सोंठ, त्रिवी, गिलोय, अम्लतास, हरड़, देवदार इन सबको समभाग लेकर कल्क करे। इस कल्क को एक अक्ष भर लेकर गोमूत्र से मिलाकर पीवे तो कफज शोथ इससे दूर होता है ॥ १ ॥

अथ पुनर्नवावलेहः—पुनर्नवामृतादारुदशमूलरसाढके।
आर्द्रकस्य रसप्रस्थे गुडस्य च तुलां पचेत् ॥ १ ॥

पुनर्नवा, गिलोय, दारुहल्दी, दशमूल के दस द्रव्य इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग ले के सोलह गुणा जल डालकर सब द्रव्यों का एकत्र पाक करके चतुर्थांश शेष रहने पर उतार छानकर शेष एक आढक रस लेवे। अदरक का स्वरस एक प्रस्थ लेवे। इन दोनों रसों को एकत्र मिलावे फिर गुड एक सौ पल मिलावे। और छान कर फिर पका लेवे ॥ १ ॥

तत्सिद्धं व्योषपत्रैलात्वक्पत्रैः कार्षिकैः पृथक्।
चूर्णीकृतैर्लिहेच्छीते मधुनः कुडवं क्षिपेत् ॥ २ ॥

जब पककर गाढा अवलेह के समान हो जावे तो सोंठ, मिरच, पीपल, तेजपात, छोटी इलायची, दारचीनी, तेजपात इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ कर्ष लेकर चूर्ण करके उसी अवलेह में मिला देवे। जब यह अवलेह शीतल हो जावे तो उसमें शहद एक कुड़व मिला देवे ॥ २ ॥

लेहः पुनर्नवो नाम श्लेष्म शोफनिषूदनः।
श्वासकासारुचिहरो बलपुष्ट्यग्निवर्धनः ॥ ३ ॥

इस अवलेह का नाम पुनर्नवावलेह हैं। इससे कफज शोथ नष्ट होता है। श्वास, कास तथा अरुचि नष्ट होती है। बल, पुष्टि तथा अग्नि बढ़ती है ॥३॥

अथाऽरग्वधादितैलम्—कफोत्थेऽत्र पिबेत्तैलं सिद्धमारग्वधादिना।
मन्देऽग्नौ स्तिमिते कोष्ठे स्रोतोरोधेऽरुचावपि ॥
क्षारमूत्रासवारिष्टचूर्णं तक्रे नियोजयेत् ॥ १ ॥

आरग्वधादि गण के द्रव्य अम्लतास की जड़, इन्द्रजौ, पाटला, लताकरंज, नीम, गिलोय, मूर्वा, विकंकतया बइंचीगाछ, पाठा, चिरायता, श्वेतकटसरैया, पटोलपत्र, दोनोंकरंज, सतौना, चीता, कालाजीरा, नीलकटसरैया या नीलभांटी,

सुपारी या मैनफल का वृक्ष। आरग्वधादि गण की औषधों से तिल का तेल चतुर्गुण जल डालकर पकावें। इस को मन्दाग्नि में दें, कोष्ठ जब जड़ हो तब दें, स्रोत रुके हुए हों, अरुचि हो तब दें तो इन सबको यह तेल ठीक करके शोथ नाश कर देता है। क्षार, मूत्र, आसव, अरिष्ट, चूर्ण इन सबको मिलाकर तक्र से सेवन करे ॥ १ ॥ इति कफशोथचिकित्सा।

अथ त्रिदोषजे मिश्रे च—**मिश्रे मिश्रक्रमं कुर्यात्सर्वजे सर्वमेव तु।**

द्वन्द्वज शोथ में द्वन्द्वों के नाश करने वाली विधि करे। त्रिदोषज शोथ में त्रिदोषनाशक विधि करे ॥ १ ॥

अथ पिप्पल्यादिचूर्णम्—

पिप्पल्यजाजी गजपिप्पली च निदिग्धिकानागरचित्रकैश्च।
रजन्ययः पिप्पलिमूलपाठामुस्तं च चूर्णं सुखतोयपीतम् ॥
कल्कश्च भूनिम्बमहौषधाभ्यां हन्यात्त्रिदोषं चिरजं च शोफम् ॥१॥

पीपली, जीरा, गजपीपल, छोटी कटेली, सोंठ, चीता, हल्दी, लोहभस्म, पिप्पलीमूल, पाठा, मोथा, इन में से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग लेकर एकत्र करें। इस चूर्ण को कोसे २ जल से पीवें तो त्रिदोषज तथा चिरकालिक शोथ दूर होता है। और चिरायता तथा सोंठ को समभाग लेकर कल्क करें। इसे कोसे जल से पीवें ता भी त्रिदोषज तथा चिरकालिक शोथ दूर होता है ॥ १ ॥ (वृन्दने तो इस पिप्पल्यादि चूर्ण में, " पिप्पल्यादिगजो नाम्ना चरके पठ्यते स्वयम्। योगऽत्र चविकास्थाने ग्राह्या मातङ्गपिप्पली " यह श्लोक लिखकर चरकोक्त चविका पाठ का अर्थ भी गजपिप्पली लिया है। परन्तु चक्रपाणि, शिवदास और जतूकर्णादि ने गजपिप्पली के स्थान में चविका ही पाठ माना है। और गजपीपली शब्द का अर्थ चव्य भी होता है जैसा कि निघण्टु में कहा भी है " चविका कोलवल्ली च हस्तिपिप्पल्यपीष्यते "। इसी लिये गजपीपल न लिखकर चक्रपाणिने 'अजाजिपाठाघनपञ्चकोल " आदि पाठ लिखकर पञ्चकोल में चव्य ही को ग्रहण किया है। स्रोतः शोधक होने के कारण तथा विशुद्धगजपपिल "चविकायाफलं प्राज्ञैः कथितागजपिप्पलिः " के लिखे अनुसार शुद्ध गजपीपल न मिलनै से हमारी सम्मति में यहां पर चव्य ही डालना संगत होगा) ॥

अथाऽऽर्द्रकरसादियोगः—

रसस्तथैवाऽऽर्द्रकनागरस्य पेयोऽथ जीर्णे पयसाऽन्नमद्यात्।
शिलाह्वयं वा त्रिफलारसेन हन्यात्त्रिदोषं श्वयथुं प्रसह्य ॥ १ ॥

ताजे अदरक का स्वरस पीना चाहिये। जब यह रस पच जावे तो दूध के साथ अन्न खावे। अथवा त्रिफला के रस से शिलाजीत खावे तो त्रिदोषज शोथ भी अवश्य नष्ट होता है ॥ १ ॥ इति त्रिदोषज मिश्र चिकित्सा ॥

अथाऽगन्तुजे विषजे च—शोफे चाऽऽगन्तुजे कुर्यात्सेकलेपादिशीतलम् ।
भल्लातकभवे शोफे सतिला कृष्णमृत्तिका ॥१॥

आगन्तुक शोथ में सेक, लेप आदि शीतल क्रिया करनी चाहिये । भिलांवें के शोथ में तिल और काली मिट्टी पीसकर लेप करदे ॥ १ ॥

नवनीततिलालेपादथ दुग्धं तिलान्वितम् ।
यष्टीदुग्धतिलैर्लेपो नवनीतेन संयुतः ॥
शोफमारुष्करं हन्ति चूर्णं शालदलस्य वा ॥ २ ॥

अथवा तिल और मक्खन मिलाकर लेप करदे । अथवा दूध और तिल मिलाकर लेप करदे । अथवा मुलठी, दूध और तिल इनको पीसकर मक्खन में मिलाकर लेप करदे । अथवा शाल के पत्तों का चूर्ण पीसकर लेप करदे । इससे भिलांवें का शोथ दूर होता है ॥ २ ॥ इत्यागन्तुकविषजचिकित्सा ।

अथ सामान्य विधिः ।

अथ बिल्वपत्रस्वरसः—बिल्वपत्ररसः पीतः सोषणः श्वयथौ रुजि ।
विट्सङ्गे चैव दुर्नाम्नि विषूच्यां कामलास्वपि ॥१॥

बिल के पत्तों का स्वरस काली मिरचें मिलाकर पीने से शोथ रोग, मल का रुकना, बवासीर, विषूची तथा कामला में लाभ देता है ॥ १ ॥

अथ भूनिम्बादिकल्कः—भूनिम्बविश्वकल्कं जग्ध्वा पीतः पुनर्नवाक्वाथः ।
अपहरति नियतमाशु श्वयथुं सर्वाङ्गजं नृणाम् ॥२॥

चिरायता तथा सोंठ इन दोनों को समभाग लेकर कल्क करे । इसे खाकर पुनर्नवा का क्वाथ पीने से सर्वाङ्गज शोथ नष्ट होता है ॥ २ ॥

अथ क्वाथाः—तत्राऽऽदौ पथ्यादिः—

पथ्यामृताभार्ङ्गिपुनर्नवाग्निदार्वीनिशादारुमहौषधानाम् ।
क्वाथो निपीतोदरपाणिपादवक्त्राश्रितं हन्त्यचिरेण शोफम् ॥१॥

हरड़, गिलोय, भारङ्गी, पुनर्नवा, चीता, दारुहल्दी, हल्दी, देवदारु, सोंठ इन सबको समभाग लेकर क्वाथ कर । इस क्वाथ को पीने से उदर, हाथ, पैर तथा मुख पर हुआ शोथ शीघ्र ही दूर हो जाता है ॥ १ ॥

अथ त्रिफलादिक्वाथः—त्रिफलाक्वाथपानं हि महिषीसर्पिषा सह ।
हन्ति शोफं प्रमेहं च नाडीव्रणभगंदरम् ॥ १ ॥

हरड़, बहेड़ा, आंवला इन तीनों को समभाग लेकर क्वाथ करे । इस क्वाथ को भैंस के घी से मिल कर नित्य पीने से शोफ, प्रमेह, नाड़ीव्रण तथा भगन्दर ये सभी नष्ट हो जाते हैं ॥ १ ॥

अथ सिंहास्यादिः—सिंहास्यामृतभण्टाकीक्वाथं पीत्वा समाक्षिकम् ।
कृच्छ्रशोथं जयेज्जन्तुः कासं श्वासं ज्वरं वमिम् ॥१॥

बांसा, गिलोय, कटेली इन सब का क्वाथ शीतल कर के शहद मिला कर पीने से कष्टसाध्य शोफ भी नष्ट होता है, कास, श्वास, ज्वर तथा वमन भी नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथ चूर्णानि—तत्राऽदौ पिप्पल्यादि—

कृष्णाग्निविश्वघनजीरककण्टकारी-
पाठानिशाकरिकणामगधाजटानाम् ।
चूर्णं कवोष्णसलिलेन विलोड्य पीतं
नातः परं श्वयथुरोगहरं नराणाम् ॥ १ ॥

पिप्पली, चीता, सोंठ, मोथा, जीरा, कटेली, पाठा, हल्दी, गजपीपल, पिप्पलामूल इन में से प्रत्येक द्रव्य सम भाग लेकर चूर्ण करें । इस चूर्ण को कोसे २ पानी में घोलकर पीवें तो इस से बढ़कर अन्य कोई औषध मनुष्यों के शोथ नाश करने में श्रेष्ठ नहीं हैं ॥ १ ॥

अथ गुडाद्यं चूर्णम्—गुडपिप्पलिशुण्ठीनां चूर्णं श्वयथुनाशनम् ।
आमाजीर्णप्रशमनं शूलघ्नं बस्तिशोधनम् ॥ १ ॥

गुड, पीपल, सोंठ तीनों को समभाग लेकर चूर्ण करें । इसे सेवन करने से शोथ नष्ट होता है, आमाजीर्ण दूर होता है, शूल नष्ट होता है तथा बस्ति-विशोधन होता है ॥ १ ॥

अथान्यच्च—गुडात्पलत्रयं ग्राह्यं शृङ्गबेरं पलत्रयम् ।
शृङ्गबेरसमा कृष्णा लोहकिट्टायसोः पलम् ।
चूर्णमेतत्समुद्दिष्टं सर्वश्वयथुनाशनम् ॥ १ ॥

गुड तीन पल लें, सोंठ तीन पल, पीपली तीन पल लें, मण्डूरभस्म तथा लोहे की भस्म एक २ पल लें । सब को एकत्र खरल करें । इस चूर्ण से सभी शोथ नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथ पुनर्नवाद्यं चूर्णम्—पुनर्नवा दार्व्यमृता पाठा विश्वा श्वदंष्ट्रिका ।
रजन्यौ द्वे बृहत्यौ च पिप्पल्यश्चित्रकं वृषः ॥१॥

पुनर्नवा, दारुहल्दी, गिलाय, पाठा, सोंठ, गोखरु, हल्दी, दारुहल्दी, कटेली, बड़ी कटेली, पिप्पली, चीता, बांसा ॥ १ ॥

समभागानि संचूर्ण्य गवां मूत्रेण वा पिबेत् ।
बहुप्रकारं श्वयथुं सर्वगात्रावसारिणम् ॥
हन्ति चाऽऽशूदराण्यष्टौ व्रणांश्चैवोद्धतानपि ॥ २ ॥

इन सब को समभाग लेकर पीसकर चूर्ण करे । इस चूर्ण को गोमूत्र से पीवे तो बहुत प्रकार की सूजन को जो सभी गात्रों में चाहे हो गई हो यह नष्ट कर देता है । तथा आठों उदररोगों को नष्ट करता है तथा उद्धत हुए २ व्रणों को भी यह चूर्ण नष्ट करता है ॥ २ ॥

अथ विडङ्गादि—विडङ्गदन्तीकटुकात्रिवृच्चित्रकदारवः ।
व्योषं सकृष्णा त्रिफला समा देया ह्ययोरजः ॥
द्विगुणं तत्पिबेच्चूर्णं पयसा शोफशान्तये ॥ १ ॥

वायविडङ्ग, दन्तीमूल, कुटकी, त्रिवी, चीता, देवदारु, सोंठ, मिरच, पीपल हरड़, बहेड़ा, आंबला इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग लें। लोहभस्म दो भाग लें। इन सब का चूर्ण करें। इस चूर्ण को दूध से पीवे तो शोथ नष्ट होता है ॥१॥

अथ गुडार्द्रकादियोगः—

गुडार्द्रकं वा गुडनागरं वा गुडाभयां वा गुडपिप्पलीं वा ।
कर्षाभिवृद्ध्या त्रिपलप्रमाणं खादेन्नरः पक्षमथापि मासम् ॥१॥

गुड और अदरक, गुड और सोंठ, गुड और हरड़, अथवा गुड और पीपली इन में से किसी एक योग को खावे। इसे एक २ कर्ष क्रमशः बढ़ाता जाये जब तक तीन पल न हो जायें बढ़ाता जाये। इस प्रकार से पथ्य सहित इसे एक मास पर्यन्त खावे ॥१॥

शोफप्रतिश्यायगलास्यरोगान्सश्वासकासारुचिपीनसादीन् ।
जीर्णज्वरार्शोग्रहणीविकारान्हन्यात्तथाऽन्यानपि वातरोगान् ॥२॥

इस से शोथ, प्रतिश्याय, गले तथा मुंह के रोग, श्वास, कास, अरुचि पीनसादिरोग, तथा जीर्णज्वर, अर्श तथा ग्रहणी के विकार और विविध प्रकार के वातरोगों को नष्ट करता है। (यहां पर "कर्षाभिवृद्ध्या से कोई तो एक २ कर्ष प्रतिदिन बढाना अर्थ लेते हैं। इस अर्थ से तो १२ दिन में ही तीन पल पूरे होजाते हैं। फिर तीन पल हो जायें तो एक पक्षभर या मासभर इसे ही खावे। अथवा पहले कुछ दिन एक कर्ष खावे। फिर कुछ दिन पीछे दो कर्ष खावे इसी प्रकार बढ़ाकर तीन पल तक पहुंचा देवे इस प्रकार एक पक्ष वा मास तक करता रहे। "पथ्यमथापिमासम्" के स्थान में "पक्षमथापिमासम्" ऐसा पाठ चक्रपाणि ने लिखा है। इसका अर्थ एकपक्ष वा एकमास अथवा डेढ़मास भी है। इस अर्थ से यह प्रगट हुआ कि एक कर्ष आरम्भ करके डेढ़ मास में तीन पल तक इसको पहुंचावे। तो चार माषे ही प्रतिदिन बढ़ाना पड़ा। व्यवहार भी वैद्य लोगों का ऐसा ही है कि पहले दिन एक कर्ष खिलावें, फिर दूसरे दिन एक कर्ष और चार माशे खिलावें। फिर प्रतिदिन चार २ माशे बढ़ाते जावें) ॥ २ ॥

अथ पुनर्नवादियोगः—

पुनर्नवामूलकदेवदारुच्छिन्नोद्भवाचित्रकमूलसिद्धाः ।
रसा यवागूश्च पयांसि यूषाः शोफे प्रदेया दशमूलगर्भाः ॥१॥

पुनर्नवा, मूली, देवदारु, गिलोय, चीतामूल इन सबको समभाग लेकर सोलह गुणे जल में पकाकर जब आधा जल शेष रह जावे तो दशमूल का उचित कल्क देकर रस, यवागु, दूध, तथा यूष पकाकर शोथ में देवें तो इससे लाभ होता है ॥१॥

अथ क्षीरम्—क्षीरं शोफहरं दारुवर्षाभूनागरैः शृतम् ।
पेयं वा चित्रकव्योषत्रिवृद्दारुप्रसाधितम् ॥ १ ॥

देवदारु, पुनर्नवा, सोंठ इन सबको समभाग लेकर इनसे दूध पकाया जाये तो इससे शोथ दूर होता है । अथवा चीता, सोंठ, मिरच, पीपल, त्रिवी, देवदार इनसे मिलाकर दूध पकाया जाये तो भी शोथ को नष्ट करता है ॥ १ ॥

अथाऽर्द्रकरसः—आर्द्रकस्य रसः पीतः पुराणगुडमिश्रितः ।
अजाक्षीराशिनः शीघ्रं सर्वशोथहरो भवेत् ॥ १ ॥

अदरक के रस में पुराना गुड़ मिलाकर पिलाया जाये । पथ्य में बकरी का दूध पिलाया जय तो सभी प्रकार का शोथ शीघ्र दूर होता है ॥ १ ॥

अथ गोमूत्रमण्डूरम्—गोमूत्रसिद्धमण्डूरं सुरभीरसभावितम् ।
माणकार्द्रककन्दानां रसेष्वपि च भावयेत् ॥१ ॥

गोमूत्र से अग्नि पर सिद्ध किया हुआ मण्डूर (दो पल ले) गोमूत्र में भावित करे । फिर इसे मानकन्द तथा अदरकके कन्द के स्वरसों से पृथक् २ भावित करे

त्रिफलाकटुचव्यानां चूर्णं पाणितलद्वयम् ।
क्षिपेत्सुसिद्धे पाके तु मधुनश्च पलद्वयम् ॥
निहन्ति सर्वजं शोफं सर्वाङ्गं च विशेषतः ॥ २ ॥

जब मण्डूर अच्छी प्रकार सूख जाय तो हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, मिरच पीपल, चव्य इन का चूर्ण दो पाणितल अर्थात् दो पल डाले । फिर दो पल शहद डाले । इस सारे को एकत्र मिल कर विधिपूर्वक सेवन करे तो सन्निपातज शोथ तथा सारे शरीर की सूजन इस से नष्ट होती है ॥ २ ॥ इति गोमूत्रमण्डूरम् ॥

अथ कंसहरीतकी—

द्विपञ्चमूलस्य पचेत्कषाये कंसेऽभयानां च शतं गुडाच्च ।
लेहे सुसिद्धे च विनीय चूर्णं व्योषत्रिसौगन्ध्यमुपस्थिते च॥१॥
प्रस्थार्धमात्रं मधुनः सुशीते किंचिच्च चूर्णादपि यावशूकात् ।
एकाभयां प्राश्य ततश्च लेहाच्छुक्तिर्निहन्ति श्वयथुं प्रवृद्धम् २॥

दशमूल के द्रव्यों को ६४ पल लेवे । एक द्रोण जल में डालकर पकावे । जब शेष चौथाई क्वाथ रहे अर्थात् एक कंसभर रह जावे तो उतार कर छान ले फिर एक सौ पकी हुई बड़ी हरड़ें और एक सौ पल गुड़ डालकर घोल ले । फिर छानकर आग पर रखकर पकावे । जब अवलेह बनने को होवे तब अग्नि पर से उतार कर सोंठ, मिरच, पीपल और यवक्षार इन को पृथक् २ समभाग लेकर सब को मिलाकर चार पल डालें । और इलायची, दारचीनी और नाग· केसर प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ कर्ष डालें । सब को मिलाकर शीतल होने पर शहद आधाप्रस्थ डाले । इसे एकत्र मिलाकर चिकने पात्र में रखे । इसमें से

एक हरड़ खाकर इस चटनी को एक शुक्ति भर प्रतिदिन चाटने से बढ़ी हुई शोथ भी नष्ट हो जाती है ॥ २ ॥

कासज्वरारोचकमेहगुल्मप्लीहत्रिदोषोदरपाण्डुरोगान्।
कार्श्यामवातानसृगम्लपित्तवैवर्ण्यमूत्रानिलशुक्रदोषान् ॥३॥

कास, ज्वर, अरुचि, प्रमेह, गुल्म, प्लीहा, त्रिदोषज उदररोग, पाण्डुरोग, कृशता, आमवात, रक्तपित्त, अम्लपित्त, विवर्णता, मूत्रदोष, वातदोष, शुक्रदोष ये सभी रोग नष्ट होते हैं ॥ ३ ॥

दशमूलं हरीतक्या तुल्यं कंसहरीतकी।
मानं तेनात्र तत्रस्थं चरके प्राह जैज्जटः ॥ ४ ॥

आगे लिखी जाने वाली दशमूलहरीतकी के समान ही कंसहरीतकी है। इस कंसहरीतकी में चरक ने मान नहीं बतलाया है यहां पर दशमूलहरीतकी के समान ही मानलेना चाहिये यह जैज्जट ने लिख दिया है। (यहां पर त्रिकुटा के एकभाग से कुछ कम यवक्षार लेनी उचित है क्योंकि "किंचित्क्षार" में किंचित् पढ़ दिया है। वृन्द ने तो "किंचिच्च कर्षपर्यायः शुक्तिरर्धपलं तथा। सान्निध्यान्मधुनोमानं व्योषादेर्मिलितस्य च।" से किंचित् का अर्थ कर्ष लिया है। वह तो इसे पृथक् योग भी मानता है परन्तु अन्य इसे नहीं मानते।)॥ ४ ॥

इति कंसहरीतकी ॥

अथ दशमूलहरीतकी—**दशमूलीकषायस्य कंसे पथ्याशतं गुडात्।**
तुलां पचेद्घने तत्र व्योषक्षारचतुष्पलम् ॥ १ ॥

पूर्व लिखी हुई कंस हरीतकी के अनुसार दशमूल मिलित ६४ पल लेकर एकद्रोण जल में डालकर पकावे। जब एक' अंश अर्थात् एक आढक जल शेष रहे तो उतार कर छान ले। फिर एक सौ हरड़े और एक सौ पल गुड़ मिलाकर पकावे। अवलेह होने पर सोंठ, मिरच, पीपल, तथा यवक्षार मिलित चार पल डाले ॥ १ ॥

त्रिजातं तु सुवर्णांशं प्रस्थार्धं मधुनो हिमे।
दशमूलहरीतक्यः शोफान्घ्नन्ति सुदुस्तरान् ॥ २ ॥

'दारचीनी, इलायची, तथा तेजपात इन में से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ कर्ष डालकर मिलावें। शीतल होने पर आधा प्रस्थ शहद मिलावें। यह एकत्र मिलाकर रखें। इस दशमूलहरीतकी को खाने से भयंकर शोथ दूर होते हैं ॥२॥

अथ पुनर्नवासवः—

पुनर्नवे द्वे तु पले सपाठा दन्ती गुडूची सह चित्रकेण।
निदिग्धिका च त्रिफला विपक्वा द्रोणावशेषे सलिले ततस्तम् ॥१॥

पुनर्नवा श्वेत, लालपुनर्नवा एक २ पल ले, पाठा, दन्ती, गिलोय, चीता, कटेली, हरड़, बहेड़ा आंवला इन सब को एक २ पल ले। सबको जल में पका-

कर एक द्रोण जल शेष रखे ॥ १ ॥

पूत्वा रसे द्वे च शतं पुराणं गुडं मधुप्रस्थयुतं सुशीतम्।
मासं निदध्याद् घृतभाजनस्थं पल्ले यवानां परतश्च मासम् ॥ २ ॥
चूर्णीकृतैरर्धपलांशकैस्तैर्हेमत्वगेलामरिचाम्बुपत्रैः।
गन्धान्वितं क्षौद्रयुतं प्रदिग्धं जीर्णे पिबेद् व्याधिबलं समीक्ष्य ॥३॥

फिर छानले। इसमें दोसौ पल पुराना गुड़ मिलावे। और एक प्रस्थ मधु डाले। और नागकेसर, दारचीनी, इलायची, मिरच, सुगन्ध बाला, तेजपत्र इनमें से प्रत्येक द्रव्य आधा २ पल लेकर चूर्ण करके मिलावे। फिर घी से चिकने हुए १ पात्र में रखकर एक महीना मुंह बंदकरके रखे। फिर जौ के ढेर में एक महीना दबा रखे। इस सुगंधित शहद मिलाये हुए आसव को पीवे। मात्रा अपनी शक्ति तथा रोगानुसार रखे ॥ २ ॥ ३ ॥

हृत्पाण्डुरोगं श्वयथुं प्रवृद्धं प्लीहभ्रमारोचकमेहगुल्मान्।
भगंदरार्शोजठराणि कासश्वासग्रहण्यामयकुष्ठकण्डूः ॥ ४ ॥

हृदय, पाण्डुरोग, बढी हुई सूजन, प्लीहा, भ्रम, अरुचि, प्रमेह, गुल्म, भगंदर, बवासीर, उदररोग, कास, श्वास, ग्रहणी, कुष्ठ, कण्डू ॥ ४ ॥

शाखानिलं बद्धपुरीषतां च हिक्कां तु कासं च हलीमकं च।
क्षिप्रं जयेद्वर्णबलायुरोजस्तेजोन्वितो मांसरसांश्च भुक्त्वा ॥५॥

शाखाश्रितवात, मलकीबद्धता, हिचकी, खांसी, हलीमक इन सब रोगों को शीघ्र नष्ट करता है। बल, वर्ण, आयु, तेज, और ओज को बढाता है। इसे मांसरस के बाद पीवें तो और भी शक्ति देता है ॥ ५ ॥ इतिगदनिग्रहात्पुनर्नवासवः ॥

अथ सर्वशोफे वासासवः—वासकस्य तुले द्वे तु द्विद्रोणेऽपां विपाचयेत्।
द्रोणार्धशेषं तं ज्ञात्वा पूते शीते प्रदापयेत् ॥१॥

बांसा के पंचांग को २०० पल लेकर दो द्रोण जल डालकर पकावे। जब आधा द्रोण जल शेष रहजावे तो छानकर शीतल करे ॥ १ ॥

गुडस्यैकां तुलां तत्र धातक्यास्तु पलाष्टकम्।
क्षिपेच्चूर्णीकृतं तस्मिंस्त्वगेलापत्रकेसरम् ॥ २ ॥

फिर एक तुलाभर अर्थात् एकसौ पल गुड़ लेकर घोलदें। धाय के फूल आठ पल डालें। फिर दारचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर ॥ २ ॥

कङ्कोलव्योषतोयानि पालिकान्युपकल्पयेत्।
निदध्याद् घृतभाण्डे तु पक्षादूर्ध्वं ततः पिबेत् ॥
वासकासव इत्येष सर्वश्वयथुनाशनः ॥ ३ ॥

कङ्कोल, सोंठ, मिरच, पीपल, सुगन्धबाला इनमें से प्रत्येक द्रव्य एक २ पललें और चूर्ण करके एकत्र पात्र में मिलादेवें। फिर पात्रका मुंह बंदकरके रखदें। इसे एक पक्ष के बाद निकालकर पीवें। इस वासकासव के पीने से सभी प्रकार के शोथ दूर हो जाते हैं ॥ ३ ॥ इति वासासवः।

अथ दार्व्यादियोगः—पिबेदुष्णाम्बुना दारुपथ्याशुण्ठीपुनर्नवाः।
विडङ्गातिविषावासाविश्वदारूषणानि वा।
वर्षाभूशृङ्गबेराभ्यां कल्कं वा सर्वशोफनुत् ॥ १ ॥

देवदारु, हरड़, सोंठ, पुनर्नवा। या विडंग, अतीस, बांसा, सोंठ, देवदार, कालीमिरच। या पुनर्नवा और सोंठका कल्क। इनमें से किसी एक योग का चूर्णकरके गरम जल से पीवें तो सभी प्रकार के शोथ नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथ तक्रादियोगः—

तक्रं पिबेद्वा गुरुभिन्नवर्चाः सत्र्योषसौवर्चलमाक्षिकं च।
विड्वातसङ्गे पयसा रसैर्वा प्रागुष्णमद्यादुरुबूकतैलम् ॥ १ ॥

जिसका भारी तथा टूटा हुआ मल निकलता हो वह सोंठ, मिरच, पीपल, सोंचललवण तथा शहद से मिलाकर तक्र पीवे। और जिसे मनुष्य के मल तथा अधोवात रुकजायें तो वह पहले दूध वा मांस रसके साथ एरण्ड का तेल पीवे। फिर उष्णमद्य पीवे तो शोथ दूर होता है ॥ १ ॥

अथ पुनर्नवादिघृतम्—

पुनर्नवापत्ररसालमूलं संक्षुद्य तोयार्मणशेषसिद्धम्।
चतुर्थभागेन घृतं विपक्वं प्रस्थं तु तत्कल्कपलाष्टकेन ॥ १ ॥

पुनर्नवा के पत्र, आमकी जड़ इन दोनों को कूट २ कर समभाग लेकर दो शराव ले। फिर ३२ शराव जल अर्थात् एक द्रोण जल में डालकर पकावे। शेष एक आढक रहे तो छानकर उतार लेवे। फिर इस क्वाथ से चौथाई अर्थात् एक प्रस्थ गौ का घी उसमें डाले और पूर्व लिखित पुनर्नवा के पत्तों और आमकी जड़ को समभाग लेकर आठ पल कल्क बनालेवे और इन सब कल्क, घी तथा क्वाथ को मिलाकर घृत पाक करलेवे ॥ १ ॥

संसेवितं वातबलासरोगान्सर्वांश्च शोफानतिदुस्तरांश्च।
गुल्मोदरप्लीहगुदोद्भवांश्च निहन्ति वह्निं कुरुतेऽपि पुंसाम् ॥ २ ॥

इसे सेवन करने से सब प्रकार के वात तथा कफ के रोग नष्ट हो जाते हैं। तथा भयंकर सूजन भी दूर होती है। गुल्म, उदर, प्लीहारोग, अर्श ये सभी रोग नष्ट होते हैं तथा अग्निवृद्धि होती है ॥ २ ॥

अथ पञ्चमूलाद्यं तैलम्—पञ्चमूलं सलवणं सरलं देवदारु च।
हस्तिकर्णी पलाशस्य फलानि निचुलस्य च ॥ १ ॥

छोटा पंचमूल अर्थात् छोटीकटेली, बड़ीकटेली, शालपर्णी, पृष्णपर्णी, गोखरू

सेंधालवण, सरलकाष्ठ, देवदारु, हस्तिकर्णपलाश के फल, समुद्रफल ॥ १ ॥

पलाशं काकनासा च गुडूची देवपुष्पकम् ।
अहिंसा श्रेयसी हिंस्रा वस्तगन्धा पुनर्नवा ॥ २ ॥

ढाक, कौआठोडी, गिलोय, लौंग, कण्टकपालीवृक्ष, गजपीपल, कटेली या-जटामांसी जंगली तुलसी या अजमोद, पुनर्नवा ॥ २ ॥

कायस्था च वयस्था च दारुका जटिला जटा ।
अलम्बुषोरुबूकं च प्रपुन्नाटं सनागरम् ॥ ३ ॥

हरड़, दारुहल्दी, पिप्पलामूल, मुण्डी, एरण्ड, पनवाड़, सोंठ ॥ ३ ॥

शिग्रुर्गोधावनी भार्ङ्गी तर्कारी पौष्करी जटा ।
एतैः सिद्धं यथालाभं तैलमभ्यञ्जनैस्त्रिभिः ।
निहन्त्युदीर्णं श्वयथुं जन्तोर्वातकफात्मकम् ॥ ४ ॥

सुहांजना, कटेली या पृष्टपर्णी, भारंगी, अरणी की छाल, पोहकरमूल । इन में से जितने द्रव्य मिलें उतने ले। सबको समभाग लेकर कल्क करें। कल्क से चौगुना तिल का तेल, और तेल से चौगुना जल मिलाकर तैल पाक करे। इस तैल के मलने से भयंकर वातकफज शोथ तथा तीनों दोषों से हुआ २ शोथ अच्छा होता है ॥ ४ ॥

अथ शुष्कमूलकाद्यं तैलम्—शुष्कमूलकवर्षाभूदारुरास्नामहौषधैः ।
पक्वमभ्यञ्जने तैलं समूलं शोफनाशनम् ॥१॥

सूखी हुई मूलियां, पुनर्नवा, देवदारु, रास्ना, सोंठ इन सबको समभाग लेकर कल्क करे। इस कल्क से चौगुना तिल का तेल ले, और तेल से चौगुना जल डालकर पकावे। तेल मात्र शेष रह जाने पर उतार कर छान ले। इस तैल की मालिश करने से शोथ का समूल नाश होता है ॥ १ ॥

अथ सेकलेपस्वेदनानि ।

अथ पुनर्नवादिलेपः—पुनर्नवादारुशुण्ठीसिद्धार्थं शिग्रुमेव च ।
पिष्ट्वा चैवाऽऽरनालेन प्रलेपः सर्वशोथजित् ॥१॥

पुनर्नवा, देवदारु, सोंठ, सरसों श्वेत, सुहांजना। इन सबको कांजी से पीस कर प्रलेप करें तो सब प्रकार के शोथ नष्ट होते हैं ॥ १ ॥

अथ कृष्णादिलेपः—कृष्णा पुराणपिण्याकशिग्रुत्वक्सिकतातसी ।
प्रलेपो मर्दने युञ्ज्यात्सुखोष्णो मूत्रकल्कितः ॥१॥

पिप्पली, पुरानी तिल की खली, सुहांजने की छाल, वनलोनिका, अलसी, इन सबको समभाग लेकर गोमूत्र से पीसकर कुछ गरम करके सूजन के स्थान पर लेप करने से तथा मर्दन करने से शीघ्र ही सूजन नष्ट होती है ॥ १ ॥

अथ दार्वादिः—दारुगुग्गुलुशुण्ठीनां कल्को मूत्रेण शोफजित् ।

गोमूत्रस्य च योगो वा क्षिप्रं श्वयथुनाशनः ॥ १ ॥

देवदार, गूगल, सोंठ इनका कल्क गोमूत्र से पीसकर लेप करें तो शोथ नष्ट होता है। अथवा केवल गोमूत्र को ही शोथ स्थान पर डालें तो भी शोथ का शीघ्र नाश होता है ॥ १ ॥

अथार्कादिः—सेकस्तथाऽर्कवर्षाभूनिम्बक्काथेन शोफजित्।
गोमूत्रेणापि कुर्वीत सुखोष्णेनावसेचनम्।
सौवर्चलसमं घृष्टं सर्षपैश्च प्रलेपनम् ॥ १ ॥

आक, पुनर्नवा, नीम इनके क्वाथ को शोथ स्थान पर डालना। अथवा इस क्वाथ में गोमूत्र मिलाकर शोथ स्थान पर कुछ २ गरम करके डालें तो भी शोथ दूर होता है। अथवा सौंचल नमक से मिलाकर समभाग सरसों लें। इस का पीसकर प्रलेप करदें तो भी शोथ नष्ट होता है ॥ १ ॥

अथ न्यग्रोधादिलेपः—न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थप्लक्षवेतसवल्कलैः।
ससर्पिष्कैः प्रलेपः स्याच्छोफनिर्वारणः परः ॥१॥

बड़, गूलर, पीपल, पिलखन, बेत इन सबकी छाल लेवे, इनको समभाग लेकर पीसकर घी मिला ले। इसका लेप करने से शोथ शीघ्र ही निवारण होता है ॥ १ ॥

गोधूमपोलिका—गोधूमकणिकायुक्ता निर्गुण्डीपत्रचूर्णिका।
पोलिका तिलतैलेन युक्ता शोथविनाशनी ॥ १ ॥

गेहूं का आटा और संभालु के पत्ते इन दोनों को पीसकर रोटी बनावे। इसके एक ओर तिल का तेल चुपड़ कर शोथ स्थान पर बांध दें तो शोथ नष्ट हो जाता है ॥ १ ॥

अथ पुनर्नवादिस्वेदः—पुनर्नवाग्निनिर्गुण्डीपलितैरण्डजैर्दलैः।
सहाचरैर्जलं तप्तं तत्स्वेदः शोफहा मतः ॥ १ ॥

पुनर्नवा, चीता, संभालु, पके हुए एरण्ड के पत्ते, कटसरैया या नील झांटी, पीतझांटी इन सबको एकत्र कर पानी में डाल पकाकर इससे पसीना देने से शोथ नाश होता है ॥ १ ॥

अथ कुटजादिस्वेदः—कुटजार्कशिरीषाणां बिदुलैरण्डनिम्बजैः।
पत्रैर्युक्तं जलं तप्तं तत्स्वेदो दुष्टशोफहृत् ॥ १ ॥

कुड़े के पत्ते, आक के पत्ते, शिरीष के पत्ते, जलबेत, एरण्ड के पत्ते तथा नीम के पत्ते इन सबको एकत्र करके जल में डालकर पकाकर स्वेद देवे तो दुष्ट शोथ को भी नष्ट करता है ॥ १ ॥

अथ बिभीतकादिलेपः—

बिभीतकानां फलमध्यलेपः सर्वेषु दाहार्तिहरः प्रशस्तः।
यष्ट्याह्वमुस्तैः सकपित्थमूत्रैः सचन्दनैस्तातिपटिकासु लेपः॥१॥

बहेड़े के बीज की गिरी का लेप करना सभी प्रकार की दाह युक्त पीड़ा को नाश करता है । मुलहठी, मोथा, कैथ, गोमूत्र, लालचन्दन इन सबको पीसकर शोथ की पिड़िका अर्थात् फुंसियों पर लेप करने से पित्तज शोथ दूर होता है ॥१॥ इति सेकलेपस्वेदनानि ।

अथ रसाः ।

तत्रादौ शोफारिः—हिंगुलं जयपालं च मरिचं टङ्कणं कणाम् ।
संमर्द्य वल्लः सघृतः सर्वशोफहरः परः ॥ १ ॥

शुद्ध हिंगुल, शुद्ध जमालगोटा, मिरच, सुहागा खील, पिप्पली सबको समभाग लेकर पीस लें । इसकी बलानुसार एक वल्ल तक मात्रा घी से मिलाकर खावें तो सभी प्रकार के शोथों को नष्ट करने में यह श्रेष्ठ है ॥ १ ॥

अथ श्वयथुघाती रसः—

रसगन्धकलोहकणात्रिवृतामरिचामरदारुनिशात्रिफलात् ।
दलितं मृदु गोसलिलेन पिबेदनुरूपममुं श्वयथूदरहम् ॥ १ ॥

शुद्ध पारा, शुद्धगन्धक, लोहभस्म, पिप्पली, त्रिवी, मिरच, देवदारु, हल्दी, हरड़, बहेड़ा, आंवला इनमें से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण करके सबको विधिपूर्वक एकत्र खरल करे । इसको यथोचित मात्रा में गौ के मूत्र से पीवे तो सूजन तथा उदर रोग अवश्य नष्ट हो जाता है ॥१॥ इति श्वयथुघातीरसः ।

अन्ये रसाः—देयो ह्युदयमार्तण्डस्त्रैलोक्याडम्बरोऽथ वा ।
अग्निकुमारको वाऽत्र देयः शोफविनाशनः ॥ १ ॥

उदयमार्तण्डरस, त्रैलोक्यडम्बररस या अग्निकुमाररस देने से शोथ नष्ट हो जाता है । इन रसों में से कोई एक रस देना चाहिये ॥ १ ॥ इति रसाः ॥

अथ पथ्यापथ्यम् ।

पुरातनाः शालियवाः कुलत्थाः मुद्गाश्च गोधाऽपि च शल्लकोऽपि ।
भुजंगभुक्तित्तिरिताम्रचूडलावादयो जाङ्गलविष्किराश्च ॥ १ ॥

पुराने शाली, जौ, कुलथ, मूंग, गोह तथा सेह का मांस, मोर, तीतर, मुर्गा, लावा अर्थात् बटेर आदि, जांगल जीव तथा विष्किर जीव ॥ १ ॥

कूर्मोऽपि शृङ्गी प्रपुराणसर्पिस्तक्रं सुरा माक्षिकमासवश्च ।
निष्पावकाठिल्लकरक्तशिग्रुरसोनकर्कोटकबालमूलम् ॥ २ ॥

कछुआ, सिंगीमच्छी, पुराना घी, तक्र, सुरा, शहद, आसव, सेम, करेला, लाल सुहांजना, लहसुन, ककोड़ा, छोटी नरम मूली ॥ २ ॥

पुनर्नवं गृञ्जनकं पटोलं वेत्राग्रधात्रीफलमूलकानि ।
यथामलं पथ्यमिदं प्रयुक्तं शोफामयं सत्वरमुच्छिनत्ति ॥ ३ ॥

पुनर्नवा, गाजर, परवल, बेत का अग्रभाग, आंवला, मूली अपने दोषानुसार

इन पथ्यों को सेवन करने से शोथरोग शीघ्र नष्ट हो जाता है ॥ ३ ॥

ग्राम्यानूपं पिशितलवणं शुष्कशाकं नवान्नं
गौडं पिष्टं दधि सकृशरं निर्झरं मद्यमम्लम्।
धाना वल्लूरमांसं बह्वशनमथवा गुर्वसात्म्यं विदाहि
स्वप्नं रात्रौ श्वयथुगदवान्वर्जयेन्मैथुनं च ॥ ४ ॥

परन्तु ग्राम्यजीव, आनूप जीवों का मांस, कच्चामांस, नमक, सूखे शाक, नये अन्न, गौड अर्थात् गुड की बनी मद्य, पीठी, मलाईदार दही, झरनों का पानी, मद्य, खटाई। धान, सूखे मांस, अत्यधिक पेट भर खाना, अथवा भारी, असात्म्य, विदाही पदार्थ खाना, रात को सोना, ये सभी बातें शोथरोगी त्याग देवे तथा मैथुन भी त्याग देवे ॥ ४ ॥

अथ वृन्दात्पथ्यापथ्यम्—**पुराणयवशाल्यन्नं दशमूलोपसाधितम्।**
अम्लमल्पकटुस्नेहं भोजनं शोफिनां हितम् ॥१॥

पुराने जौ, शालीधान, इनको दशमूलके जल में पकाकर देवें। अम्ल तथा कुछ कटु और स्निग्ध भोजन शोथ वालों के लिये हितकारी है ॥ १ ॥

पिष्टान्नमुष्णं लवणानि मद्यं मृदं दिवा स्वप्नमजाङ्गलं च।
पयो गुडं तैलमथो गुरूणि शोफं जिघांसुः परिवर्जयेत ॥ १ ॥

पीठी के अन्न, उष्णपदार्थ, सभी लवण, मद्य, मिट्टीखाना, दिनमें सोना, जांगलजीवों के अतिरिक्त अन्य मांस खाने। दूध, गुड, तेल तथा गुरुपदार्थ इन सब को सूजन रोगमें त्याग देवे ॥ १ ॥ इति शोफामयचिकित्सा ॥

इति हरिद्वारीयगुरुकुलविश्वविद्यालयस्नातकेन श्रीविद्याधरविद्यालंकारेण, लवपुरीय श्रीमद्दयानन्दायुर्वेदमहाविद्यालयीय वैद्यकविराजोपाधिधारिणा, राजयक्ष्मचिकित्सकेन जलचिकित्साविशेषज्ञेन रसेन्द्रसारसंग्रहटीकाकर्त्रा कृतायां योगरत्नाकरस्य रत्नगर्भानाम्नीटीकायां शोथप्रकरणं समाप्तम् ॥

अथ मुष्कान्त्रवृद्धिवर्ध्मरोगानिदानम्।

तस्य सम्प्राप्तिमाह—**क्रुद्धो(ऽनूर्ध्वं गतिः) रुद्धगतिर्वायुः शोथशूलकरश्चरन्।**
मुष्कौ वंक्षणतः प्राप्य फलकोशाभिवाहिनीः ॥
प्रपीड्य धमनीर्वृद्धिं करोति फलकोशयोः ॥ १ ॥

वायु ऊपर की ओर से रुद्धगति होकर जब नीचे की ओर गति करता है तब अण्डकोषोंको प्राप्तहोकर विचरता हुआ वंक्षणसन्धि में से फलकोषाभिवाहिनी धमनियों को प्रपीडित करके वृद्धिरोग को करता है, और दोनों अण्डकोषों अथवा एक अण्डकोष की वृद्धि करदेता है इसमें शोथ और शूल दोनों होते हैं ॥ १ ॥

वृद्धेः संख्यामाह—**दोषास्रमेदोमूत्रान्त्रैः स वृद्धिः सप्तधा गदः।**
मूत्रान्त्रजावप्यनिलाद्धेतुभेदस्तु केवलः ॥ २ ॥

वात, पित्त तथा कफ, रक्त, मेद, मूत्र तथा अन्त्र इन सात नामों से सात

प्रकार की वृद्धि कही जाती है अर्थात् वातवृद्धि, पित्तवृद्धि, कफवृद्धि, रक्तवृद्धि, मेदोवृद्धि, मूत्रवृद्धि, और अन्त्रवृद्धि ये सात वृद्धि कहाती हैं। इनमें से मूत्रवृद्धि तथा अन्त्रवृद्धि ये दोनों वृद्धियां वात से ही होती हैं। परन्तु केवल मात्र हेतुओं का भेद होता है॥ २॥

वातजमाह—**वातपूर्णदृतिस्पर्शो रूक्षो वातादहेतुरुक्।**

वातजवृद्धि में वात से भरे हुए ढोल के समान फूले हुए अण्डकोष होते हैं और स्पर्श में भी ढोल के समान प्रतीत होते हैं, रूखे होते हैं तथा बिनाही कारण के उनमें पीड़ा होती रहती है॥

पित्तजमाह—**पक्वोदुम्बरसंकाशः पित्ताद्दाहोष्मपाकवान्॥ ३॥**

पकेहुए गूलरके फलके समान लाल रंग के अण्डकोष होजाते हैं उनमें दाह होता है, वे गरम होते हैं तथा उनमें पाक होता है॥ ३॥

श्लेष्मजमाह—**कफाच्छीतो गुरुः स्निग्धः कण्डूमान्कठिनोऽल्परुक्।**

कफसे हुई २ वृद्धि में अण्डकोष शीतल, भारी, स्निग्ध, खुजली से युक्त, कठिन तथा थोड़ी २ पीड़ा से युक्त होते हैं॥

रक्तजमाह—**कृष्णस्फोटावृतः पित्तवृद्धिलिङ्गश्च रक्तजः।**

रक्तजवृद्धि में काले रंग के फोड़ों से अण्डकोष घिरे होते हैं, तथा अन्यान्य दाहपाक उष्णतादि पित्तजवृद्धि के सभी लक्षण उनमें दिखाई देते हैं॥

मेदोजमाह—**कफवन्मेदसा वृद्धिर्मृदुस्तालफलोपमः॥ ४॥**

कफजवृद्धि के समान ही मेदोज वृद्धि के लक्षण होते हैं। और अण्डकोष मृदु होते हैं तथा ताड़ के फलके समान होते हैं॥ ४॥

मूत्रजमाह—**मूत्रधारणशीलस्य मूत्रजः स तु गच्छतः।**
अम्भोभिः पूर्णदृतिवत्क्षोभं याति सरुङ् मृदुः॥ ५॥

मूत्र के वेगको रोकने वाले मनुष्यों को मूत्रजवृद्धि होजाती है। उसमें चलते हुए मनुष्य के अण्डकोष हिलते हुए ऐसे प्रतीत होते हैं जैसे जलसे भराहुआ ढोल हो। पीड़ा होती है तथा स्पर्श में वह कोमल होते हैं॥ ५॥

मूत्रकृच्छ्रमधस्तात्स्याच्चालयन्फलकोशयोः॥

मूत्रकृच्छ्र होजाता है तथा अण्डकोषों के इधर उधर हिलने से वह वृद्धि नीचे की ओर होजाती है। ("वलयं फलकोषयोः" ऐसा भी कहीं २ पाठ है अर्थात् अण्डकाषों के नीचे कङ्कण सी घेरदार वृद्धि होजाती है।)॥

अन्त्रजमाह—**वातकोपिभिराहारैः शीततोयावगाहनैः॥ ६॥**

वातको कुपित करनेवाले आहारों से तथा शीतल जलमें घुसकर स्नान करनेसे॥६॥

धारणेरणभाराध्वविषमाङ्गप्रवर्तनैः।
क्षोभणैः क्षुभितोऽन्यैश्च क्षुद्रान्त्रावयवं यदा॥ ७॥
पवनो विगुणीकृत्य स्वनिवेशादधो नयेत्।

कुर्याद्वंक्षणसंधिस्थो ग्रन्थ्याभं श्वयथुं तदा ॥ ८ ॥

वातादि के वेगों को धारण करने से, वातादि को ईरण करने से अर्थात् प्रेरणा करके जोर से बाहर निकालने पर, शक्ति से अधिक भार उठाने पर, अधिक मार्ग चलने पर, अंगों को टेढा मेढ़ा चलाने से, तथा आंत को क्षोभित करने वाले अन्य कार्य्यों (व्याख्यानादि जोर से देना आदि २) से कुपित हुआ २ वायु छोटी आंत के एक भाग को संकुचित करके ("द्विगुणीकृत्य" इस पाठ के अर्थ आंत को संकुचित करते हुए द्विगुणी करके) अपने नियत स्थान से नीचे को ले जाता है। यह आंत वंक्षणसंधि में उतरकर वहां पर एक गांठ के समान शोथ करदेता हैं ॥ ८ ॥

उपेक्ष्यमाणतयाऽन्त्रवृद्धिमाह--

उपेक्ष्यमाणस्य च मुष्कवृद्धिमाध्मानरुक्स्तम्भवतीं स वायुः ।
प्रपीडितोऽन्तःस्वनवान्प्रयाति प्राध्मापयन्नेति पुनश्च मुक्तः ॥९॥

वही अन्त्रवृद्धि बढकर वंक्षणसन्धि से नीचे अण्डकोषों में उतर आती है। जब यह अन्त्रवृद्धि अण्डकोषों में उतर आवे तथा इस में आध्मान तथा स्तम्भ होवे तब उस शोथ के स्थान को हाथ से दबावें तो शब्द करता हुआ वह शोथ नष्ट हो जाता है और जब छोड़कर हाथ उठा लेवें तो वह शोथ उस स्थान को भरता हुआ फिर आजाता है ॥ ९ ॥

यस्यान्त्रावयवैः श्लेष्मा मुष्कयोर्याति संचयात् ।
अन्त्रवृद्धिरसाध्योऽयं वातवृद्धिसमाकृतिः ॥ १० ॥

जिस के आंत के अवयवों से श्लेष्मा निकल कर अण्डकोषों में जाता है, यदि यह श्लेष्मा वहां संचित हो जावे तो यह अन्त्रवृद्धि असाध्य है तथा वातजवृद्धि के समान इस का आकार होता है ॥ १० ॥ इति वृद्धिनिदानम् ॥

अथ वर्ध्मनिदाम्—**अत्यभिष्यन्दिगुर्वन्नसेवनान्निचयं गतः ।**
करोति ग्रन्थिवच्छोथं दोषो वङ्क्षणसंधिषु ॥
ज्वरशूलाङ्गसादाढ्यं तं वर्ध्ममिति निर्दिशेत् ॥ १ ॥

अत्यन्त अभिष्यन्दी पदार्थों के सेवन करने से, अत्यन्त भारी अन्न के सेवन करने से इकठ्ठा हुआ २ दोष वंक्षणसंधियों में गांठ के समान शोथ को उत्पन्न कर देता है। इस के साथ ही ज्वर, शूल तथा अङ्गसाद ये लक्षण भी होते हैं इसे वर्ध्मरोग अर्थात् बद भी कहते हैं ॥ १ ॥ इति वर्ध्मनिदानम् ॥ इति मुष्कान्त्रवृद्धि वर्ध्मनिदानम् ॥

अथ वृद्धिचिकित्सामाह ।

तत्र वातवृद्धिचिकित्सा—**सक्षीरं वा पिबेत्तैलं मासमेरण्डसम्भवम् ।**
गुग्गुलूरुबुतैलं वा गोमूत्रेण पिबेन्नरः ।
वातवृद्धिं निहन्त्याशु चिरकालानुबन्धिनीम् ॥१॥

एक मास तक एरण्ड के तेल को दूध में डालकर पीवे। अथवा गूगल को गोमूत्र से पीवे अथवा एरण्ड तैल को गोमूत्र से मिलाकर पीवें तो पुरानी वातवृद्धि भी शीघ्र ही दूर होती है ॥ १ ॥

अथ पित्तवृद्धिचिकित्सा—चन्दनं मधुकं पद्ममुशीरं नीलमुत्पलम्।
क्षीरपिष्टैः प्रदेहः स्यात्पित्तवृद्धिरुजापहः॥१॥

लालचन्दन, मुलठी, पद्म अर्थात् कमल, खस, नीलाकमल। इन सबको समभाग लेकर दूध में पीसकर पित्त वृद्धि पर लेप कर दे इससे पित्तवृद्धि की पीड़ा दूर होती है ॥ १ ॥

पञ्चवल्कलकल्केन सघृतेन प्रलेपनम्।
पानं वाऽपि कषायस्य पित्तवृद्धौ प्रशस्यते ॥ २ ॥

पञ्चवल्कल, अर्थात् बड़, पीपल, गूलर, पिलखन, बेत इन पांचों की छाल लेकर कल्क करे इसमें घी मिलाकर लेप करदे। अथवा इसी लेप के साथ २ इस पञ्चवल्कल का क्वाथ भी पीने को देवे तो पित्तवृद्ध शान्त होती है ॥ २ ॥

अथ कफवृद्धिचिकित्सा—कफवृद्धौ मूत्रपिष्टैरुष्णवीर्यैः प्रलेपनम्।
पातव्यो मूत्रसंयुक्तः कषायः पीतदारुणः॥१॥

कफज वृद्धिरोग में उष्णवीर्य द्रव्यों को गोमूत्र से पीसकर लेप करे। अथवा दारुहल्दी का क्वाथ गोमूत्र से मिलाकर पिलावें ॥ १ ॥

त्रिकटुत्रिफलाक्वाथं सक्षारलवणं पिबेत्।
कफवातात्मकोपघ्नं विरेकात्कफवृद्धिजित् ॥ २ ॥

सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा और आंवला इन सबको समभाग लेकर क्वाथ करके इसमें यवक्षार तथा लवण डालकर पिलावें। तो यह योग कफवात के कोप को नष्ट करता है तथा विरेचन कराके कफवृद्धि को भी शान्त करता है २

अथ रक्तवृद्धिचिकित्सा—अविदाहि च भैषज्यं कर्तव्यं रक्तपैत्तिके।
सर्वं पित्तहरं कार्यं रक्तजे रक्तमोक्षणम् ॥ १ ॥
मुहुर्मुहुर्जलौकाभिः शोणितं रक्तजे हरेत्।
शीतमालेपनं सर्वं पाको रक्ष्यः प्रयत्नतः ॥ २ ॥

रक्तपित्त से हुए २ वृद्धिरोग में जो विदाह न करने वाले हों ऐसे औषध तथा पदार्थों का सेवन कराना चाहिये। तथा सभी कार्य पित्त को नाश करने वाले करे। रक्तज वृद्धि में रक्तमोक्षण अर्थात् खून निकलवाता रहे। बार २ जोंकों द्वारा खून निकलवाता रहे। सभी प्रकार से शीत वीर्य द्रव्यों के प्रलेप करे। जहां तक हो सके पाक अर्थात् पकने से रक्तज वृद्धि को बचावे ॥ २ ॥

त्रिवृतं प्रपिबेत्क्षौद्रशर्करासहितं मुहुः।
पित्तग्रन्थिक्रमं कुर्यादामे पक्के च रक्तजे ॥ ३ ॥

बार २ त्रिवी के क्राथ में खांड और शहद मिलाकर पिलावें । आम तथा पक्वावस्था में पित्तज ग्रन्थि की चिकित्सा के समान ही इस रक्तवृद्धि की चिकित्सा करे ॥ ३ ॥

अथ मेदोवृद्धिचिकित्सामाह—**स्विन्नं मेदःसमुत्थानं लेपयेत्सुरसादिना।**
शिरोविरेचनद्रव्यैः सुखोष्णैर्मूत्रसंयुतैः ॥ १ ॥

मेदज वृद्धि को सुरसादिगण के द्रव्यों से स्वेदन करे तथा शिरोविरेचन वाले द्रव्यों को गोमूत्र से मिलाकर कोसा २ लेप कर दे । इससे मेदोजवृद्धि आरोग्य होती है ॥ १ ॥

अथ षडूषणगुग्गुलुः—**षडूषणं क्षौद्रसमं गुग्गुलुं गव्यसर्पिषा।**
प्रयुक्तं कुट्टय भुञ्जीत यथाग्नि दिवसानने।
कटुतिक्तकषायाशी मेदोवृद्धिप्रणाशनम् ॥ १ ॥

पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चीता, सोंठ, कालीमिरच इन सबका चूर्ण एक २ भाग लें । शुद्ध गूगल एक भाग लें । सबको एकत्र मिलाकर कूट ले। इसमें समभाग शहद मिला ले । और गौ का घी मिलाकर अग्निबलानुसार प्रातःकाल सेवन करे । कटु, तिक्त तथा कषाय रसवाले द्रव्यों का ही खान पान करे तो मेदोजवृद्धि रोग अच्छा होता है ॥ १ ॥ इति मेदोवृद्धिः ।

अथ मूत्रजेऽन्त्रवृद्धौ च—**संस्वेद्य मूत्रप्रभवं वस्त्रखण्डेन वेष्टयेत्।**
सीवन्याः पार्श्वतोऽधस्ताद्विध्येद्व्रीहिमुखेन वै ॥१॥

मूत्रज अन्त्रवृद्धि में स्वेदन करके एक वस्त्र वृद्धि के स्थान पर लपेट देवे । फिर सीवनी के पार्श्व में नीचे की ओर व्रीहिमुख यंत्र से शिरा को बींध देवे ॥ १ ॥

मुष्ककोशमगच्छन्त्यामन्त्रवृद्धौ विचक्षणः।
वातवृद्धिक्रमं कुर्याद्दाहस्तत्राग्निना हितः ॥ २ ॥

यदि अन्त्रवृद्धि अण्डकोषों की ओर नहीं जा रही हो तो वातवृद्धि का सारा क्रम करे । और वहां पर अग्नि से दाह कर दे ॥ २ ॥

शङ्खोपरि च कर्णान्ते त्यक्त्वा सीवनिमादरात्।
व्यत्यासाद्वा शिरां विध्येदन्त्रवृद्धिनिवृत्तये ॥ ३ ॥

शंख स्थान के ऊपर कान के अन्त में सीवनी को छेड़कर व्यत्यासभावसे शिरा को बींधें । अर्थात् वाम अण्डकोष में वृद्धि हो तो दायें कान की शिरा को बींधे । दांयें अण्डकोष में वृद्धि हो तो बायें कान की शिरा को बींधे । इससे अन्त्रवृद्धि रोग अच्छा हो जाता है ॥ ३ ॥

अथान्त्रवृद्धौयोगः—**तैलमेरण्डजं पीतं बलासिद्धं पयोन्वितम्।**
आध्मानशूलोपचितामन्त्रवृद्धिं जयेन्नरः ॥ ४ ॥

एरण्ड का तेल, बला अर्थात् खिरेंटी से पकाये हुए दूध में डालकर पिलाने से आध्मान और शूल से युक्त अन्त्रवृद्धि रोग नष्ट होता है ॥ ४ ॥

अथ रास्नादिः—रास्नायष्ट्यमृतैरण्डबलागोक्षुरसाधितः।
क्वाथोऽन्त्रवृद्धिं हन्त्याशु रुबुतैलेन मिश्रितः॥ ५॥

रास्ना, मुलहठी, गिलोय, एरण्ड की जड़, खिरेंटी और गोखरु इन सबको समभाग लेकर क्वाथ करें। इस क्वाथ को एरण्ड के तेल से मिलाकर पिलावें तो शीघ्र ही अन्त्रवृद्धि रोग को यह नष्ट करता है॥ ५॥

अथ पिप्पल्यादि प्रलेपः—पिप्पली जीरकं कुष्ठं बदरं शुष्कगोमयम्।
काञ्जिकेन प्रलेपोऽयमन्त्रवृद्धिविनाशनः॥ ६॥

पिप्पली, श्वेतजीरा, कूठ, बेर, सूखागोबर इन सबको समभाग लेकर कूट पीसकर कांजी से मिलाकर लेप करें तो अन्त्रवृद्धि रोग शान्त हो जाता है॥६॥

अथ देवदार्वादि प्रलेपः—देवदारुमिशीवासाटाकलीमूलसैन्धवैः।
क्षौद्रयुक्तैश्च तैर्लेपो वृद्धिमन्त्रभवां जयेत्॥ ७॥

देवदार, सोया, बांसा, टाकली या पनवाड़ की जड़ (मराठी) की जड़, सेंधालवण इन सबको समभाग लेकर पीसकर शहदसे मिलाकर प्रलेप करे तो अन्त्रवृद्धि नष्ट होती है

अथाण्डवृद्धिचिकित्सा–तैलं नारायणं योज्यं पानाभ्यञ्जनबास्तिषु।
गोमूत्रैरण्डतैलाभ्यां रसगन्धककज्जलीम्॥ १॥
पीत्वा निहन्ति सहसा वृद्धिं वृषणसंभवाम्।

नारायण तेल को पीने को दे, मालिश करने को दे तथा बस्ति के लिये भी देवे। गोमूत्र में एरण्ड का तेल मिलाकर शुद्धपारा शुद्धगन्धक की बनी हुई कज्जली के साथ पीवे॥ १॥ तो अण्डकोषों की वृद्धि शीघ्र ही नष्ट हो जाती है॥

अथ वातकफवृद्धाफलत्रिकादिः—फलत्रिकोद्भवं क्वाथं गोमूत्रेणैव पाययेत्॥
वातश्लेष्मकृतं हन्ति शोथं वृषणसंभवम्॥ २॥

हरड़, बहेड़ा, आंवला इन तीनों का क्वाथ गोमूत्र से मिलाकर पिलावे तो अण्डकोषों के वातकफज शोथ को यह नष्ट करता है॥ २॥

अथ प्लक्षादिपिण्डी—प्लक्षाक्षबीजशुण्ठीनिर्गुण्डीनां मिथः समैश्चूर्णैः।
घृतमधुसहिता पिण्डी न क्षमते मुष्कवृद्धिकथाम्॥ ३॥

पिलखन, बहेड़े के बीज की गिरी, सोंठ, निर्गुण्डी इन सबको समभाग लेकर चूर्ण करके घी तथा शहद से मिलाकर पिण्डी बनाई जाये। इसके प्रयोग से अण्डवृद्धि रोग नष्ट हो जाता है॥ ३॥

वचासर्पकल्केन प्रलेपः शोफनाशनः।
दार्वीचूर्णं गवां मूत्रैर्निपीतं मुष्कवृद्धिजित्।
आर्द्रकस्य रसः क्षौद्रयुक्तो वृषणवातजित्॥ ४॥

बच और सरसों को पीसकर कल्क बनाकर लेप करे तो अण्डकोषों की सूजन नष्ट होती है॥ अथवा गोमूत्र के साथ दारुहल्दी का चूर्ण पीने से भी

अण्डवृद्धि नष्ट होती है ॥ अथवा अदरक का स्वरस शहद से मिलाकर पिलावें तो अण्डकोषों की वात को नष्ट करता है ॥ ४ ॥

अथ सामान्यविधिः—

अथ मांस्यादिघृतम्-मांसी कुष्ठं पत्रकैलारास्ना शृङ्गी च चित्रकम्।
कृमिघ्नमश्वगन्धा च शैलेयं कटुरोहिणी ॥ १ ॥

जटामांसी, कूठ, तेजपात, इलायची, रास्ना, काकड़ासिंगी, चीता, वायविडंग, असगन्ध, छलछलीरा, कुटकी ॥ १ ॥

सैन्धवं तगरं चैव कुटजातिविषैः समैः।
एतैश्च कार्षिकैः कल्कैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥ २ ॥

सेंधालवण, तगर, कुड़े की छाल, अतीस इन में से प्रत्येक द्रव्य एक २ कर्ष लेकर सब को पीसकर एकत्र कल्क बनावे। गौ का घी एक प्रस्थ लेवे ॥२॥

वृषमुण्डीतकैरण्डनिम्बपत्रभवं रसम्।
कण्टकार्याश्चापि दुग्धं प्रस्थं प्रस्थं विनिक्षिपेत् ॥ ३ ॥

वांसे के पत्तों का स्वरस एक प्रस्थ लेवें, मुण्डीबूटी का स्वरस एक प्रस्थ लेवें, एरण्ड के पत्तों का स्वरस एक प्रस्थ लेवें, नीम के पत्तों का स्वरस एक प्रस्थ लेवें, कटेली का स्वरस भी एक प्रस्थ लें, गौ का दूध भी एक प्रस्थ लें ॥३॥

सिद्धमेतद् घृतं पीतमन्त्रवृद्धिं व्यपोहति।
वातवृद्धिं पित्तवृद्धिं मेदोवृद्धिमथापि वा।
मूत्रवृद्धिं च हन्त्येतत्सर्पिराशु न संशयः ॥ ४ ॥

इन में से प्रत्येक स्वरस को क्रमशः घी में डालकर, कल्क मिलाकर घृतपाक करले। केवल घृतमात्र शेष रहने पर उतार कर छान ले। इस घी के सेवन करने से अन्त्रवृद्धि नष्ट हो जाती है, वातवृद्धि, पित्तवृद्धि, मेदोवृद्धि, मूत्रवृद्धि इन सब को यह घी निस्सन्देह शीघ्र ही नष्ट कर देता है ॥ ४ ॥ इति मांस्यादिघृतम् ॥

अथ पुनर्नवादितैलम्—पुनर्नवाऽमृता दारु सक्षारं लवणत्रयम्।
कुष्ठं सटी वचा मुस्तं रास्ना कट्फलपुष्करम् ॥ १ ॥

पुनर्नवा, गिलोय, देवदारु, यवक्षार, सेंधालवण, सौंचललवण, विड्लवण, कूठ, कचूर, बच, मोथा, रास्ना, कायफल, पोहकरमूल ॥ १ ॥

यवानी हपुषा शिग्रुः शताह्वा चाजमोदिका।
विडङ्गातिविषायष्टीपञ्चकोलकसंयुतैः ॥ २ ॥

अजवायन, हौबेर, सुहांजना, सौंफ, अजमोद, विडंग, अतीस, मुलट्ठी, पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चीता, सोंठ ॥ १ ॥

एतैरक्षसमैः कल्कैस्तैलप्रस्थं विपाचयेत्।